एम.एस.डब्ल्यू पूर्वार्द्ध

चतुर्थ प्रश्नपत्र

समाज में मानव व्यवहार

(HUMAN BEHAVIOUR IN SOCIETY)

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Sadhana Singh Bisen
   Former Assistant Professor,
   BSS College, Bhopal (MP)

2. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Aarti Shrivastava
   Professor
   Govt. Sarojini Naidu (PG) College, Bhopal

Advisory Committee

1. Dr Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (MP)

2. Dr L.S.Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal(MP)

3. Dr. Anjali Singh
   Director, Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal(MP)

4. Dr. Sadhana Singh Bisen
   Former Assistant Professor,
   BSS College, Bhopal (MP)

5. Dr. Shailja Dubey
   Professor
   Institute for Excellence in Higher Education,
   Bhopal (M.P.)

6. Dr. Aarti Shrivastava
   Professor
   Govt. Sarojini Naidu (PG) College, Bhopal

COURSE WRITERS

Dr. Vinit Kumar Jha, Utpal - Assistant Professor, Department of Mass Communication, School of Media, Film and Entertainment, Sharda University, Greater Noida
Units (1-5)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

समाज में मानव व्यवहार

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 सामाजिक प्रक्रिया – समाज व सामाजिक प्रक्रिया की परिभाषा – सामाजिक प्रक्रिया के प्रकार; सामाजिक आकर्षण, निर्धारण एवं संतुलन सिद्धांत – सामाजिक आकर्षण – आकर्षण का निर्धारण – संतुलन सिद्धांत; सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति, विश्लेषण एवं ओपिनियन लीडर व सूचना प्रवाह का व्यक्तिगत प्रभाव – सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति – विश्लेषण के प्रकार – ओपिनियन लीडर और सूचना का प्रवाह – व्यक्तिगत प्रभाव का महत्व; समाज और जनसंचार एवं मनोवृति गठन – जनसंचार – मनोवृति गठन; पूर्वाग्रह और भेदभाव तथा रूढ़िवादिता – रूढ़िबद्धता – निहित पूर्वाग्रह।	**इकाई 1** : सामाजिक प्रक्रिया **(पृष्ठ 3–47)**
इकाई–2 समूह गतिकी : समूह की अवधारणा, भूमिका एवं स्थिति – समूह की अवधारणा – समूह में विभेद की भूमिका – समूह की स्थिति; समूह गतिकी : मानदंड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा एवं सामाजिक आवारगी – मानदंड – समूह समग्रता – सामाजिक सुविधा – सामाजिक आवारगी।	**इकाई 2** : समूह गतिकी **(पृष्ठ 49–80)**
इकाई–3 समन्वय : अर्थ, प्रकार एवं महत्व – समन्वय का अर्थ – समन्वय के प्रकार – समन्वय का महत्व; संघर्ष : प्रकृति, कारण एवं प्रभाव – संघर्ष की परिभाषा, प्रकृति एवं प्रकार – संघर्ष के कारण एवं प्रभाव; समूह : प्रकृति, नेतृत्व, समूह निर्णय निर्माण एवं संदर्भ समूह – समूह की प्रकृति – समूह प्रक्रिया का नेतृत्व – परिवर्तन प्रतिनिधि के रूप में समूह – समूह निर्णय निर्माण – सन्दर्भ समूह।	**इकाई 3** : समन्वय : सहयोग या संघर्ष **(पृष्ठ 81–104)**
इकाई–4 सामूहिक व्यवहार : जनता, सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत व प्रकृति – जनता – सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत – सामूहिक व्यवहार की प्रकृति; भीड़ व्यवहार : समाज और श्रोताओं का मनोविज्ञान – समाज और भीड़ व्यवहार – श्रोताओं का मनोविज्ञान।	**इकाई 4** : सामूहिक व्यवहार **(पृष्ठ 105–133)**
इकाई–5 प्रस्तावना; उद्देश्य; जनसंचार : परिचय, महत्व एवं परिभाषा – परिचय – संचार का महत्व – परिभाषा; संचार के प्रारूप।	**इकाई 5** : जनसंचार : उपयोग, दुरुपयोग, प्रेरक और प्रचारात्मक **(पृष्ठ 135–165)**

विषय–सूची

परिचय **1–2**

इकाई 1 सामाजिक प्रक्रिया **3–47**

1.0 परिचय

1.1 उद्देश्य

1.2 सामाजिक प्रक्रिया

1.2.1 समाज व सामाजिक प्रक्रिया की परिभाषा

1.2.2 सामाजिक प्रक्रिया के प्रकार

1.3 सामाजिक आकर्षण, निर्धारण एवं संतुलन सिद्धांत

1.3.1 सामाजिक आकर्षण

1.3.2 आकर्षण का निर्धारण

1.3.3 संतुलन सिद्धांत

1.4 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति, विश्लेषण एवं ओपिनियन लीडर व सूचना प्रवाह का व्यक्तिगत प्रभाव

1.4.1 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति

1.4.2 विश्लेषण के प्रकार

1.4.3 ओपिनियन लीडर और सूचना का प्रवाह

1.4.4 व्यक्तिगत प्रभाव का महत्व

1.5 समाज और जनसंचार एवं मनोवृति गठन

1.5.1 जनसंचार

1.5.2 मनोवृति गठन

1.6 पूर्वाग्रह और भेदभाव तथा रूढ़िवादिता

1.6.1 रूढ़िबद्धता

1.6.2 निहित पूर्वाग्रह

1.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1.8 सारांश

1.9 मुख्य शब्दावली

1.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

1.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 समूह गतिकी **49–80**

2.0 परिचय

2.1 उद्देश्य

2.2 समूह गतिकी : समूह की अवधारणा, भूमिका एवं स्थिति

2.2.1 समूह की अवधारणा

2.2.2 समूह में विभेद की भूमिका

2.2.3 समूह की स्थिति

2.3 समूह गतिकी : मानदंड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा एवं सामाजिक आवारगी

2.3.1 मानदंड

2.3.2 समूह समग्रता

2.3.3 सामाजिक सुविधा

2.3.4 सामाजिक आवारगी

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.5 सारांश
2.6 मुख्य शब्दावली
2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 समन्वय : सहयोग या संघर्ष **81–104**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 समन्वय : अर्थ, प्रकार एवं महत्व
3.2.1 समन्वय का अर्थ
3.2.2 समन्वय के प्रकार
3.2.3 समन्वय का महत्व
3.3 संघर्ष : प्रकृति, कारण एवं प्रभाव
3.3.1 संघर्ष की परिभाषा, प्रकृति एवं प्रकार
3.3.2 संघर्ष के कारण एवं प्रभाव
3.4 समूह : प्रकृति, नेतृत्व, समूह निर्णय निर्माण एवं संदर्भ समूह
3.4.1 समूह की प्रकृति
3.4.2 समूह प्रक्रिया का नेतृत्व
3.4.3 परिवर्तन प्रतिनिधि के रूप में समूह
3.4.4 समूह निर्णय निर्माण
3.4.5 सन्दर्भ समूह
3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 सामूहिक व्यवहार **105–133**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सामूहिक व्यवहार : जनता, सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत व प्रकृति
4.2.1 जनता
4.2.2 सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत
4.2.3 सामूहिक व्यवहार की प्रकृति
4.3 भीड़ व्यवहार : समाज और श्रोताओं का मनोविज्ञान
4.3.1 समाज और भीड़ व्यवहार
4.3.2 श्रोताओं का मनोविज्ञान
4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 मुख्य शब्दावली
4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 जनसंचार : उपयोग, दुरुपयोग, प्रेरक और प्रचारात्मक **135–165**

5.0 परिचय

5.1 उद्देश्य

5.2 जनसंचार : परिचय, महत्व एवं परिभाषा

5.2.1 परिचय

5.2.2 संचार का महत्व

5.2.3 परिभाषा

5.3 संचार के प्रारूप

5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

5.5 सारांश

5.6 मुख्य शब्दावली

5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'समाज में मानव व्यवहार' का लेखन विश्वविद्यालय के एम.एस.डब्ल्यू. (पूर्वार्द्ध) के पाठ्यक्रम के अनुरूप किया गया है।

व्यक्ति के व्यवहार एवं समाज में गहरा संबंध होता है। व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है। अपनी विविध आवश्यकताओं के लिए मनुष्य दूसरे व्यक्तियों से, समूहों से, समुदायों से अंतःक्रियात्मक संबंध स्थापित करता है। सदस्यों के बीच आपसी संबंध उनके परस्पर व्यवहार पर निर्भर करते हैं। व्यक्ति के विचारों, व्यवहारों एवं क्रियाओं का प्रभाव एक दूसरे पर पड़ता है। व्यक्ति का व्यवहार सदा एक जैसा नहीं होता है। एक ही व्यक्ति कई रूपों में व्यवहार करता हुआ पाया जाता है। उसके विचार, भाव तथा व्यवहार विविध परिस्थितियों में भी प्रभावित होते रहते हैं। स्पष्ट है कि मानव व्यवहार के विविध पक्ष होते हैं। मनुष्य दूसरों के बारे में अलग–अलग तरह से सोचता है तथा प्रभावित होता है। सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहारों का वैज्ञानिक अध्ययन है। ऐतिहासिक रूप से इसके विकास में समाजशास्त्र और मनोविज्ञान दोनों का ही योगदान है।

सामाजिक मनोविज्ञान का विषय क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। इसमें हम न केवल वैज्ञानिक व्यवहार, अंतर्वैयक्तिक व्यवहार बल्कि समूह व्यवहार का भी अध्ययन करते हैं। मनुष्य का व्यवहार दो प्रकार का होता है– क्रियात्मक व्यवहार और प्रतिक्रियात्मक व्यवहार। जो व्यक्ति द्वंद्वों की परिधि से मुक्त रहता है उसका व्यवहार क्रियात्मक होता है। जिसका व्यवहार क्रियात्मक रहता है वह प्रसन्नता का रहस्य समझ जाता है। जिसे प्रसन्नता का सूत्र मिल जाता है वह शांत एवं सुखी बन जाता है।

पुस्तक में विषय के विश्लेषण से पूर्व उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' कॉलम के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता परखने के लिए वैकल्पिक प्रश्न दिए गए हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पुस्तक को पांच इकाइयों में समायोजित किया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई सामाजिक प्रक्रिया पर आधारित है। इसमें सामाजिक प्रक्रिया की अवधारणा, सामाजिक आकर्षण का निर्धारण, संतुलन सिद्धांत, सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति, ओपिनियन लीडर की भूमिका, समाज तथा जनसंचार, समाज में मनोवृति का निर्माण, पूर्वाग्रह, भेदभाव तथा रूढ़िवादिता आदि तथ्यों का अध्ययन किया गया है।

दूसरी इकाई समूह गतिकी पर आधारित है। इसमें समूह की अवधारणा एवं स्थिति, सामाजिक मानदंड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा व सामाजिक आवारगी आदि तथ्यों का विश्लेषण किया गया है।

तीसरी इकाई समन्वय पर आधारित है। इसमें समन्वय, संघर्ष तथा समूह की अवधारणा, कारण व समूह प्रक्रिया का नेतृत्व, संदर्भ समूह आदि तथ्यों पर प्रकाश डाला गया है।

चौथी इकाई सामूहिक व्यवहार पर आधारित है। इसमें सामूहिक व्यवहार एवं भीड़ व्यवहार की प्रकृति, जन समाज और भीड़ व्यवहार तथा श्रोताओं का मनोविज्ञान आदि तथ्यों का विवेचन किया गया है।

टिप्पणी

पांचवीं और अंतिम इकाई जनसंचार पर आधारित हैं। इसमें जनसंचार का परिचय, जनसंचार का महत्व, परिभाषा तथा संचार के प्रारूपों (मॉडलों) का वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में समाज में मानव व्यवहार से संदर्भित कतिपय विषयों का सांगोपांग अध्ययन किया गया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक छात्र–छात्राओं की जिज्ञासा को शांत कर उनका ज्ञानवर्द्धन करने में सफल सिद्ध होगी।

इकाई 1 सामाजिक प्रक्रिया

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 सामाजिक प्रक्रिया
  1.2.1 समाज व सामाजिक प्रक्रिया की परिभाषा
  1.2.2 सामाजिक प्रक्रिया के प्रकार
1.3 सामाजिक आकर्षण, निर्धारण एवं संतुलन सिद्धांत
  1.3.1 सामाजिक आकर्षण
  1.3.2 आकर्षण का निर्धारण
  1.3.3 संतुलन सिद्धांत
1.4 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति, विश्लेषण एवं ओपिनियन लीडर व सूचना प्रवाह का व्यक्तिगत प्रभाव
  1.4.1 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति
  1.4.2 विश्लेषण के प्रकार
  1.4.3 ओपिनियन लीडर और सूचना का प्रवाह
  1.4.4 व्यक्तिगत प्रभाव का महत्व
1.5 समाज और जनसंचार एवं मनोवृत्ति गठन
  1.5.1 जनसंचार
  1.5.2 मनोवृत्ति गठन
1.6 पूर्वाग्रह और भेदभाव तथा रूढ़िवादिता
  1.6.1 रूढ़िबद्धता
  1.6.2 निहित पूर्वाग्रह
1.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.8 सारांश
1.9 मुख्य शब्दावली
1.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.11 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में एक–दूसरे के प्रति आकर्षण होना आवश्यक है। समाज मनुष्यों की सामाजिक प्रक्रियाओं से बना एक समूह है। व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक, मानसिक और शारीरिक आवश्यकताएं समाज से पूरी होती हैं। जीवन के तमाम कार्यों के लिए वह समाज पर निर्भर रहता है। इस कारण वह समाज के विभिन्न लोगों के साथ मेलजोल बनाकर रखता है, संबंध बनाता है। समाज की अपनी विशेषता होती है। समाज को दिशा देने के लिए कुछ ओपिनियन लीडर भी होते हैं और वे समाज के लोगों से संचार करते हैं। उनका व्यक्तिगत प्रभाव होता है। समाज में परंपरा का पालन होता है। किसी के व्यवहार, रहन–सहन, शैक्षिक स्तर, आर्थिक स्तर, सामाजिक स्तर आदि के प्रति व्यक्ति धारणा भी बनाता है।

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक प्रक्रिया की अवधारणा, सामाजिक आकर्षण, समाज में जनसंचार, ओपिनियन लीडर की भूमिका, समाज में मनोवृत्ति का निर्माण, पूर्वाग्रह धारणा, भेदभाव व रूढ़िवादिता आदि तथ्यों का विश्लेषण किया गया है।

1.1 उद्देश्य

टिप्पणी

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- सामाजिक प्रक्रियाओं की अवधारणाओं, आकर्षण, संबंधित तत्वों और उसकी परिभाषाओं को समझ पाएंगे;
- समाज में जनसंचार, ओपिनियन लीडर की भूमिका और व्यक्तिगत प्रवाह के विभिन्न पक्षों को जान पाएंगे;
- सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति व विश्लेषण के प्रकारों को समझ पाएंगे,
- सामाजिक आकर्षण के निर्धारण व संतुलन सिद्धांत के बारे में जान पाएंगे,
- समाज में मनोवृत्ति का निर्माण, पूर्वाग्रह धारणा, भेदभाव और रूढ़िवादिता के बारे में भी जान पाएंगे।

1.2 सामाजिक प्रक्रिया

मनुष्य के लिए सदैव समाज एक आवश्यक आवश्यकता रहा है। समाज का अर्थ सामाजिकता से है। हरेक मनुष्य के लिए सामजिकता आवश्यक है और सामाजिकता के लिए संबंधों का होना आवश्यक है। सामाजिक संबंध समाज का निर्माण करने के साथ–साथ मनुष्य की जीवन पद्धति, व्यवहारकुशलता, कार्य–कलाप, रोजमर्रा की जिन्दगी के कार्य आदि को भी प्रभावित करते हैं। मानव जीवन के प्रतिमान, संबंध, आदर्श, मूल्य, परंपरा, मान्यता आदि भी समाज और सामाजिक परिवेश पर आधारित होते हैं। समाज का आधार रीति, कार्य–प्रणाली, अधिकार, पारस्परिक सहयोग, समूह एवं उप–समूह, मानव–व्यवहार पर नियंत्रण, स्वतंत्रता है। हर समाज में व्यक्तियों की बहुलता, सामाजिक संबंध और सामाजिक अन्तःक्रिया होना आवश्यक होता है। समाज निर्माण में समाज की रक्षा, समाज में कार्य–विभाजन, समूह में एकता और सामाजिक व्यवस्थता में स्थिरता होना जरूरी होता है।

1.2.1 समाज व सामाजिक प्रक्रिया की परिभाषा

प्रसिद्ध विद्वान राइट के अनुसार, "समाज लोगों का समूह नहीं है, यह संबंधों की प्रणाली है, जिसका व्यक्तियों के समूहों के बीच अस्तित्व होता है।"

के. डेविस के अनुसार, "सामाजिक संबंध समाज नहीं होता बल्कि सामाजिक संबंधों की एक व्यवस्था को समाज कहते हैं।"

सी. एच. कूले कहते हैं, "समाज की रीतियां और प्रक्रियाएं एक जटिल प्रक्रिया है, जो आपस में अंतःक्रिया के कारण विकसित होती है तथा उसके अस्तित्व में ऐसी स्थिति होती है कि समाज के एक भाग का प्रभाव दूसरे भागों में पड़ता है।"

गिन्सबर्ग कहते हैं, "समाज व्यक्तियों का समूह है जो कुछ खास संबंधों या खास व्यवहारों द्वारा आपस में बंधे होते हैं, जो व्यक्ति उन संबंधों तथा व्यवहारों से बंधे नहीं होते हैं वे समाज का हिस्सा नहीं होते हैं।"

पारसन्स के अनुसार, "समाज को उन मानवीय संबंधों की संपूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो साध्य संबंधों के रूप में क्रिया करने में उत्पन्न हुए हो चाहे ये यथार्थ हो या प्रतीकात्मक।

टिप्पणी

मैकाइवर के अनुसार, "समाज रीतियों एवं कार्य–प्रणालियों की, अधिकार–सत्ता एवं पारस्परिक सहायता की, कई समूहों तथा श्रेणियों की, मानव व्यवहार के नियंत्रण तथा स्वतंत्रताओं की एक व्यवस्था है। इस परिवर्तनशील और जटिल व्यवस्था को समाज कहा जाता है। समाज सामाजिक संबंधों का जाल होता है और यह हमेशा परिवर्तित होता रहता है।"

सामाजिक प्रक्रिया की परिभाषा

जिस प्रक्रिया से व्यक्ति सामाजिक जीवन का अंग बनता है उसे सामाजिक प्रक्रिया कहते हैं। समाज को समझने के लिए उसकी प्रक्रियाओं को समझना आवश्यक है। घटनाओं का क्रम, घटनाओं की पुनरावृति, घटनाओं के मध्य संबंध, घटनाओं की निरंतरता और विशिष्ट परिणाम सामाजिक प्रक्रिया के आवश्यक तत्व हैं।

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार, "प्रक्रिया का अर्थ है निरंतर परिवर्तन जो परिस्थिति की आन्तरिक शक्तियों के घात–प्रतिघात के फलस्वरूप निश्चित रूप से घटित होता है। इस परिभाषा के अनुसार, समूह के विभिन्न सदस्य जब एक साथ किसी क्रिया–प्रतिक्रिया से सम्बद्ध होते हैं तो उसके फलस्वरूप पूर्व स्थिति में परिवर्तन होता है, एक स्थिति से दूसरी स्थिति की ओर जाना, यह है सामाजिक प्रक्रिया जो निरंतर गतिशील रहती है।"

मैक्स लर्नर कहते हैं, "सामाजिक प्रक्रिया के मूल में इस प्रकार गति, परिवर्तन, प्रवाह और समाज के सतत परिवर्तित होने का अभिप्राय होता है।"

बीसेन्ज के अनुसार, "परस्पर संबंधों, क्रिया के विभिन्न स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रिया कहते हैं।"

लुंडवर्ग के अनुसार, "प्रक्रिया का अर्थ एक अपेक्षाकृत विशिष्ट तथा पूर्वानुमानित परिणाम की ओर ले जाने वाली संबंधित घटनाओं के क्रम से है।"

गिन्सबर्ग के अनुसार, "सामाजिक प्रक्रियाओं का अर्थ व्यक्तियों या समूहों के मध्य अन्तःक्रिया की विभिन्न विधियों से है, जिनमे सहयोग एवं संघर्ष, सामाजिक विभेदीकरण तथा एकीकरण, विकास, अवरोध एवं पतन सम्मलित हैं।"

गिलिन और गिलिन के अनुसार, "सामाजिक प्रक्रियाओं से हमारा तात्पर्य अन्तःक्रिया करने के उन तरीकों से है, जिन्हें हम उस समय अवलोकन कर सकते हैं जब व्यक्ति तथा समूह परस्पर मिलते हैं तथा संबंधों की व्यवस्था स्थापित करते हैं या पूर्व प्रचलित जीवन के तरीकों में गड़बड़ होती है, देख सकते हैं।"

जोनाथन टर्नर के अनुसार, "अन्तःक्रिया वह सामाजिक प्रक्रिया है जो व्यक्तियों को पारस्परिक रूप से प्रभावित करती है और ऐसा करने में लोग संयुक्त क्रियाओं के प्रतिमान में नई क्रियाओं की शुरुआत करते हैं, उनमें परिवर्तन लाते हैं या इन क्रियाओं को बंद कर देते हैं। मतलब यह हुआ कि जन्म के बाद ही लोगों में अन्तःक्रियाएं प्रारंभ हो जाती हैं।"

टिप्पणी

सामाजिक प्रक्रिया अन्तःक्रिया के विभिन्न स्वरूप को कहते हैं और व्यक्ति अपने संबंध सहयोगिक और विरोधात्मक आधार पर स्थापित करता है। हालांकि कुछ समाजशास्त्री सामाजिक प्रक्रिया और अन्तःक्रिया में विभेद किया है क्योंकि सामाजिक प्रक्रिया के अंतर्गत अन्तःक्रिया होती है लेकिन प्रत्येक अन्तःक्रिया के तहत सामाजिक प्रक्रिया नहीं होती है। यही कारण है कि अन्तःक्रिया कालांतर में सामाजिक प्रक्रिया हो जाती है और समाज में दूसरे लोग और पीढ़ियां उसका लगातार अनुसरण करती हैं और वे परंपरा के तौर पर सामने आती हैं। अन्तःक्रिया के अंतर्गत दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच भाषा या संकेत के माध्यम से भावनाओं का आदान–प्रदान होता है।

अन्तःक्रिया तीन स्तर पर होती है–

(i) व्यक्ति–व्यक्ति के बीच

(ii) व्यक्ति–समूह के बीच

(iii) समूह–समूह के बीच

व्यक्ति की आवश्यकताएं काफी हैं और इसे पूरा करने के लिए उसे किसी से या तो सहयोग लेना पड़ता है या संघर्ष करना पड़ता है। सहयोग लेने या संघर्ष करने की प्रक्रिया सामाजिक प्रक्रिया कहलाती है। एक सामाजिक प्रक्रिया के तहत कई अन्तःक्रिया शामिल होती हैं।

उदाहरण 1: जैसे अनजान लड़का–लड़की कॉलेज की कक्षा या सेमीनार में मिले, उनमें बातचीत हुई तो यह अन्तःक्रिया हुई। कालांतर में कई बार मुलाकात हुई और फिर उनमें प्रेमविवाह हो गया तो इसे सामाजिक प्रक्रिया कहते हैं।

उदाहरण 2: कोई व्यक्ति समाज में रह रहे किसी दूसरे व्यक्ति का हल्के तौर पर विरोध करता है तो उसे अन्तःक्रिया कहते हैं। यदि उस व्यक्ति का विरोध सामूहिक, जातिगत या समुदायगत होता है तो वह सामाजिक प्रक्रिया हो जाता है।

अर्थात, सामाजिक अन्तःक्रियाओं का सामूहिक परिणाम सामाजिक अन्तःक्रिया के तौर पर सामने आता है।

1.2.2 सामाजिक प्रक्रिया के प्रकार

लेस्ली ने सामाजिक प्रक्रिया को चार भागों में बांटा है–

(i) सहयोग (Cooperation)

(ii) प्रतिस्पर्धा (Competition)

(iii) संघर्ष (Struggle)

(iv) व्यवस्थापन (Accommodation)

सहयोग

व्यक्ति समाज पर निर्भर है और सहयोग व्यक्ति की जन्मजात जरूरत है। उसका अस्तित्व, विकास और जीवन सहयोग पर आधारित है। उदाहरण के लिए भूख व्यक्ति की मूलभूत आवश्यकता है और भोजन के लिए वह समाज के विभिन्न व्यक्तियों पर निर्भर रहता है। व्यक्ति के जीवन में कई आवश्यकताएं हैं, जिनकी संतुष्टि के लिए उसे दूसरे के सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। सहयोग व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता है।

ग्रीन. ए. डब्ल्यू के अनुसार, "सहयोग दो या अधिक व्यक्तियों के किसी कार्य को करने या किसी सामान्य रूप से इच्छित लक्ष्य पर पहुंचने को निरंतर एवं सम्मलित प्रयत्न को कहते हैं।"

टिप्पणी

फेयरचाइल्ड एच.पी. के अनुसार, "सहयोग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एकाधिक व्यक्ति या समूह अपने प्रयत्नों को बहुत कुछ संगठित रूप में सामने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करते हैं।"

सहयोग के लिए कुछ शर्तें होती हैं, इनमें प्रमुख हैं, समान उद्देश्य, सहमति, सामूहिक प्रयत्न, समान इच्छा, प्रेम एवं सद्भावना, व्यवहारों में एकरूपता, संबंधों की घनिष्टता, अन्तःक्रिया।

सहयोग के प्रकार

सहयोग के भी तीन प्रकार होते हैं–

(i) प्राथमिक सहयोग : यह प्राथमिक संबंधों पर आधारित होता है। जैसे परिवार और दोस्त। इस प्रकार के सहयोग में स्वार्थ न होकर त्याग की भावना होती है। यहां व्यक्तिगत स्वार्थ का कोई स्थान नहीं होता है। जैसे मां अपने बच्चों का पालन–पोषण करती है।

(ii) द्वितीय सहयोग : यह जटिल समाज में होता है, जिसमें औपचारिकता अधिक होती है और व्यक्तिगत हितों की प्रधानता होती है। इस प्रकार का सहयोग कार्यालय, स्कूल, कॉलेज, कंपनियों में होता है। श्रम विभाजन की प्रक्रिया द्वितीय सहयोग का परिचायक है।

(iii) तृतीय सहयोग : यह किसी विशेष स्थिति का सामना करने या किसी खास उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। यह अस्थिर होता है। चुनाव जीतने या विभिन्न दलों को सहयोग इसी श्रेणी का सहयोग होता है।

हालांकि सहयोग का स्वरूप सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और आर्थिक भी होता है जो सहयोग के महत्त्व को दर्शाता है।

प्रतिस्पर्धा

आधुनिक युग में समाज के हर क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। समाज में वस्तुएं या मौके सीमित हैं लेकिन उसे पाने वालों की संख्या बढ़ी है। जब दो या दो से अधिक व्यक्तियों में सीमित मात्रा या संख्या वाले वस्तुओं या सेवाओं को पाने के लिए प्रयत्न किया जाता है तो उसे प्रतिस्पर्धा कहते हैं।

बीसेन्ज और बीसेन्ज के मताबिक, "प्रतियोगिता दो या अधिक व्यक्तियों के समान उद्देश्य, जो सीमित होते हैं और जिसे सभी प्राप्त नहीं कर सकते, को पाने के प्रयत्न को कहते हैं। इसमें प्राप्तियां न्यूनतम होती हैं और उनके अनुपात में प्राप्त करने वाले अधिक होते हैं।"

फेयरचाइल्ड के अनुसार, "प्रतियोगिता सीमित वस्तुओं के उपभोग या अधिकार के लिए किए जाने वाले परिश्रम को कहते हैं।"

फिचर. जे. एच. कहते हैं, "प्रतिस्पर्धा सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति या समूह किसी खास उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।"

ग्रीन.ए. डब्ल्यू, के अनुसार, "प्रतिस्पर्धा में दो या इससे अधिक समूह एक ही उद्देश्य का प्रयत्न करते हैं, जिसमें एक समूह दूसरे समूह के साथ बांटने के लिए तैयार नहीं होता है।"

टिप्पणी

प्रतिस्पर्धा की प्रकृति

प्रतिस्पर्धा की प्रकृति निम्न है–

(क) प्रतिस्पर्धा अचेतन प्रक्रिया है।

(ख) प्रतिस्पर्धा अवैयक्तिक प्रक्रिया है।

(ग) प्रतिस्पर्धा एक निरंतर प्रक्रिया है।

(घ) यह एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है।

प्रतिस्पर्धा के लिए वस्तु या स्थान की सीमित मात्रा, वस्तु या स्थान का महत्त्व, समूह, समाज में प्रतिस्पर्धात्मक मूल्य व्यवस्था, भौतिकवादी दृष्टिकोण, जटिल समाज, व्यक्तिगत गुणों का होना आवश्यक है। प्रतिस्पर्धा व्यक्तिगत भी होती है और अवैयक्तिक भी होती है। उदाहरण के लिए कक्षा में प्रथम आना वैयक्तिक प्रतिस्पर्धा है वहीं प्रतियोगिताओं में प्रथम आना अवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा है। समाज में प्रतिस्पर्धा आर्थिक, जातीय, राजनीतिक और सांस्कृतिक आधार पर होती है।

संघर्ष

समाज में संघर्ष भी होता है और यह सभी समाज में होता है। वह तब होता है जब प्रतियोगियों का ध्यान लक्ष्य से हटकर व्यक्ति या समूह पर केन्द्रित होता है। यानी प्रतिद्वंद्वी हर हालात में सामने वाले को पराजित करने का प्रयास करता है और उसे सफलता से रोकने का प्रयास करता है। संघर्ष में किसी को धमकाने से लेकर हिंसात्मक तरीका भी अपनाया जाता है।

ग्रीन. ए. डब्ल्यू के मुताबिक, "किसी व्यक्ति का जान–बूझकर रोकने या विरोध करने का कार्य संघर्ष को जन्म देता है।"

संघर्ष का कारण व्यक्तिगत विभेद, सांस्कृतिक विभेद, हितों का संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन होता है। संघर्ष व्यक्तिगत, प्रजातीय, राजनैतिक और वर्ग के बीच होता है।

संघर्ष के प्रकार

संघर्ष सामान्य तौर पर दो प्रकार के होते हैं, पहला वैयक्तिक और दूसरा सामूहिक। वैयक्तिक संघर्ष में व्यक्ति बराबर संघर्ष करते रहते हैं। यह संघर्ष व्यक्ति और व्यक्ति के बीच होता है। संपत्ति, जमीन आदि को लेकर वैयक्तिक संघर्ष होता है। सामूहिक संघर्ष इसके विपरीत है। इस संघर्ष में व्यक्ति के स्थान पर समूह होता है। वर्ग संघर्ष, जातीय संघर्ष, धार्मिक संघर्ष, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष इसी के उदाहरण हैं।

संघर्ष के लिए कुछ परिस्थितियों का होना आवश्यक है, मसलन, वैयक्तिक भिन्नता, मनोवैज्ञानिक स्तर का विरोधाभास, प्रतिस्पर्धा, समझौते न होने की स्थिति, क्रोध का संवेग और नियंत्रण।

टिप्पणी

संघर्ष के प्रभाव

संघर्ष से समाज में निम्न प्रभाव पड़ते हैं–

1. समूह में एकरूपता कम होती है।
2. समूह में आंतरिक विवाद और मतभेद कम होता है।
3. कार्यों में एकरूपता होती है।
4. समूह में एकता की कमी होती है।
5. व्यक्तित्व में परिवर्तन होता है।
6. तनावपूर्ण विघटन होता है।
7. दृष्टिकोण सीमित हो जाता है।
8. घृणा का वीभत्स रूप देखने को मिलता है।
9. संघर्ष में जन–धन की काफी हानि होती है।
10. दोनों पक्ष यदि शक्तिशाली होते हैं तो व्यवस्थापन होता है, नहीं हों तो आधिपत्य होता है।

संघर्ष से सकारात्मक लाभ भी होता है। वे हैं–

1. लोग में चेतना का विकास होता है।
2. लोग स्थिति और परिस्थिति को समझने लगते हैं।
3. आपसी सहयोग की भावना बढ़ती है।
4. सामूहिक एकरूपता आती है।
5. लोग अधिक परिश्रम करने के लिए तत्पर होते हैं।
6. लोगों में अपनी शक्ति का ज्ञान होता है।
7. लोग नवीन ज्ञान अर्जित करते हैं।
8. उनमें आत्मचेतना का भी विकास होता है।
9. सामूहिक भावना भी विकसित होती है।
10. लोगों में चरित्र का निर्माण होता है।

संघर्ष और प्रतिस्पर्धा में अंतर

संघर्ष और प्रतिस्पर्धा में अंतर होता है, वे निम्न हैं–

संघर्ष	प्रतिस्पर्धा
संघर्ष कभी–कभी होता है।	प्रतिस्पर्धा सतत होती है।
संघर्ष वैयक्तिक प्रक्रिया है।	प्रतिस्पर्धा अवैयक्तिक प्रक्रिया है।
संघर्ष में प्रतिद्वंद्वियों को हानि पहुंचाई जाती है।	प्रतिस्पर्धा में प्रतिद्वंद्वियों को हानि नहीं पहुंचाई जाती है।

टिप्पणी

संघर्ष में विरोधियों को समाप्त करने की कोशिश की जाती है।	प्रतिस्पर्धा में लक्ष्य प्राप्त करना मकसद होता है।
संघर्ष में सामाजिक नियम–कायदे का पालन नहीं होता है।	प्रतिस्पर्धा में सामाजिक नियम–कायदे का पालन होता है।
संघर्ष में हिंसा होती है।	प्रतिस्पर्धा में अहिंसा के सिद्धांत का पालन होता है।
संघर्ष में दोनों पक्षों को हानि होती है।	प्रतिस्पर्धा में दोनों पक्षों को लाभ होता है।
संघर्ष परिश्रम को बढ़ावा नहीं देता।	प्रतिस्पर्धा व्यक्तिगत गुणों और परिश्रम को बढ़ावा देती है।
संघर्ष में उत्पादनशीलता नहीं बढ़ती।	प्रतिस्पर्धा में उत्पादनशीलता बढ़ती है।

व्यवस्थापन

संघर्ष की दशा में समाज के बचाव के लिए व्यवस्थापन की प्रक्रिया अपनाई जाती है। यह समाज को जोड़ने वाली प्रक्रिया है। यह समाज के संघर्ष को टालने या शांति व्यवस्था बनाए रखने की प्रक्रिया है।

जोन्स, ई. एम. के मुताबिक, "व्यवस्थापन असहमत रहने के समझौते को कहा जाता है।"

गिलिन एवं गिलिन कहते हैं, "व्यवस्थापन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रतियोगी तथा संघर्षरत व्यक्ति और समूह एक–दूसरे के साथ अपने संबंधों को अनुकूल करते हैं, जिससे प्रतिस्पर्धा, अतिक्रमण या संघर्ष के कारण उत्पन्न कठिनाइयों को पार किया जा सकता है।"

मनुष्य जीवन में प्रतियोगिता और संघर्ष की कई स्थितियां आती हैं। इन दशाओं में सामाजिक संबंधों का अनुकूलन करने के लिए या इन दशाओं को टालने के लिए जिस प्रक्रिया को काम में लिया जाता है, वह व्यवस्थापन कहलाता है। यह एक निरंतर प्रक्रिया है। इसमें व्यक्ति या समूह अपनी शक्ति और सामर्थ्य का अनुमान लगा लेते हैं। हार या जीत की स्पष्टता बनी रहती है। इसमें श्रेष्ठता और निम्नता बनी रहती है।

व्यवस्थापन के प्रकार

गिलिन और गिलिन ने व्यवस्थापन के दो प्रकार बताए हैं–

पहला समन्वित व्यवस्थापन (Co-Ordinate Accommodation), और दूसरा प्रभुता–अधीनतायुक्त व्यवस्थापन (Super-Ordinate-Subordinate Accommodation).

1. समन्वित व्यवस्थापन : यदि दो समान शक्ति वाले दलों में संघर्ष या प्रतियोगिता हो और उनमें व्यवस्थापन किया जाए तो इसे समन्वित व्यवस्थापन कहते हैं। जैसे अमेरिका और चीन किसी संधिपत्र पर हस्ताक्षर करते हैं।

2. प्रभुता–अधीनतायुक्त व्यवस्थापन : जब असमान शक्ति वाले दो दलों में जो संघर्षरत या प्रतियोगी हों, व्यवस्थापन होता है, तो इसे प्रभुता–अधीनतायुक्त व्यवस्थापन

कहते हैं। जैसे मुगलों ने राजपूत राजाओं को पराजित कर व्यवस्थापन के लिए मजबूर किया।

टिप्पणी

व्यवस्थापन के कारक

संघर्ष को समाप्त करने और व्यवस्थापन करने के अहम् कारक निम्न हैं–

(क) मध्यस्थता : संघर्ष समाप्ति के लिए तटस्थ व्यक्ति को चुना जाता है। वह न तो निर्णय लेता है और न ही कोई इच्छा प्रकट करता है। दोनों पक्षों की बात सुनकर दोनों को जानकारी देता है और एक मध्य का रास्ता निकलने की कोशिश करता है, जिससे सुलह हो सके।

(ख) सुलह : किसी भी संघर्ष में सुलह कराने वाला व्यक्ति प्रभावकारी होता है। वह दोनों पक्षों को निर्णय की ओर संकेत करता है।

(ग) निर्णायक : निर्णायक की भूमिका संघर्ष को समाप्त करने में अहम् होती है। दोनों पक्षों को उसकी बात मानने के लिए विवश होना पड़ता है।

(घ) बल का प्रयोग : शक्तिशाली पक्ष अपने बल प्रयोग के जरिये विरोधियों को व्यवस्थापन के लिए विवश करता है।

(ङ) युक्तिकरण : संघर्ष में असफलता हाथ लगने पर वह अपने पक्ष के उन कारणों की तलाश करता है, जिससे उसे संतोष प्राप्त होता है। उस कारण को वह सही मान लेता है।

(च) स्थिति परिवर्तन : असंतोष को दूर करने के लिए व्यक्ति अपनी स्थिति में परिवर्तन लाता है। यह परिवर्तन स्थान, समूह, संस्थान आदि का होता है।

(छ) स्थानापन्नता : असफलता हाथ लगने पर व्यक्ति या समूह अपना उद्देश्य बदल लेता है और खुद को परिस्थिति के अनुकूल बना लेता है।

व्यवस्थापन की प्रक्रिया के अहम् कारक हैं–

(क) सूचना, शिक्षा और प्रचार

(ख) राजनीतिक एवं वैधानिक दबाव

(ग) संगठन

(घ) संघर्ष एवं प्रतिस्पर्धा पर रोक

(ङ) विरोधी दमन

(च) व्यक्तित्व संपन व्यक्तियों का सहयोग

(छ) संस्थाओं में परिवर्तन

(ज) परिस्थिति में परिवर्तन

(झ) सात्मीकरण निर्माण

(ञ) महत्ता

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. "समाज लोगों का समूह नहीं, यह संबंधों की प्रणाली है, जिसका व्यक्तियों के समूहों के बीच अस्तित्व होता है।" यह परिभाषा किसने दी?
   (क) सी.एच. कूले (ख) राइट
   (ग) के. डेविस (घ) गिन्सबर्ग
2. लेस्ली ने सामाजिक प्रक्रिया को कितने भागों में बांटा है?
   (क) दो (ख) तीन
   (ग) चार (घ) पांच

1.3 सामाजिक आकर्षण, निर्धारण एवं संतुलन सिद्धांत

समाज में लोग दूसरों के साथ संबंध स्थापित करते हैं, उसे बरकरार रखते हैं और पुनर्स्थापित करते हैं। ऐसे में हम वैसे लोगों को मान्यता देते हैं जो हमें भी मान्यता देते हैं। जो हमारा ध्यान रखते हैं, हम भी उनका ध्यान रखते हैं। ऐसे में महत्वपूर्ण बात यह होती है कि कुछ लोगों का ध्यान हम रखते हैं तो कुछ लोगों से हमारा लगाव होता है।

1.3.1 सामाजिक आकर्षण

जब कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या समूहों से अंतःक्रिया करता है तो उनके बीच आकर्षण या विकर्षण उत्पन्न होने लगता है। इस आकर्षण–विकर्षण के कई रूप हैं। इसे कई तत्व भी प्रभावित भी करते हैं। अंतःक्रिया की प्रक्रिया परिवार, स्कूल, बाजार आदि हर जगह व्यक्ति करता है। दूसरों के संपर्क में आकर व्यक्ति आत्म की अनुभूति करता है। व्यक्तियों के मध्य होने वाली प्रक्रियाएं या तकनीकी रूप से अंतःवैयक्तिक प्रक्रियाएं हमारे जीवन का केंद्र बन जाती हैं। ऐसे में सामाजिक आकर्षण होना आवश्यक है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार, लोग किसी के प्रति भी रोमांटिक आकर्षण महसूस कर सकते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि यौन आकर्षण और भावनात्मक आकर्षण साथ–साथ हो। एक के अस्तित्व के साथ यह आवश्यक नहीं कि दूसरे का अस्तित्व हो ही। सामाजिक आकर्षण भी दो प्रकार का होता है, पहला आकर्षण और दूसरा दीर्घकालीन संबंध। हालांकि आकर्षण को प्रभावित करने वाले कई चर हैं, जो व्यक्ति को प्रभावित करते हैं, वे हैं, शारीरिक आकर्षण, उत्तेजना, समीपता, पारस्परिकता, समानता, बाधा आदि।

आकर्षण को प्रभावित करने वाले कारक

आकर्षण को प्रभावित करने वाले कई प्रमुख कारक हैं, जो व्यक्ति को प्रभावित करते हैं–

(i) निकटता

निकटता बताती है कि दो लोग एक–दूसरे के जितने करीब रहते हैं, उनकी बातचीत करने की संभावना उतनी ही अधिक होती है। जितनी बार उनकी बातचीत होगी, उतनी

टिप्पणी

ही अधिक संभावना है कि वे एक– दूसरे को पसंद करेंगे। निकटता वह प्राथमिक कारक है जिसके कारण मित्रता का निर्माण होता है। निकटता पुरुष और महिला के लिए पारस्परिक आकर्षण का एक निर्धारक भी होता है। ऑलजीयर और बायरन (1972) के मुताबिक, जो दोस्त एक ही कमरे या एक ही शहर को साझा करते हैं, उन्हें दूर के शहरों और शहरों में रहने वाले दोस्तों की तुलना में पारस्परिक आकर्षण अधिक होता है।

(ii) संसर्ग

जितना हम संपर्क में आते हैं उतना ही संसर्ग हमारा अधिक होता है। कभी हमारा संसर्ग नकारात्मक भी होता है तो कभी सकारात्मक। इसके तहत कोई परिचित किसी को आकर्षित करने के लिए तरह–तरह के उपाय करते हैं। चेहरे को आकर्षक बनाते हैं, विशिष्ट दिखने की कोशिश करते हैं, लोग किसी के चेहरे को देख कर आकर्षिक होते हैं और उनके संसर्ग में आने कि कोशिश करते हैं।

(iii) शारीरिक आकर्षण

कोई भी व्यक्ति उसी के साथ समय व्यक्त करता है जो उसे आकर्षक लगता है। आकर्षक लोगों को अधिक दिलचस्प, खुश, होशियार, संवेदनशील और नैतिक के रूप में देखा जाता है। यह व्यक्ति के प्रभामंडल के प्रभाव के कारण होता है। हम सुंदरता को एक मूल्यवान वस्तु के रूप में देखते हैं। महिला और पुरुषों के बीच सबसे बड़ा आकर्षण शारीरिक आकर्षण होता है। पुरुष बदसूरत महिला की तुलना में आकर्षक महिला के प्रति ज्यादा आकर्षित होते हैं। वहीं, नौकरी–पेशे में यह संभावना इसके उलट होती है, यहां व्यक्ति उसके प्रति आकर्षित होता है जो रोजगार से संबंधित निर्णय मसलन, नौकरी देने वाले, पदोन्नति देने वाले आदि के प्रति आकर्षित होते हैं।

(iv) समानता

हम उन लोगों के प्रति सबसे अधिक आकर्षित होते हैं जो हमारे धार्मिक और राजनीतिक विश्वासों, मूल्यों, उपस्थिति, शैक्षिक पृष्ठभूमि, उम्र आदि में समान होते हैं। हम ऐसे लोगों का चयन करते हैं जो हमारे दृष्टिकोण और रुचियों में हमारे जैसे हैं क्योंकि इससे उनका अधिक सकारात्मक मूल्यांकन होता है। हमारी पसंद और विश्वासों के साथ उनका समझौता सामाजिक परिस्थितियों के संबंध में हमारे सामने आने वाली किसी भी अनिश्चितता को कम करने में मदद करता है और स्थिति के बारे में हमारी समझ में सुधार करता है। उनकी समानता हमारे अपने मूल्यों, विश्वासों और दृष्टिकोणों को भी मान्यता प्रदान करती है।

(v) पारस्परिकता

हम ऐसे लोगों के प्रति अधिक आकर्षित होते हैं जो हमारे साथ पारस्परिक आदान–प्रदान में शामिल होने की संभावना रखते हैं। हम ऐसे लोगों को पसंद करते हैं जो हमें पुरस्कृत और सराहना महसूस कराते हैं। हम भी पारस्परिकता की भावना से उन्हें कुछ वापस देने की कोशिश करते हैं। यह आदान–प्रदान तब तक जारी रहता है जब तक दोनों पक्ष अपनी बातचीत को पारस्परिक रूप से लाभकारी मानते हैं या विनिमय के लाभ लागत से अधिक होते हैं।

टिप्पणी

(vi) सफलता के लिए कड़ी मेहनत

एक महिला या पुरुष को पाने के लिए कड़ी मेहनत करने से उत्सुक दिखने वाली महिला या पुरुष अधिक वांछनीय हो जाते हैं। यदि महिला किसी विशेष पुरुष के लिए आसान है, लेकिन अन्य सभी पुरुषों के लिए कठिन है, तो उसे एक ऐसी महिला पर प्राथमिकता दी जाएगी जो समान रूप से कठिन या आसान हो या ऐसी महिला है जिसके बारे में पुरुष को कोई जानकारी नहीं हो। एक महिला अपनी वांछनीयता को तेज कर देती है यदि उसे लगता है कि उसे पाना कठिन तो है लेकिन प्रतिष्ठा की बात है। वह अपने व्यवहार से अपने साथी को स्पष्ट कर देती है कि वह उसके प्रति आकर्षित है।

(vii) अंतरंगता

अंतरंगता तब होती है जब हम किसी अन्य व्यक्ति के करीब और विश्वास महसूस करते हैं। यह कारक आत्म–प्रकटीकरण के विचार या किसी अन्य व्यक्ति को हमारे सबसे गहरे रहस्यों, अनुभवों और विश्वासों के बारे में बताने पर आधारित है जो हम आमतौर पर दूसरों के साथ साझा नहीं करते हैं। लेकिन जानकारी का यह खुलासा हमारे मित्र या अन्य से आपसी आत्म–प्रकटीकरण की अपेक्षा के साथ आता है। ऐसे में एक संभावना बनती है कि हम ओवरशेयर करने लगते हैं, जिसे ओवरडिस्क्लोजर कहा जाता है। इससे हमारे आकर्षण में कमी आ सकती है।

(viii) साथी चयन

समाज में जब व्यक्ति को एक साथी के चयन करने की बात आती है तो पुरुषों और महिलाओं की अलग–अलग रणनीतियां होती हैं। साथी का चयन सभी मानव संस्कृतियों में सार्वभौमिक रूप से होता है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि पुरुष लगभग असीमित संख्या में बच्चों के पिता बन सकते हैं, इसलिए वे युवा, आकर्षक और स्वस्थ महिलाओं के प्रति आकर्षित होते हैं। वे यौन रूप से वफादार महिलाओं के प्रति आकर्षित होते हैं। इसके विपरीत, महिलाएं अधिक चयनात्मक रणनीति का समर्थन करती हैं कि वे अपने जीवन के दौरान केवल सीमित संख्या में बच्चे पैदा करेंगी। वह एक ऐसे व्यक्ति की तलाश करती है जो आर्थिक रूप से स्थिर हो और अपने बच्चों का भरण–पोषण कर सके। पुरुष खुद से उम्र में छोटी महिलाओं से शादी करना चाहते हैं जबकि महिलाएं अपने से अधिक उम्र के पुरुषों को पसंद करती हैं।

आकर्षण के सिद्धांत

मनोवैज्ञानिकों ने आकर्षण के सिद्धांतों के तहत आकर्षण की विभिन्न भावनाओं का अध्ययन किया है। आकर्षण के सिद्धांत निम्न हैं–

(क) "पाने के लिए कठिन" का सिद्धांत

यह सिद्धांत संबंध में बाधाओं के तत्व से संबंधित है। मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि लोग इस चीज के प्रति आकर्षित होते हैं जिसके बारे में वे सोचते हैं कि वह उन्हें नहीं मिल सकती। इस सिद्धांत में पारस्परिक संबंध जिम्मेदार होता है। इसमें पुरुष और महिला दोनों उन लोगों के प्रति आकर्षित होते हैं, जो उन्हें प्राप्त करने में कठिन लगता है। व्यक्तियों को लगता है कि समाज उनकी पसंद की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाता है

और उनकी स्वतंत्रता का विरोध करता है। इस मामले में धारणा यह भी बनती है कि एक व्यक्ति जो किसी के प्रति आकर्षित नहीं होता है या दिलचस्पी नहीं लेता है, वह किसी के लिए भी सहज उपलब्ध हो जाता है। लेकिन जब वह सहज उपलब्ध नहीं होता है तो व्यक्ति उसकी इच्छा करना शुरू कर देता है।

टिप्पणी

(ख) समानता का सिद्धांत

समानता का सिद्धांत कहता है कि हम अपने समान लोगों के प्रति अधिक आकर्षित होते हैं। चाहे वह एक समान डिग्री की बात हो, चाहे वह एक समान नौकरी की बात हो, चाहे आर्थिक समानता की या फिर बौद्धिक समानता की। लोग अपने समान व्यक्तियों के साथ उठना, बैठना, बात करना पसंद करते हैं।

(ग) संपूरकता का सिद्धांत

संपूरकता का सिद्धांत के मुताबिक लोग समानता के नहीं, बल्कि पूरक द्वारा अपने साथी चुनते हैं। व्यक्ति ऐसे लोगों और उनकी कुशलता को लेकर आकर्षित होते हैं, जिसमें उन्हें लगता है कि जो गुण उनमें नहीं है लेकिन उस साथी में है और इससे वे सम्पूर्णता को प्राप्त करते हैं। कई बार आकर्षण के तहत व्यक्ति सम्पूर्ण भी बनना चाहता है और वह उन पहलुओं पर ध्यान देता है जो उसमें नहीं है। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति बातूनी है तो संभावना ऐसी होती है कि वह अपनी सम्पूर्णता के लिए ऐसे व्यक्ति को चुनेगा जो उसकी बात सुने।

(घ) अनुक्रमिक फिल्टरिंग का सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार, पहले व्यक्ति चाहता है कि दूसरा उसके समान हो, जैसे उम्र, शिक्षा, सामाजिक वर्ग आदि। ऐसी स्थिति में आकर्षित होने और संबंध बनाने की संभावना बढ़ जाती है। वे एक–दूसरे को रोमांटिक साथी के रूप में देखना शुरू करते हैं। व्यक्तिगत मूल्यों के लिए प्रासंगिक होना शुरू कर देते हैं।

(ङ) भूमिका–मूल्य सिद्धांत

भूमिका–मूल्य सिद्धांत बताता है कि दो व्यक्तियों के आपस में आकर्षण महसूस करने के लिए आवश्यक है कि दोनों बुनियादी तौर पर एक–दूसरे के अनुरूप हों। यह स्तर उम्र, शारीरिक बनावट, आर्थिक स्थिति से बनता है। आकर्षित होने या साथ होने के बाद व्यक्ति दूसरों के मूल्यों को महत्त्व देना शुरू करता है। संबंध या रिश्ते में सफलता की संभावना अधिक तब होती है जब व्यक्ति गहरे तौर पर अपने मूल्यों को साझा करते हैं। आकर्षण का सिद्धांत कहता है कि जब तक दो व्यक्ति गहरे तौर पर मूल्यों को नहीं पहचानते या जब तक भूमिका के मुद्दे एक समान नहीं होते तब तक आकर्षण कोई संबंध में तब्दील नहीं होता है। कई बार ऐसा भी होता है कि दो व्यक्तियों के मूल्य तो काफी हद तक समान हैं लेकिन एक जोड़े के रूप में उनकी भूमिकाएं मेल नहीं खाती हैं।

(च) डाईएडिक गठन का सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार, किसी संबंध को सकारात्मक रूप से विकसित करने के लिए चरणों की एक शृंखला होती है, जिसके बाद बनाए गए संबंध दीर्घकालीन होते हैं। ये चरण हैंः समानता की धारणा, बेहतर रिश्ते, प्रत्येक की विभिन्न भूमिका, जोड़े की

प्रभावी भूमिका आदि। इस सिद्धांत के मुताबिक प्रतिबद्धता का स्तर निर्धारण करना आकर्षण का बुनियादी तत्व है।

टिप्पणी

1.3.2 आकर्षण का निर्धारण

सामाजिक मनोविज्ञान में विशेषता का निर्धारण किसी और व्यक्ति के लिए सकारात्मक सोच को लेकर होता है। यह कई रूपों में होता है, मसलन पसंद (Like), प्रेम (Love), दोस्ती (friendship), एकतरफा प्रेम (Lust) और आदर्श (admiration) आदि।

व्यक्ति किसी दूसरे के प्रति आकर्षित होता है, इसके कई कारण हैं। वे शारीरिक आकर्षण, निकटता, समानता और पारस्परिकता आदि हैं।

शारीरिक आकर्षण : अनुसंधान से पता चलता है कि रोमांटिक आकर्षण मुख्य रूप से शारीरिक आकर्षण से निर्धारित होता है। डेटिंग के शुरुआती दौर में लोग ऐसे पार्टनर की ओर ज्यादा आकर्षित होते हैं, जिन्हें वे शारीरिक रूप से आकर्षक मानते हैं। पुरुषों में महिलाओं की तुलना में शारीरिक आकर्षण को महत्व देने की अधिक संभावना होती है। लोगों की अपनी शारीरिक आकर्षण की धारणा भी रोमांटिक प्रेम में एक भूमिका निभाती है। लोग ऐसे साथी चुनते हैं जो खुद के लिए आकर्षण के स्तर के बराबर हों। शारीरिक दृष्टि के आकर्षक लोगों के प्रति हम अधिक सकारात्मक और सुखद प्रतिक्रिया देते हैं।

निकटता : लोगों के उन लोगों से दोस्ती करने की अधिक संभावना होती है जो भौगोलिक रूप से निकट होते हैं। निकटता का अर्थ शारीरिक समीपता से है। निकटता उन लोगों में अधिक निर्मित होती है जिनसे बार–बार मुलाकात होती है या बार–बार देखते हैं। इसके लिए एक स्पष्टीकरण मात्र एक्सपोजर प्रभाव है। मात्र एक्सपोजर प्रभाव लोगों की सामान्य उत्तेजनाओं को अधिक पसंद करने की प्रवृत्ति को संदर्भित करता है, यदि वे बार–बार उनका सामना करते हैं। अंतरंगता और निकटता एक–दूसरे के प्रति आकर्षण पैदा करती है।

समानता : लोग ऐसे साथी भी चुनते हैं जो उम्र, जाति, धर्म, सामाजिक वर्ग, व्यक्तित्व, शिक्षा, बुद्धि और दृष्टिकोण जैसी विशेषताओं में खुद से मिलते–जुलते हों। यह समानता सिर्फ रोमांटिक पार्टनर के बीच ही नहीं बल्कि दोस्तों के बीच भी देखने को मिलती है। कुछ शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि समानता आकर्षण का कारण बनती है। अन्य लोग स्वीकार करते हैं कि लोगों के मित्र और साझेदार होने की संभावना अधिक हो सकती है जो केवल पहुंच के कारण स्वयं के समान होते हैं। लोगों के उन लोगों के साथ जुड़ने की अधिक संभावना होती है, जो स्वयं के समान होते हैं। कई बार समानता के साथ पूरकता का भी महत्त्व होता है। पूरकता में भिन्न होते हुए भी लोग एक–दूसरे के पूरक होते हैं और वे अन्तःक्रिया करना पसंद करते हैं।

पारस्परिकता : लोग उन्हीं लोगों को पसंद करते हैं जो उनकी पसंद के बदले पारस्परिकता रखते हैं। यानी हम किसी व्यक्ति को पसंद करते हैं या नहीं, वह इस बात पर निर्भर करता है कि सामने वाला हमें पसंद करता है या नहीं। हर व्यक्ति उन लोगों से बचना चाहता है, जो उसके प्रति नकारात्मक धारणा रखता है। व्यक्ति उन्हीं लोगों को अपने साथ रखना चाहता है, जो उन्हें पसंद करते हैं।

टिप्पणी

रोमांटिक प्रेम : कई शोधकर्ता आकर्षण के एक विशेष रूप में रोमांटिक प्रेम की बात करते हैं। यह उन भावनाओं और संवेगों से जुड़ा है जो गहनता और दिशा में भिन्न होते हैं। रोमांटिक प्रेम के भी कई प्रकार हैं। शोधकर्ताओं ने प्रस्तावित किया है कि रोमांटिक प्रेम में दो प्रकार के प्रेम शामिल हैंः भावुक प्रेम और करुणामय प्रेम। ये दो तरह के प्यार एक साथ हो सकते हैं। हम किसी के प्रति भी भावुक हो जाते हैं और उसकी हर तरह की सहायता करने के लिए आतुर रहते हैं। वहीं हम किसी भी बच्चे को देखकर करुणामय हो जाते हैं। मां अपने बच्चे के प्रति काफी करुणामय रहती है। इसके अलावा, आवेशपूर्ण प्रेम और अनुकंपा प्रेम भी अहमियत रखते हैं। आवेशपूर्ण प्रेम में किसी अन्य व्यक्ति में लीन होना, यौन इच्छा, कोमलता और तीव्र भावना शामिल है। वहीं, अनुकंपा प्रेम में दूसरे व्यक्ति की गर्मजोशी, विश्वास और सहनशीलता शामिल है। अनुकंपा प्रेम को कभी–कभी दो घटक माना जाता है, अंतरंगता और प्रतिबद्धता। अंतरंगता एक रिश्ते को गर्म, करीबी, साझा करने वाला पहलू है। प्रतिबद्धता कठिनाइयों का सामना करते हुए भी रिश्ते को जारी रखने का इरादा है। शोधकर्ताओं का मानना है कि प्रतिबद्धता रिश्ते की स्थिरता का एक अच्छा भविष्यवक्ता है।

अनुलग्नक शैलियां : कुछ शोधकर्ता वयस्क संबंधों पर बचपन की लगाव शैलियों के प्रभाव का अध्ययन करते हैं। कई शोधकर्ताओं का मानना है कि वयस्कों के रूप में, लोग अपने भागीदारों से उसी तरह संबंधित होते हैं जैसे वे बचपन में अपने देखभाल करने वालों से संबंधित होते हैं। इसके अलावा, हम अपनी छुट्टियां अपने परिवार या मित्रों के साथ अन्तःक्रिया में लगते हैं और यह अनुलग्नक में बने रहने का अवसर प्रदान करती है। इसमें स्थायी संबंध के गुण और आवश्यकता भी दृष्टिगोचर होती है।

सम्बद्धता : व्यक्ति समाज में जीता है और बचपन से लकर बुजुर्ग होने तक वह कई लोगों के संपर्क में आता है। वह संपर्क चाहे पढ़ाई के क्रम में ही, नौकरी पाने के संघर्ष के क्रम में हो, नौकरी के दौरान हो या फिर सामाजिकता के तौर पर हो। कई संबंध की अवधि काफी छोटी होती है तो कई संबंध दीर्घकाल तक बने रहते हैं। कई संबंध आजीवन चलते हैं। उदाहरण के लिए मित्रता और विवाह आजीवन बने रहते हैं। संबंध कई प्रकार के होते हैं और उनमें आत्मीयता, वचनबद्धता और गुण की मात्रा में अंतर होता है। हालांकि कई मनोवैज्ञानिक संबंध अनुबंध मानते हैं।

सांस्कृतिक समानताएं और अंतर : रोमांटिक आकर्षण में संस्कृतियों के बीच समानताएं और अंतर दोनों हैं। शोधकर्ताओं ने पाया है कि कई अलग–अलग संस्कृतियों में लोग भागीदारों के बीच आपसी आकर्षण और दयालुता, बुद्धि, भावनात्मक स्थिरता, निर्भरता और भागीदारों के अच्छे स्वास्थ्य पर उच्च मूल्य रखते हैं। हालांकि, विभिन्न संस्कृतियों में लोग विवाह के भीतर रोमांटिक प्रेम पर एक अलग मूल्य रखते हैं। व्यक्तिवादी संस्कृतियों में लोग अक्सर मानते हैं कि रोमांटिक प्रेम विवाह के लिए एक शर्त है। कई सामूहिक संस्कृतियों में, लोग अक्सर परिवार के सदस्यों या तीसरे पक्ष के लिए विवाह की व्यवस्था करना स्वीकार्य मानते हैं।

विकासवादी दृष्टिकोण : विकासवादी मनोवैज्ञानिक अनुमान लगाते हैं कि शारीरिक रूप से आकर्षक लोगों के प्रति आकर्षित होने की प्रवृत्ति अनुकूली होती है। कई संस्कृतियां शारीरिक आकर्षण के विशेष पहलुओं को महत्व देती हैं, जैसे चेहरे की समरूपता और कमर से कूल्हे का छोटा अनुपात। विकासवादी मनोवैज्ञानिक बताते हैं कि चेहरे

की समरूपता अच्छे स्वास्थ्य का संकेतक हो सकती है, क्योंकि कई विकासात्मक असामान्यताएं चेहरे की विषमताएं पैदा करती हैं। एक छोटा कमर–से–कूल्हे का अनुपात, जो ''ऑवरग्लास'' का आंकड़ा पैदा करता है, उच्च प्रजनन क्षमता को इंगित करता है।

टिप्पणी

पुरुष अपने साथी की युवावस्था और शारीरिक आकर्षण में अधिक रुचि रखते हैं। विकासवादी मनोवैज्ञानिक सोचते हैं कि ऐसा इसलिए है क्योंकि इन विशेषताओं से संकेत मिलता है कि महिलाएं सफलतापूर्वक प्रजनन करने में सक्षम होंगी। दूसरी ओर, महिलाएं भागीदारों की सामाजिक स्थिति, धन और महत्वाकांक्षा को महत्व देती हैं, क्योंकि ये पुरुषों की विशेषताएं हैं जो सफलतापूर्वक संतान प्रदान कर सकते हैं।

1.3.3 संतुलन सिद्धांत

सामाजिक मनोवैज्ञानिक फ्रिट्ज हीडर ने संतुलन सिद्धांत को प्रतिपादित किया है जो दृष्टिकोण पर आधारित परिवर्तन की व्याख्या करता है। यह मनोवैज्ञानिक असमानता से संबंधित स्थितियों के बारे में बात करता है। इसके तहत माना जाता है कि भावना या पसंद करने वाले रिश्ते संतुलित होते हैं। हम ऐसे संबंध बनाते हैं जो हमारी पसंद और नापसंद को संतुलित करते हैं। उदाहरण के लिए आपके दो सबसे अच्छे दोस्त, जेनी और जिना लड़ रहे हैं। इससे आप असहज महसूस करते हैं। आपको ऐसा लगता है कि आप बीच में फंस गए हैं और आपको उन दो चीजों में से एक को चुनना है जिनकी आपको परवाह है। ऐसा लगता है कि आप मनोवैज्ञानिक असमानता वाली स्थिति के बीच में हैं। जैसे आप जेनी और जिना दोनों को पसंद करते हैं, जिससे वे एक–दूसरे के प्रति जो नापसंदगी महसूस कर रहे हैं, उससे निपटना आपके लिए मुश्किल हो जाता है।

पी–ओ–एक्स त्रिकोण

फ्रिट्ज हीडर ने संबंधों की जांच के लिए पी–ओ–एक्स त्रिकोण विकसित किया। इसमें त्रिभुज का प्रत्येक कोना एक अलग तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। पी, ओ, या एक्स। पी वह व्यक्ति है, जो आप हमारे उदाहरण में है। ओ दूसरा है, मान लीजिए कि यह जेनी है। यह जिना को एक्स, या त्रिभुज में तीसरे तत्व के रूप में छोड़ देता है।

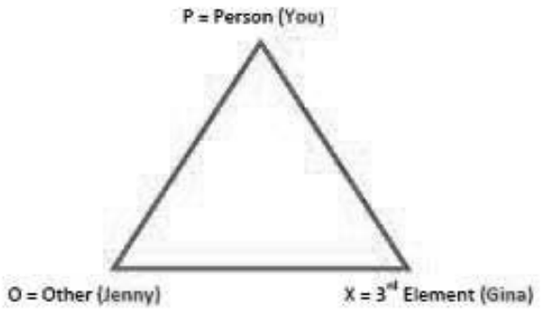

पी–ओ–एक्स त्रिकोण

इस त्रिकोणीय संबंध में दो प्रकार के संबंध गतिकी हो रहे हैं। सबसे पहले, इकाई संबंध हैं, या त्रिभुज के विभिन्न तत्व एक साथ कितने हैं। प्रत्येक तत्व के बीच

टिप्पणी

जितनी अधिक समानताएं होंगी मनोवैज्ञानिक संतुलन की संभावना उतनी ही अधिक होगी। हम लोगों के एक साथ होने के बारे में सोच सकते हैं, यदि वे एक ही परिवार के हैं, एक ही स्कूल में पढ़ते हैं, या कोई अन्य सामान्य बंधन रखते हैं। दूसरे प्रकार के संबंध भावनात्मक संबंध हैं, या हम किसी चीज के बारे में कैसा महसूस करते हैं। हीडर सभी भावनाओं को दो क्षेत्रों में से एक में वर्गीकृत करता हैः पसंद या नापसंद।

ज्यादातर स्थितियों में, यदि एक सकारात्मक इकाई संबंध मौजूद है, तो एक सकारात्मक भावना संबंध भी मौजूद होगा। इसी तरह, नकारात्मक इकाई संबंध और नकारात्मक भावना संबंध एक साथ चलते हैं।

संतुलित स्थिति

आपके दो सबसे अच्छे दोस्त लड़ने से पहले, आप सभी वास्तव में अच्छे दोस्त थे। आपके और जेनी के बीच सकारात्मक संबंध थे। आपके और जिना के बीच सकारात्मक संबंध थे। जेनी और जिना के बीच भी सकारात्मक संबंध थे। तीन सकारात्मक संबंधों का परिणाम एक संतुलित स्थिति या मनोवैज्ञानिक रूप से आरामदायक स्थिति में होता है।

आइए त्रिकोण में सकारात्मक और नकारात्मक संबंधों को गणित के समीकरण के रूप में सोचें जब आप तीन सकारात्मक संबंधों को गुणा करते हैं, तो परिणाम भी सकारात्मक होगा।

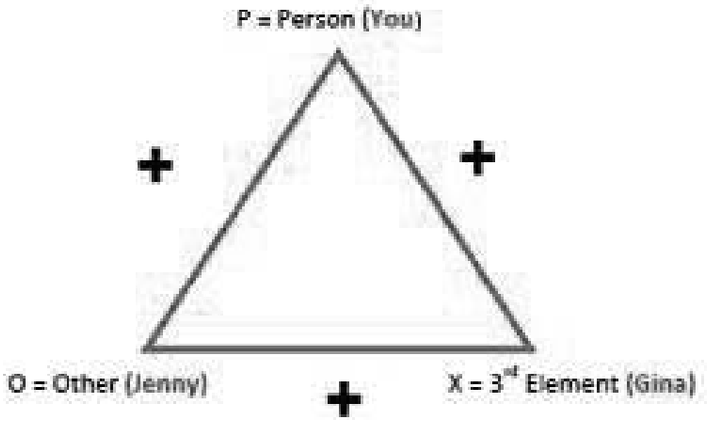

संतुलित पी–ओ–एक्स त्रिकोण, जिसमें तीन सकारात्मक संबंध हैं

हमारे पास एक संतुलित स्थिति भी होती है जब एक सकारात्मक संबंध के साथ दो नकारात्मक संबंध होते हैं। एक उदाहरण यह होगा कि आप जेनी के साथ सकारात्मक संबंध रखते हैं और जिना के साथ नकारात्मक संबंध रखते हैं। यदि जेनी का भी जिना के साथ नकारात्मक संबंध है, तो मनोवैज्ञानिक संतुलन होता है क्योंकि त्रिकोण में संबंध एक दूसरे के साथ संघर्ष नहीं करते हैं।

फिर से, त्रिकोण में सकारात्मक और नकारात्मक को गणित के समीकरण के रूप में सोचें। जब आप दो नकारात्मक गुणा करते हैं तो वे सकारात्मक हो जाते हैं। यदि आप इस सकारात्मक को दूसरे सकारात्मक से गुणा करते हैं, तो परिणाम सकारात्मक होता है। इस विचार का उपयोग करके, हम देख सकते हैं कि आप जेनी के साथ

टिप्पणी

एक नकारात्मक संबंध और जिना के साथ एक सकारात्मक संबंध भी बना सकते हैं और संतुलन प्राप्त कर सकते हैं जब तक कि जेनी और जिना के बीच समीकरण को संतुलित करने के लिए एक नकारात्मक संबंध मौजूद है।

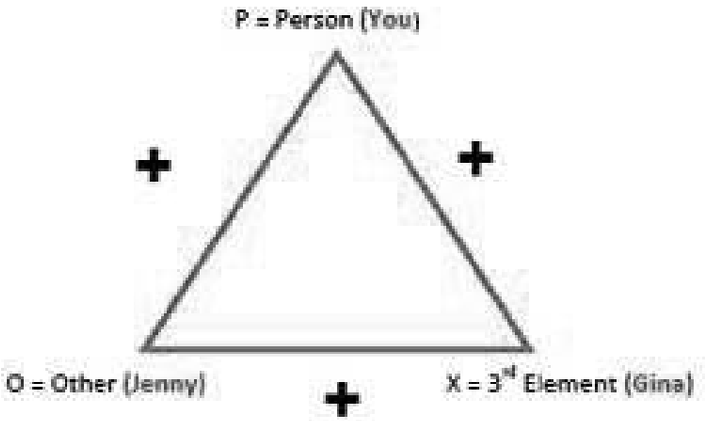

संतुलित पी–ओ–एक्स त्रिकोण, जिसमें दो नकारात्मक संबंध और एक सकारात्मक संबंध हैं

ये उस प्रकार की स्थितियां हैं जिन्हें हम प्राप्त करना चाहते हैं और जिन्हें हम पूरा करने का प्रयास कर रहे हैं। जब हम संतुलित अवस्था में सहज होते हैं, तो हमें कोई परेशानी नहीं होती है, और हमें अपने रिश्तों में बदलाव की कोई आवश्यकता नहीं होती है।

असंतुलित स्थिति

अपने मूल उदाहरण को याद रखें जिसमें आपके दो दोस्त लड़ रहे हैं। आपके और जेनी के बीच सकारात्मक संबंध होते हैं। या दोनों के बीच होते हैं। आपके और जिना के बीच भी सकारात्मक संबंध होते हैं। हालांकि जेनी और जिना के बीच नकारात्मक संबंध होते हैं और वे दोनों एक–दसरे को पसंद नहीं करते हैं। दो सकारात्मक संबंध और एक नकारात्मक संबंध परिणाम की असंतुलित स्थिति पैदा करते हैं या मनोवैज्ञानिक असंतुलन पैदा करते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. सामाजिक आकर्षण कितने प्रकार का होता है?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) छह

4. किस सिद्धांत के अनुसार लोग समानता के नहीं बल्कि पूरक द्वारा अपने साथी चुनते हैं?

   (क) समानता का सिद्धांत (ख) अनुक्रमिक फिल्टरिंग का सिद्धांत

   (ग) संपूरकता का सिद्धांत (घ) भूमिका–मूल्य सिद्धांत

1.4 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति, विश्लेषण एवं ओपिनियन लीडर व सूचना प्रवाह का व्यक्तिगत प्रभाव

टिप्पणी

आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान का उद्‌भव 19वीं सदी में हुआ। सामाजिक मनोविज्ञान के मानसिक विकास पर आधारित पहली उल्लेखनीय पुस्तक 'सोशल एंड एथीकल इंटरप्रिटेशन इन मेंटल डेवलपमेंट' न्यूयार्क में सन 1987 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक के लेखक जाने–माने समाजशास्त्री जेम्स मार्क बोल्डबिन थे। इससे पहले सन 1908 में विलियम मैकडोगल और एडवर्ड ए. रास सामाजिक मनोविज्ञान को एक अलग वैज्ञानिक विषय घोषित कर चुके थे। इसी वर्ष सामाजिक मनोविज्ञान पर दो पुस्तकों का प्रकाशन हुआ था– एक थी विलियम मैकडोगल की पुस्तक "एन इंट्रोडक्शन टू सोशल साइकोलॉजी" तथा दूसरी थी एडवर्ड ए. रास की "सोशल साइकोलॉजी"।

19वीं शताब्दी में प्राकृतिक विज्ञान के अस्तित्व में आने के साथ ही वैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर मानव व्यवहार का अध्ययन शुरू हो गया। अगस्ट कॉम्टे का कहना था कि वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से समाज का अध्ययन किया जा सकता है। विभिन्न घटनाओं के बीच तर्कसंगत संबंधों को गहराई से समझने से आगे की घटनाओं का अनुमान भी लगाया जा सकता है। मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि यदि सामाजिक विज्ञानी किसी समाज में प्रचलित नियमों और कानूनों को अच्छी तरह समझ ले तो उस समाज की बेहतरी के लिए वह कारगर योजना बनाने और उन्हें अमली जामा पहनाने में मदद कर सकता है।

किसी समाज के बारे में जानकारी एकत्रित करने और व्यक्तियों की समाज में हैसियत पता लगाने के प्रयासों द्वारा प्रमाणों और अनुवीक्षण कर वहां के लोगों की मानसिकता का पता लगाया जा सकता है। आरंभिक दौर और बाद के समय के मनोवैज्ञानिकों के विचारों ने समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान का ढांचा तैयार करने में विशेष रूप से मदद की है। गौरतलब है कि जॉर्ज सिम्मल, हार्टन कूली और इरफिन गोफमान ने समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान की रूपरेखा तैयार की।

1.4.1 सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति

मानव की सामाजिक प्रकृति और उसके कारण के बीच के अंतर्संबंध के अध्ययन के संबंध को सामाजिक मनोविज्ञान कहा जाता है। समाज विज्ञानी जी. डब्ल्यू. आलपोर्ट (1954) के अनुसार, व्यक्ति के वास्तविक, काल्पनिक और दूसरे के प्रभावों से उत्पन्न विचार, भाव और व्यवहार सामाजिक मनोविज्ञान कहलाते हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जो व्यक्ति के मन पर पड़े सामाजिक प्रभावों का गहराई तक जाकर उद्‌घाटन करता है। बैरन और बयर्ने (2007) के मुताबिक, सामाजिक मनोविज्ञान वह क्षेत्र है, जो मनुष्य के व्यवहार की प्रकृति तथा उसके कारणों को समझने का प्रयास करता है।

सामाजिक मनोविज्ञान के सन्दर्भ में मनुष्यों के विचारों, भावनाओं तथा व्यवहारों

का सिलसिलेवार अध्ययन है।

सामाजिक मनोविज्ञान का मुख्य विषय सामाजिक सन्दर्भ में मनुष्य का अध्ययन है यानी मन, चेतना और समाज तीनों सामाजिक मनोविज्ञान के अंतर्गत आते हैं।

टिप्पणी

सामाजिक मनोविज्ञान को दो भागों में बांटा जा सकता है– समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान और मनोविज्ञानपरक सामाजिक मनोविज्ञान। हालांकि इन दोनों के बीच अंतर कर पाना कठिन है। क्योंकि सामाजिक मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और मनोविज्ञान से निकला है।

थोइट्स के मुताबिक, सूचना अपने मूल रूप में या मानसिक निरूपण के रूप में एकत्रित होती है। यह संकेतों से, स्मृतियों से, किसी निश्चय पर पहुंचने की कोशिश से, अपने या दूसरों के बारे में सोचते–जानने से और अधिक प्रभावशाली बन जाती है। यह चिंतन सामाजिक सन्दर्भ से उत्पन्न होता है और पारस्परिक व्यवहार के रूप में प्रकट होता है। समाजशास्त्रीय सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्यों की समग्र मानसिक अवस्था, वर्गीय मनोविज्ञान और सामूहिक मानसिकता के तत्व जैसे रीति–रिवाज, नैतिक मूल्य और परम्पराएं आदि को केन्द्रित करके कार्य करता है।

सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के मन तथा उसमें पैदा होने वाले विचारों का भी अध्ययन करता है। व्यक्ति चाहे समूह में हो या एकल हो, मानसिक स्थिति से पैदा हुए मानव–व्यवहार के बारे में गहरी जानकारी प्राप्त करना, सामाजिक मनोविज्ञान का प्रमुख कार्य है। मनुष्य चाहे बड़े समूह में रह रहा हो या छोटे समूह में, उनके आपसी संबंधों और उनसे उपजे व्यवहारों का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान के अंतर्गत आता है।

डलमेटर (1995) के अनुसार, सामाजिक मनोविज्ञान के तहत, एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर प्रभाव, मानव समूह का उसके सदस्य पर प्रभाव, व्यक्तियों के उनके समूह पर प्रभाव, एक व्यक्ति समूह का दूसरे व्यक्ति समूह पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक परिवेश और व्यक्ति दोनों एक–दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं। यही कारण है कि सामाजिक मनोविज्ञान, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों की समग्रता के साथ व्याख्या करने का प्रयास करता है।

किसी देश अथवा समाज की संस्कृति यह तय करती है कि उस देश या समाज के लोग अपने विचारों और अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति किस प्रकार करते हैं। यही कारण है कि एक समाज में रहने वाले लोगों के सोचने का तरीका एक–समान होता है।

समाजशास्त्रीय मनोविज्ञान के अनुसंधान और अध्ययन के निम्न केन्द्रीय विषय हैं–

(i) जीवन की समग्र व्याख्या,

(ii) समाजीकरण,

(iii) सामाजिक संपर्क सूत्र,

(iv) सामूहिक गतिशीलता,

(v) रूढ़िवाद,

(vi) सामाजिक पतन और

(vii) सामाजिक स्तरण।

टिप्पणी

सामाजिक मनोविज्ञान से जुड़े लोग संकल्पना और अभिव्यक्ति के आधार पर अपने अनुसंधान और सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हैं। जहां तक सामाजिक संकल्पना की बात है तो हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी कई चीजों से प्रभावित होती है। इनमें पारिवारिक मूल्य और मान्यताएं प्रमुख हैं। जिनका निर्माण सामाजिक प्रभाव करते हैं।

सी. राइट. मिल्स (1959) के अनुसार, इतिहास एवं सामाजिक संरचना के सन्दर्भ में अपना तथा दूसरों का अतीत समाजशास्त्रीय संकल्पना कहलाता है। इसके तहत जीवन को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक, ढांचागत और ऐतिहासिक कारकों का भलीभांति अध्ययन आवश्यक है। मनुष्य और उसके समाज का अध्ययन करके तथा प्रभावित करने वाले कारकों का पता लगाने के बाद किसी व्यक्ति की सोच, उसका व्यवहार और उसके सांस्कृतिक स्तर का पता लगाया जा सकता है।

सामाजिक मान्यताएं मनुष्य के व्यवहार की दिशा बदलती हैं और उसकी दशा को भी दर्शाती हैं। मनुष्य का व्यवहार उसकी आचार संहिता से प्रभावित होता है। मूल्यों का मनुष्यों के आदर्शों और विश्वासों से गहरा संबंध होता है। मूल्य मनुष्य के आदर्शों की संरचना करते हैं तथा सामाजिक स्तर व सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप उन्हें ढालने का काम करते हैं। हर समाज की अपनी एक संस्कृति होती है, जो उसकी पहचान बन जाती है। भाषा, प्रतीक, मूल्य, विश्वास, मान्यताएं, रहन–सहन की शैली व साजो–सामान आदि सब मिलकर किसी समाज की संस्कृति को एक विशेष रूप प्रदान करते हैं।

व्यवहार पद्धतियां ही वे भूमिकाएं हैं, जो सामाजिक स्तर का प्रतिनिधित्व करती हैं। इन पद्धतियों के कारण लोग समाज में एक–दूसरे के नजदीक आते हैं। भूमिकाएं व्यक्ति के सामाजिक स्तर का प्रतिनिधित्व करती हैं। हर व्यक्ति पुत्र, पुत्री, भाई–बहन, पति–पत्नी, माता–पिता, शिक्षक, विद्यार्थी, पड़ोसी, संबंधी आदि की भूमिका में होते हैं। जब हम स्तर की बात करते हैं तो दायित्वबोध, लाभ, प्रतिष्ठा आदि कई संबंधित घटक भी उसमें आ जाते हैं, जिनका अनुभव कोई व्यक्ति समाज में अपने पद पर रहते हुए करता है।

समाजीकरण वह प्रक्रिया है, जो जन्म लेते ही व्यक्ति के जीवन में प्रारंभ हो जाती है। इस कारण, नवजात शिशु उन सभी सामाजिक मान्यताओं, व्यवहार पद्धतियों, आस्थाओं, जीवन–मूल्यों, जीवन–स्तर आदि का अनुभव करना प्रारंभ कर देता है। यह समाज विशेष में रहने के लिए आवश्यक होता है और यह प्रक्रिया जीवन भर चलती है। समाजीकरण व्यक्तियों को सामाजिक हित के अनेक कार्यों को संपन्न करने की योग्यता और क्षमता प्रदान करता है। इनमें सबसे जरूरी है सामाजिक समरसता बनाए रखने तथा सामाजिक व्यवस्था दुरुस्त रखने की समझ व क्षमता।

टिप्पणी

सामाजिक मनोविज्ञान के तीन परिप्रेक्ष्य हैं–

परिप्रेक्ष्य	समाज में व्यक्ति की भूमिका की स्थिति	अध्ययन क्षेत्र
सांकेतिक आदान–प्रदान	सामाजिक निर्माण की भूमिका में व्यक्ति सक्रिय रहा।	सार्थकता निर्माण प्रक्रिया।
सामाजिक ढांचा एवं व्यक्तित्व	आदान–प्रदान की प्रकृति लोगों की भूमिका पर आधारित।	यह पता लगाना कि बड़े सामाजिक ढांचे व्यक्तियों पर किस प्रकार का प्रभाव डालते हैं।
सामूहिक पद्धतियां	जब लोग सामाजिक समूहों का निर्माण करते हैं, तो उनके बीच होने वाले आदान–प्रदान से कुछ आधारभूत पद्धतियां उत्पन्न होती हैं।	सामूहिक सन्दर्भ में उत्पन्न होने वाली पद्धतियां।

स्रोतः रोहिल, मिल्की और लुकास (2011–13)

1.4.2 विश्लेषण के प्रकार

मनोविज्ञान में विश्लेषण के जरिये व्यक्तियों या समूहों के अनुभवों और व्यवहारों को जानने का कार्य किया जाता है। इसके जरिये हम अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी की कई कठिनाइयों से निजात पाते हैं। मनोवैज्ञानिक व्यवस्थित और अनुभवजन्य दोनों तरह से जांच करने और उसका विश्लेषण करने के बाद दो तरह से कार्य करते हैं, पहला, विचार बनाते हैं और दूसरा–उसका परीक्षण करते हैं।

मनोवैज्ञानिक शोध के तीन मुख्य प्रकार हैंः–

(i) सहसंबंध शोध

(ii) वर्णनात्मक शोध

(iii) प्रायोगिक शोध

सहसंबंध शोध

सहसंबंध शोध एक प्रकार की गैर–प्रयोगात्मक शोध पद्धति है जिसमें एक शोधकर्ता दो चरों को मापता है, उनके बीच सांख्यिकीय संबंध को समझता है और उसका आकलन करता है। वह किसी बाहरी चर से प्रभावित होता है। इसमें भी सम्यक तथ्यपूर्ण मूल्यांकन किया जाता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि इसके द्वारा अध्ययन किए जाने वाले चर प्राकृतिक रूप में होते हैं और उसका उसी रूप में माप लिया जाता है।

सहसंबंध शोध में चरों के बीच कार्यात्मक संबंध का संहित होना, इसकी विशेषता है। सह–संबंधात्मक शोध में यदि दो चरों के बीच उच्च सह–संबंध पाया जाता है तो हम दावे के साथ कह सकते हैं कि चर 'क' ने चर 'ख' को प्रभावित किया। इसके उलट चर 'ख' भी कह सकता है कि चर 'क' को प्रभावित किया।

वर्णनात्मक शोध

वर्णनात्मक शोध को एक शोध पद्धति के रूप में परिभाषित किया जाता है जो अध्ययन की गई जनसंख्या या घटना की विशेषताओं का वर्णन करती है। यह पद्धति शोध विषय के ''क्यों'' की तुलना में शोध विषय के ''क्या'' पर अधिक ध्यान केंद्रित करती है।

टिप्पणी

प्रायोगिक शोध

प्रायोगिक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें शोधकर्ता नियंत्रित परिस्थिति में विशेष चर या चरों में जोड़–तोड़ करता है। प्रायोगिक शोध दो प्रकार के चरों का उपयोग करके एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ किया गया शोध है। पहला सेट एक स्थिरांक के रूप में कार्य करता है, जिसका उपयोग आप दूसरे सेट के अंतर को मापने के लिए करते हैं। निरीक्षण के लिए शोधकर्ता आवश्यकतानुसार विशिष्ट प्रकार के यंत्रों एवं सामग्रियों का भी उपयोग करता है और इस तरह से प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण कर प्रामाणिक परिणाम प्राप्त करता है। इसके आधार पर वह व्यक्ति के व्यवहारों से संबंधित नियमों और सिद्धांतों की स्थापना और व्याख्या करता है।

प्रायोगिक शोध क्रमबद्ध होता है। उसमें प्रयोग का शीर्षक, साहित्य का सर्वे, समस्या को निश्चत करना, उपकल्पना तैयार करना, चरों को परिभाषित करना, उपकरण, चरों को नियंत्रित करना, डिजाइन तैयार करना, प्रयोगात्मक कार्यविधि का उल्लेख करना, साक्ष्य रिपोर्ट तैयार करना, सख्या रिपोर्ट के आधार पर उपल्पना के बारे में अनुमान लगाना, परिणाम का सामान्यीकरण करना होता है।

उदाहरण के लिए, मात्रात्मक शोध विधियां प्रयोगात्मक हैं।

1.4.3 ओपिनियन लीडर और सूचना का प्रवाह

आधुनिक युग में ओपिनियन लीडर के बारे में लोगों की रूचि बढ़ गई है क्योंकि उनके अनुयायी एक इशारे पर समाज में परिवर्तन करने की ताकत रखते हैं। लोगों की दिलचस्पी इस बात में अधिक है कि आखिर वे क्या कारण हैं कि ओपिनियन लीडर का व्यक्तित्व लोगों के विचार बदलने की क्षमता रखता है। दशकों से यह भी देखा जाता है कि लोगों का एक समूह या कोई खास समुदाय विभिन्न मामलों में एक विचार प्रकट करते हैं और समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। सामान्य तौर पर ओपिनियन लीडर समाज का नेतृत्व करता है।

ओपिनियन लीडर के बारे में अध्ययन करने की शुरुआत 1944 ई. में हुई, जब द्विचरणीय संचार–प्रवाह प्रारूप का विकास हुआ। अमेरिकी सामाजिक वैज्ञानिक पॉल लेजर्स फील्ड और उनेक साथियों ने पुस्तक "द पीपुल्स चॉइस : हाउ द वोटर मेक्स अप हिज माइंड इन ए प्रेसिडेंसियल कैंपेन" में इस प्रारूप की चर्चा की. उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि संचार–माध्यमों द्वारा प्रेषित सूचना–प्रक्रिया सामाजिक व्यवस्था में प्रभाव का एक भाग है। उन्होंने पाया कि आमने–सामने संपर्क द्वारा प्रसारित सूचना और भी प्रभावी है। आमने–सामने संपर्क द्वारा सूचना के प्रेषण में ओपिनियन लीडर की भूमिका प्रमुख है। कम विकसित क्षेत्रों में सूचना का प्रवाह ओपिनियन लीडर अपने अनुकारकों के द्वारा करते हैं। द्विचरणीय संचार प्रारूप संचार माध्यम एवं अंतर्वैयक्तिक संचार–प्रक्रिया से संपन्न होता है। उनके मुताबिक, अधिकतर लोग अपनी राय ओपिनियन

टिप्पणी

लीडर के प्रभाव में आकर बनाते हैं, जो कि मूलरूप से मीडिया से प्रभावित होते हैं। यह प्रारूप पुराने वन स्टेप फ्लो ऑफ कम्युनिकेशन मॉडल के विपरीत इस बात पर जोर देता था कि संचार–प्रक्रिया के पहले चरण में जानकारी मीडिया से अभिमत नेताओं तक पहुंचती है और फिर दूसरे चरण में अभिमत नेताओं से समाज के लोगों तक। ओपिनियन लीडर का संचार की प्रक्रिया में अहम् योगदान होता है।

ओपिनियन लीडर की परिभाषा

वह व्यक्ति, जिसका अपने आस–पास के लोगों पर बहुत अधिक प्रभाव हो अर्थात सोच और विचारों से समाज–जीवन प्रभावित हों, ओपिनियन लीडर कहलाता है।

ओपिनियन लीडर वास्तव में दोस्तों, पारिवार के सदस्यों और पड़ोसियों के समूह के बीच वह व्यक्ति होता है, जो अलिखित रूप में लोगों को नेतृत्व प्रदान करता है। वह व्यक्ति किसी संसद का सदस्य नहीं होता है, कोई स्थानीय राजनेता नहीं होता है, बल्कि वह समाज में परदे के पीछे कार्य करता है। वह हरेक व्यक्ति से व्यक्तिगत तौर पर अनौपचारिक तौर पर जुड़ा होता है। वह लोगों से हर रोज मिलता है। ओपिनियन लीडर का संचार जबरदस्त होता है, वह सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। सामान्य तौर पर वह किसी उत्पाद, किसी के व्यवहार आदि के बारे में अपनी राय व्यक्त करता है। ऐसे में ओपिनियन लीडर एक अनुसंधानकर्ता होता है।

ओपिनियन लीडर के गुण

ओपिनियन लीडर के कुछ खास गुण होते हैं, वे हैं–

(क) विशेषज्ञ : ओपिनियन लीडर को विषय विशेषज्ञ के तौर पर देखा जाता है, क्योंकि वे विषय का गहन अध्ययन और मनन करते हैं। वे किसी भी मामले के तमाम पक्षों को उजागर करने में सक्षम होते हैं। वे तकनीकी तौर पर भी दक्ष होते हैं।

(ख) ज्ञान : ओपिनियन लीडर की ताकत उसका ज्ञान होता है। वे निष्पक्ष तरीके से विषय या मामले की जानकारी का मूल्यांकन और संश्लेषण करते हैं। ज्ञान के कारण समाज में वे प्रतिष्ठित होते हैं और उनकी सामाजिक ताकत काफी अधिक होती है।

(ग) अनुभव : ओपिनियन लीडर का अनुभव काफी व्यापक होता है। वे अनुभव के आधार पर मामले की जानकारी के सभी पक्षों के बारे में लोगों को बताते हैं। संचार में वे कुशल होते हैं और इससे लोग उनकी बातों पर विश्वास करते हैं।

(घ) सन्दर्भ शक्ति : ओपिनियन लीडर के पास सन्दर्भ शक्ति जबरदस्त होती है। चूंकि वे शिक्षित होते हैं, उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा होती है और उसकी राय पर लोग विश्वास करते हैं, इस कारण वे कोई भी बात लोगों के सामने करने से पहले विभिन्न लोगों के विचार, पुस्तक आदि का अध्ययन करते हैं और उनका सन्दर्भ अपनी बातों में देते हैं।

कौन होते हैं ओपिनियन लीडर

(i) ओपिनियन लीडर प्रत्येक व्यक्ति के सामाजिक जीवन में होते हैं और एक तरह के सामाजिक स्तर के लोगों की निर्णायक क्षमता को प्रभावित करते हैं।

(ii) ओपिनियन लीडर सभी तरह की नौकरियों में, सभी तरह के सामाजिक समुदायों में और सभी तरह के उम्र के लोगों में यहां तक कि पुरुष और महिलाओं में भी पाए जाते हैं।

टिप्पणी

(iii) ओपिनियन लीडर विभिन्न सामाजिक गतिविधियों, सामाजिक संगठनों में शामिल होते हैं और अपने व्यक्तिगत संपर्क के जरिये केन्द्रीय भूमिका निभाते हैं। ओपिनियन लीडर कोई भी राजनेता, प्रभावशाली व्यापारी, किसी भी समुदाय का प्रतिनिधि, पत्रकार, फिल्मी हस्ती, शिक्षक सेलिब्रिटी आदि हो सकता है।

(iv) ओपिनियन लीडर अपने क्षेत्र के विशेषज्ञ होते हैं और वे अपने नजदीक के मित्रों, संबंधियों, सहयोगियों, कनिष्ठ मित्रों के द्वारा अनौपचारिक मान्यता प्राप्त किये होते हैं।

(v) ओपिनियन लीडर किसी भी आम व्यक्ति की तुलना में मीडिया के संपर्क में अधिक रहते हैं। मीडिया और आम लोगों के मध्य होने के कारण ये ओपिनियन लीडर मीडिया के सबसे अधिक सक्रिय उपभोक्ता होते हैं, जो कि मीडिया द्वारा दी गई जानकारी की व्याख्या करके उसे आम लोगों तक पहुंचाते हैं।

(vi) ओपिनियन लीडर अपने प्रभाव वाले क्षेत्र में अधिक रूचि लेते हैं, लोगों से घुलते–मिलते हैं और हर गतिविधियों से रूबरू होते हैं।

(vii) ओपिनियन लीडर इस बात से वाकिफ होते हैं कि वे सूचनाओं के स्रोत हैं और वे दूसरों के विचारों को प्रभावित करते हैं।

इलीहू कत्ज (1957) ने ओपिनियन लीडर को तीन प्रकार में श्रेणीबद्ध किया है–

(i) वह व्यक्ति ओपिनियन लीडर है जिसके कुछ सामाजिक मूल्य हैं और वह उन मूल्यों को पहचानता है, जो समाज को प्रभावित करते हैं।

(ii) वह व्यक्ति ओपिनियन लीडर है जिसे सामाजिक और राजनीतिक नेतृत्व की क्षमता का ज्ञान होता है।

(iii) वह व्यक्ति ओपिनियन लीडर है जिसे पता होता है कि सामाजिक स्तर पर राजनीतिक स्थान कैसे बनाया जाए।

प्रभावित करने वाले कारक

ओपिनियन लीडर की पहचान करना किसी भी समाज के लिए आवश्यक होता है। ओपिनियन लीडर को प्रभावित करने वाले कारक हैं–

पदः समुदाय में जो व्यक्ति किसी पद के लिए निर्वाचित या नियुक्त होता है, उसे ओपिनियन लीडर माना जाता है। उदाहरण के लिए स्कूल के प्रिंसिपल, स्थानीय पार्षद, जिला पार्षद, विधायक आदि। इस तरह के लोगों को ओपिनियन लीडर मानना आसान है लेकिन अकसर उनकी बातें सही नहीं होतीं क्योंकि लोग अकसर मान लेते हैं कि वह निर्वाचित नेता है तो वह जो कह रहा है, वह सही ही है। इस तरह के ओपिनियन लीडर को लोग व्यक्तिगत तौर पर सम्मान देने के बजाय उसके पद को सम्मान देते हैं।

टिप्पणी

प्रतिष्ठा : प्रतिष्ठा व्यक्ति के व्यक्तित्व और दृष्टिकोण पर निर्भर करती है। यह निर्वाचन को भी प्रवाहित करती है। यही कारण है कि अकसर लोग किसी खास मुद्दे पर पांच या दस लोगों से सलाह लेते हैं। प्रतिष्ठा दृष्टिकोण को भी प्रभावित करती है क्योंकि ओपिनियन लीडर भी समुदाय में उपस्थित विभिन्न स्रोतों से सूचनाएं इकट्ठा करता है।

स्वःनामित : कोई भी व्यक्ति अपनी पहचान खुद बनाता है। वह लोगों के संपर्क में होता है और लोगों को सोचने–समझने की कोशिश करता है। समाज और समुदाय की नब्ज जानने के कारण वह अधिक प्रभावशाली होता है। इसके कारण कभी–कभी नुकसान भी होता है क्योंकि विचारों के प्रभाव का अधिक या कम अनुमान व्यक्ति को प्रभावित करता है।

सोशियोमीट्रिक : इस प्रक्रिया के द्वारा समूह के सदस्यों के बीच संचार के पैटर्न की जांच की जाती है। क्रमबद्ध तरीके से लोगों के साथ घुलने–मिलने की प्रक्रिया का निरीक्षण किया जाता है। इस प्रक्रिया में आंकड़ों को साक्षात्कार के जरिये इकट्ठा किया जाता है और पता किया जाता है कि किसी भी तरह की सलाह लेने और दिशा–निर्देशत प्राप्त करने के लिए वे किसके पास जाएंगे। ओपिनियन लीडर के लिए यह प्रक्रिया बहुत नजदीकी मित्रों आदि पर लागू होती है। उदाहरण के लिए कौन–सा अस्पताल इलाज के लिए अच्छा है, कौन–सा डॉक्टर सही इलाज करता है आदि। ऐसे मामलों में उन ओपिनियन लीडर की पहचान की जाती है जो संबंधित विषय या इलाके में बेहतर संचार करने के साथ–साथ ज्ञान रखते हैं।

अवलोकन : आंकड़ों को इकट्ठा करने का एक और तरीका होता है– सामाजिक क्रियाओं का अवलोकन करना। यह किसी भी ओपिनियन लीडर के लिए महत्वपूर्ण होता है। इसके जरिये वह लोगों की भावनाओं और रायशुमारी से अवगत होता है। हालांकि इस कार्य में काफी अधिक समय लगता है, लेकिन यह काफी सटीक माना जाता है।

मुख्य स्रोत : इसके जरिए ओपिनियन लीडर समुदाय के खास लोगों की पहचान करता है और फिर उनमें प्रभावशाली लोगों की पहचान करता है। इसके बाद उनसे अच्छे संबंध बनाता है। ये लोग उनके लिए मुखबिरी का कार्य ओपिनियन लीडर के लिए करते हैं। ये वे लोग होते हैं जिनमें लोगों की राय पहचानने की क्षमता होती है।

1.4.4 व्यक्तिगत प्रभाव का महत्व

व्यक्तिगत प्रभाव सिद्धांत को संचार का द्विचरणीय प्रवाह सिद्धांत कहा जाता है। पॉल लेजर्सफील्ड और उनके साथियों ने अपने अध्ययन में पाया कि कोई भी मतदाता सीधे तौर पर जनमाध्यम से प्रभावित नहीं होता है। मतदाता पर आपसी संबंध और अंतरवैयक्तिक संचार का अधिक प्रभाव पड़ता है। उन्होंने एक सिद्धांत को भी प्रतिपादित किया जिसे व्यक्तिगत प्रभाव सिद्धांत कहा जाता है। व्यक्तिगत प्रभाव सिद्धांत के अनुसार, समाज में जनमाध्यमों की अपेक्षा व्यक्तिगत संचार अधिक प्रभावशाली है। प्रभावी संचार के लिए संचारक और प्रापक का एक–दूसरे के करीब होना बेहद जरुरी है। लोगों पर जनमाध्यम के प्रभाव की अपेक्षा जन सम्प्रेषण का प्रभाव अधिक पड़ता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सूचना का प्रवाह कई चरणों में होता है।

टिप्पणी

संचार का द्विचरणीय प्रवाह सिद्धांत

संचार का द्विचरणीय प्रवाह सिद्धांत को इलिहू काट्ज और पाल लेजर्सफील्ड ने वर्ष 1955 में लोगों के सामने रखा। दोनों ने बताया कि किसी भी सन्देश के प्रसार एवं प्रभाव का निर्धारण एवं सन्देश के लिए लोगों के मतों के निर्माण में जनमत नेता यानी ओपिनियन लीडर की भूमिका अहम् होती है। ओपिनियन लीडर जनमाध्यम और जनता के बीच एक पुल की तरह काम करता है। ओपिनियन लीडर के तहत शिक्षक, डॉक्टर, सामाजिक कार्यकर्ता, प्रभावशाली स्थानीय व्यक्ति आदि होते हैं। उदाहरण के तौर पर हम देखते हैं कि जब कोरोना फैला तो सरकार ने जनमाध्यमों के द्वारा सफाई और सिनेटाइज करने के लिए प्रचार–प्रसार का अभियान चलाया, मास्क पहनने की अपील की, लेकिन इसका असर उतना नहीं हुआ लेकिन जब प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने लोगों से अपील की तो उसका व्यापक असर हुआ। मुख्यमंत्री, अभिनेता और स्थानीय नेताओं ने भी लोगों से मास्क पहनने, साफ–सफाई रखने की अपील की, तो इसका व्यापक असर पड़ा।

लोग एक–दूसरे को लगातार प्रभावित करते हैं। वे एक–दूसरे को कई रूपों में भी प्रभावित करते हैं। सम्प्रेषण के द्विचरणीय प्रवाह सिद्धांत में ओपिनियन लीडर की अवधारणा और उसके महत्त्व को अधिक स्थान दिया गया है और दूसरा इस सिद्धांत में व्यक्तिगत सामाजिक दृष्टि स्पष्ट है।

संचार का बहुचरणीय प्रवाह सिद्धांत

संचार के इस सिद्धांत को सबसे पहले इबर्ट एम. रोजर ने प्रतिपादित किया। इन्होंने इस सिद्धांत के लिए एक प्रतिरूप को प्रस्तुत किया था। यह सिद्धांत इस आधार पर विकसित है कि संचार प्रवाह अनेक चरणों से होता है। जैसे कोई सन्देश यदि किसी को प्राप्त हुआ और उस संदेश को दूसरे को प्रेषित किया, दूसरे व्यक्ति ने फिर उसे अपनी पत्नी, बच्चों एवं अन्य लोगों को सम्प्रेषित किया। इस प्रकार जनसंचार से प्राप्त सूचना अंतरवैयक्तिक संप्रेषण द्वारा समाज में प्रवाहित होती है। इस सिद्धांत के पूर्व काफी अरसे तक द्विचरणीय संचार प्रक्रिया ही व्याप्त थी, परन्तु इसमें कई कमियां थीं क्योंकि यह चरणों की तरफ संकेत नहीं करता था। वर्तमान दौर में जन सम्प्रेषण प्रक्रिया में बहुचरणीय संचार प्रवाह की पुष्टि होती है और यह प्रक्रिया अधिक प्रभावी है।

रोजर ईवा शूमेकर ने बताया कि जन सम्प्रेषण में संप्रेषक श्रोता से भिन्न व्यवहार वाला होता है। संप्रेषक तभी श्रोता को प्रभावित कर सकता है जब तक उसकी चिंतन प्रक्रिया समान हो। इसमें प्रत्यक्ष और परोक्ष श्रोता तथा संप्रेषक संचार को प्रवाहित करता है। इस प्रकार सूचना प्रवाह में एक ऐसी भी स्थिति आती है जब वास्तविक प्रथम श्रोता की पुष्टि नहीं हो पाती है।

इसके अलावा भी, व्यक्तिगत प्रभाव विभिन्न मामलों में देखने को मिलता है, वे हैं–

सामाजिक प्रभाव रणनीतियां

एक सामाजिक प्रभाव रणनीति घर–घर जाकर कार्य करने की तकनीक है। तीन अन्य रणनीतियों में पारस्परिकता मानदंड, लोबॉल तकनीक और नकली कमी में हेरफेर करना शामिल है।

टिप्पणी

पारस्परिकता मानदंड का हेरफेर

पारस्परिकता मानदंड कई समाजों में एक निहित नियम है जो लोगों को बताता है कि उन्हें दिए गए उपहार वापस करना चाहिए। कोई व्यक्ति या समूह इस मानदंड में हेरफेर कर सकता है ताकि यह अधिक संभावना हो कि लोग उत्पाद खरीदेंगे या दान करेंगे।

उदाहरण : यदि कोई वन्यजीव संरक्षण संगठन को उसके नाम के साथ व्यक्तिगत रूप से नोट पेपर का एक पैड भेजता है, तो वह उन्हें वह दान भेजने के लिए बाध्य महसूस कर सकता है जो वे चाहते हैं।

लोबॉल तकनीक

लोबॉल तकनीक में एक आकर्षक प्रस्ताव बनाना और किसी व्यक्ति द्वारा इसके लिए सहमत होने के बाद ही इसके डाउनसाइड्स (और बातों) का खुलासा करना शामिल है।

उदाहरण : एक कार विक्रेता ने शीला को बताया कि वह जिस कार को खरीदना चाहती है उसकी कीमत 15 लाख रूपये है। कार खरीदने के लिए प्रतिबद्ध होने के बाद, विक्रेता बताता है कि एक स्टीरियो, एक एयर कंडीशनर और फर्श मैट जोड़ने पर एक लाख और खर्च होंगे।

नकली कमी

शोधकर्ताओं ने पाया है कि जब कुछ पाना मुश्किल होता है, तो लोग उसे और अधिक चाहते हैं। इस अवलोकन को अक्सर समूहों और लोगों द्वारा हेरफेर किया जाता है जो कुछ बेचना चाहते हैं। उनका मतलब एक उत्पाद की मांग में वृद्धि करने के लिए दुर्लभ आपूर्ति से है, भले ही वह नहीं है।

उदाहरण : एक किराना स्टोर कम कीमत पर दही के एक ब्रांड का विज्ञापन करता है, विज्ञापन में यह नोट किया जाता है कि इसकी आपूर्ति सीमित है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. "व्यक्ति के वास्तविक, काल्पनिक और दूसरे के प्रभावों से उत्पन्न विचार, भाव और व्यवहार सामाजिक मनोविज्ञान कहलाते हैं।" यह परिभाषा किसने दी?

   (क) बैरन (ख) डब्ल्यू. आलपोर्ट

   (ग) जॉर्ज सिम्मल (घ) हार्टन कूली।

6. ओपिनियन लीडर के बारे में अध्ययन करने की शुरुआत कब हुई थी?

   (क) 1940 (ख) 1942

   (ग) 1944 (घ) 1946

1.5 समाज और जनसंचार एवं मनोवृत्ति गठन

सामाजिक प्रक्रिया में संचार का महत्त्व अहम् है। केवल संपर्क होने से सामाजिक क्रिया का उद्देश्य प्राप्त नहीं होता। संपर्क को सफल बनाने के लिए संचार होना आवश्यक

टिप्पणी

है। संपर्क तभी सार्थक होता है जब उसमें संचार होता है। संपर्क का कोई न कोई उद्देश्य होता है। हम एक व्यक्ति से मिलते हैं, उसका अभिवादन करते हैं, कुशल समाचार पूछते हैं और उन्हें शुभकामनाएं देते हैं, यह भी संचार है। संचार के जरिये ही एक व्यक्ति या समूह के मनोभावों या विचारों को दूसरा व्यक्ति या समूह जानता और समझता है। बिना संचार के किया गया संपर्क निरर्थक होता है। सामान्य तौर पर लोगों में मौखिक संचार होता है। हम सीमित शब्दों में अपने मनोभावों का संचार करते हैं। ऐसे में समाज और जनसंचार के बीच गहरा संबंध है।

कई विद्वान समाज को मास के सन्दर्भ में जोड़ते हैं। रेमंड विलियम्स ने 'मास' शब्द पर अपनी पुस्तक 'की वर्ड' में विचार किया है। उनके अनुसार, 'मास' शब्द सामाजिक वर्णन में आम प्रयुक्त होने वाला शब्द नहीं है, बल्कि अत्यंत जटिल शब्द है। इस शब्द का अर्थ है बहुत बड़ी संख्या में लोग, लेकिन यह बहुत बड़ी संख्या लोगों को प्रकृति और चरित्र का पता नहीं देती। कई बार इसे भीड़ या जनसमूह भी कहा जाता है।

1.5.1 जनसंचार

जनसंचार केवल एक कार्य के लिए नहीं होता है बल्कि नवीन तकनीक के आने के कारण इसका काफी विस्तार हुआ है। वर्तमान दौर में जनसंचार हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी को प्रभावित करने लगा है। जनसंचार समाज को सूचनाएं देता है, वह लोगों को सलाह देता है। वह लोगों को हिदायत देता है। सामाजिक परिवर्तन या समाज में हो रही उथल–पुथल को सार्वजनिक करने में जनसंचार की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है। जनसंचार सामाजिक स्तर पर एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति के संपर्क सूत्र जोड़ने और विशेष परिस्थितयों में सूत्र तोड़ने के लिए प्रेरक सिद्ध होते हैं। इसी कारण यह कहा जा सकता है कि समाज की संरचना में आए हुए किसी भी परिवर्तन के लिए जनसंचार के विभिन्न माध्यम अपनी भूमिका की महत्ता स्थापित करते हैं।

जनसंचार को ही अंग्रेजी में मास कम्युनिकेशन (Mass Communication) कहा जाता है, जिसका अभिप्राय बहुल या व्यापक मात्र अथवा विस्तृत बिखरे लोगों तक संचार माध्यम द्वारा सन्देश या सूचना का पहुंचना है। मार्शल मैक्लुहान ने वर्तमान समाज में संचार माध्यमों की व्यापकता एवं प्रसार को देखते हुए 'संचार माध्यम ही संदेश है' तक कह दिया था।

जनसंचार की परिभाषा

जॉर्ज ए. मिलर के अनुसार, 'जनसंचार का अर्थ सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाना है।'

एडमिन एमरो कहते हैं, 'जनसंचार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोण को सम्प्रेषित करने की एक कला है।'

जनसंचार एक संगठित संचार है और इसके संघटक हैं, स्रोत, चयनित सूचना, संप्रेषक, सन्देश, संचार साधन, संचार माध्यम, सूचना प्रेषण, मंजिल और फीडबैक।

जनसंचार के तीन मुख्य कार्य होते हैं–

- सूचना (Information)

- शिक्षा (Education)
- मनोरंजन (Entertainment)

टिप्पणी

सूचना (Information) : सूचना देना जनसंचार का मुख्य कार्य है। इसकी जरूरत सभी तरह के समाजों में होती है। सूचना ने प्रौद्योगिकी के विकास के महत्त्व को बिलकुल बदल कर रख दिया है। सूचना अब अन्य उत्पादों की तरह एक उत्पाद में बदल गई है, जिसे खरीदा और बेचा जा सकता है। सूचना के इस बढ़ते प्रभाव की वजह से आज के विकसित समाजों को 'सूचना समाज' कहा जाने लगा है। सूचना ने कई तरह के मिथक पैदा किए हैं, लेकिन सूचना के बल पर समाज में व्याप्त गैर बराबरी और बदहाली को समाप्त नहीं किया जा सकता है। सूचना ही शक्ति है। आज हमारे चारों ओर सूचनाओं का अम्बार लगा हुआ है। आज ज्ञानी का सन्दर्भ बदल गया है। आज ज्ञानी वह है जिसके पास सूचनाओं का ढेर है।

शिक्षा (Education) : जनसंचार का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना है। यहां शिक्षा का अर्थ औपचारिक शिक्षा नहीं है, बल्कि ज्ञान सम्प्रेषण के समस्त रूप शिक्षा के क्षेत्र में ही गिने जाएंगे। शिक्षा के लिए माध्यम की आवश्यकता नहीं पड़ती। भाषा और लिपि शिक्षा के सर्वाधिक सशक्त माध्यम हैं। पुस्तकों के जरिये परंपरागत ज्ञान को लिपिबद्ध किए जाने, इंटरनेट के आने से ज्ञान लिपिबद्ध और डिजिटलाइजेशन होने लगा है। जो लोग पढ़ नहीं सकते हैं, वे रेडियो या पॉडकास्ट के जरिये सुनकर शिक्षित हो सकते हैं। रेडियो के बाद टेलीविजन से इसमें एक नया आयाम जोड़ा। जनसंचार के माध्यमों द्वारा सम्प्रेषित होने वाला प्रत्येक सन्देश चाहे वह सूचना के रूप में हो या मनोरंजन के रूप में, उसमें शिक्षा का समावेश किसी न किसी रूप में अवश्य होता है। जनसंचार माध्यमों की विविधता और बहुलता ने लोगों के जीवन को गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मनोरंजन (Entertainment) : जनसंचार का तीसरा महत्वपूर्ण कार्य है समाज को मनोरंजन प्रदान करना। मनोरंजन निष्क्रिय भाव नहीं है। यह रचना, अभिव्यक्ति और आस्वादन तीनों कार्यों में निहित होता है। मनोरंजन के लिए जनसंचार के विशिष्ट व्याकरण का ध्यान रखना होता है कि वह संकेतों को सफलतापूर्वक विसंकेतीकृत कर सके। प्रत्येक संचार माध्यम की अपनी संरचना होती है, जिसके द्वारा मनोरंजक कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाते हैं। प्रत्येक माध्यम प्रेषक की जिन्दगी में कुछ खास स्थान बनाता है। टेलीविजन का आनंद लेने के लिए उसके सामने बैठना होता है। रेडियो का आनंद काम करते हुए उठाया जा सकता है।

प्रो. लावेल कहते हैं, 'जनसंचार माध्यम समाज को गतिशील बनाते हैं। समाज में विभिन्न संबंध स्थापित करते हैं तथा विभिन्न सामाजिक संबंधों, क्रियाकलाप को प्रचारित, प्रसारित और हस्तांतरित करते हैं।'

जनसंचार हमारे सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करता है। वह हमारे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन को दिशा देता है। जनसंचार के माध्यमों में प्रभावित करने की क्षमता का इतना विस्तार इसी कारण से हुआ है, क्योंकि उसका स्वरूप और गठन इसी प्रक्रिया से हुआ है।

जनसंचार के लक्ष्य

टिप्पणी

जनसंचार के लक्ष्यों को समाज की गतिविधियों के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। जनसंचार के लक्ष्यों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है, वे हैं– राजनीतिक लक्ष्य, सामाजिक लक्ष्य, आर्थिक लक्ष्य और सांस्कृतिक लक्ष्य।

राजनीतिक लक्ष्य : वे देश जो राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली हैं, उन्हीं का संचार के आधुनिकतम संसाधनों पर अधिकार है। आधुनिक प्रौद्योगिकी पर अमेरिका और यूरोप का कब्जा है। जनसंचार के माध्यमों ने कुछ राजनीतिक लक्ष्यों को संभव बनाया, मसलन जनसंचार ने सूचना के अधिकार का विस्तार किया है और इस तरह लोगों में राजनीतिक जागरूकता को बढ़ाया है। जनसंचार ने लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति लोगों को सजग बनाया है और वे अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को प्राप्त करने के प्रति अधिक सजग बने हैं। जनसंचार ने शासक वर्ग के राजनीतिक हितों का प्रचार करने में भी अहम् भूमिका निभाई है और लोगों में राजनीतिक विभ्रम बढ़ाने का कार्य किया है। जनसंचार के माध्यम राजनीतिक हस्तक्षेप का माध्यम भी बने हैं। शासक वर्ग ने अपने राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए जनसंचार के माध्यमों पर अधिकार कर उनका दोहन किया है।

सामाजिक लक्ष्य : जनसंचार के नए माध्यमों ने सामाजिक क्षेत्र पर भी अपना गहरा प्रभाव छोड़ा है। आज हमारा सामाजिक जीवन काफी सीमा तक संचार माध्यमों के प्रभाव से संचालित हो रहा है। जनसंचार ने दुनिया को छोटा बना दिया है। जनसंचार ने सामाजिक व्यवहार को प्रभावित किया है। यह प्रभाव सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का होता है। जनसंचार ने लोगों के सामाजिक दृष्टिकोण को विस्तृत किया है। हालांकि इसने असामाजिक प्रवृतियों को भी बढ़ावा दिया है। जनसंचार ने लोगों को उदार बनने की प्रेरणा दी है तो उन्हें आत्मग्रस्त, संकीर्णवादी और स्वार्थी भी बनाया है। जनसंचार माध्यमों ने मनोरंजन के अधिकांश कार्यक्रमों में अभिजात वर्ग को महिमामंडित और औरतों को उपयोग की वस्तु के तौर पर पेश किया है। जनसंचार के माध्यम लोगों को शिक्षित करने और उन्हें ज्ञान–विज्ञान के नए–नए क्षेत्रों से परिचित करने का साधन है तो वह सूचना–संपन्न लोगों का अभिजात वर्ग भी बना रहा।

आर्थिक लक्ष्य : जनसंचार माध्यमों के आर्थिक मूल्य राजनीतक लक्ष्यों से अधिक साफ नजर आते हैं क्योंकि वर्तमान समय में जनसंचार बहुत बड़ा उद्योग बन चुका है। यह क्षेत्र अब बड़ी पूंजी के नियंत्रण में आ गया है। जनसंचार के नए माध्यमों और साधनों ने आर्थिक गतिविधियों का विस्तार किया है। जनसंचार ने बाजार की शक्ति को स्थापित करने में मदद की है। जनसंचार माध्यमों ने उत्पादों के प्रति लोगों को जागरूक बनाया है। जनसंचार ने उपभोक्तावादी प्रवृति को भी बढ़ावा दिया है। जनसंचार ने सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नए अवसर खोले हैं और परंपरागत माध्यमों को आघात भी पहुंचाया है। जनसंचार ने पूंजी के केन्द्रीयकरण को बढ़ावा दिया है।

सांस्कृतिक लक्ष्य : जनसंचार अभिजात्य संस्कृति और जनसंस्कृति के अंतराल को भी कम करता है। इसने संस्कृति और कला के विविध आयामों को भी सबके लिए उपलब्ध करा दिया, जो पहले केवल उच्चवर्ग तक ही सीमित थे। जनसंचार के माध्यम विभिन्न संस्कृतियों को एक–दूसरे के नजदीक लाने और इस तरह के सांस्कृतिक

टिप्पणी

सामंजस्य को बढ़ाने में सहायक होते हैं। यह लोगों की सृजनात्मक क्षमता की पूर्ति के कहीं ज्यादा और बेहतर अवसर प्रदान करता है। यह अपसंस्कृति को लोकप्रिय बनाने का माध्यम भी बनता है। यह सांस्कृतिक वर्चस्व कायम करने का एक सशक्त माध्यम भी है।

जनसंचार के कार्य

राइट ने जनसंचार के सात कार्य बताए हैं, जो हमारी जिन्दगी को प्रभावित करते हैं–

निगरानी : जनसंचार का कार्य आसपास की घटनाओं की निगरानी रखना होता है। वह समाज के लोगों के लिए आंख–कान बना होता है। हर कोई दुनिया में कहां क्या हो रहा है, जानना चाहता है। यही कारण है कि वह इंटरनेट, टीवी और समाचार पत्र आदि की सहायता लेते हैं। समाज दैनिक जीवन की जानकारियों के लिए भी जनसंचार पर निर्भर रहता है। कोरोना काल में लोगों को जागरूक करने में जनसंचार ने अहम् भूमिका निभाई और तमाम तरह की खबरें लोगों तक पहुंचाईं।

सह–संबंध : सह–संबंध बताता है कि कैसे मीडिया किसी तथ्य को प्रस्तुत करता है। हालांकि यह और बात है कि जनसंचार के माध्यम से प्राप्त सूचनाएं पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ और पक्षपात रहित नहीं होता है। वर्तमान समय में मीडिया की विश्वसनीयता घटी है। मीडिया के जरिये एजेंडा सेटिंग होती है। मीडिया ट्रायल आम बात है। ऐसे में मीडिया से प्राप्त सूचनाएं और उसका समाज के साथ सह–संबंध अहमियत रखता है।

सनसनीखेज : जनसंचार में सूचनाओं को सनसनीखेज बनाकर पेश करने का चलन बढ़ा है। इलियट कहते हैं कि मीडिया प्रबंधक नागरिकों के बजाय उपभोक्ताओं के सन्दर्भ में सोचते हैं। अच्छी पत्रकारिता बिकती है लेकिन दुर्भाग्य से बुरी पत्रकारिता भी बिकती है।

मनोरंजन : जनसंचार का कार्य लोगों का मनोरंजन करना है। इस कारण मीडिया के तमाम आउटलेट्स मनोरंजन की खबरों से भरे होते हैं। लोग सूचनाएं प्राप्त करने के साथ–साथ मनोरंजन की अपेक्षा जनसंचार माध्यमों से रखते हैं। मनोरंजन के लिए लोग विडियो गेम्स खेलते हैं, यू–ट्यूब चैनल देखते हैं। अक्सर लोग खाली समय में हल्के–फुल्के और व्यंग्य से जुड़े शो देखना पसंद करते हैं।

संचरण : जनसंचार माध्यम सांस्कृतिक मानदंडों, मूल्यों, नियमों और आदतों को प्रसारित करने का एक माध्यम है। मीडिया समाजीकरण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जनसंचार के माध्यम से लोगों को संस्कृति के बारे में पता चलता है। ऐसे में सूचनाओं का संचरण काफी अहमियत रखता है। सूचनाओं के संचरण के जरिये ही हम फैशन, नई तकनीक, संगीत आदि के बारे में एक–दूसरे से सूचनाएं प्राप्त करते हैं।

लामबंदी : जनसंचार संकट के समय लोगों को जुटाने का भी कार्य करता है। मीडिया के द्वारा सूचनाएं तुरंत लोगों तक पहुंचती हैं और लोग उसके अनुसार लामबंद होते हैं। कोरोना काल में लोग भी एक–दूसरे को स्वस्थ रहने, मास्क लगाने और घर से बाहर नहीं जाने की सलाह मोबाइल के जरिये दे रहे थे। राजनीतिक पार्टियां चुनाव के दौरान अपने खेमे के प्रत्याशियों को वोट देने के लिए लामबंद करती हैं।

टिप्पणी

सत्यापनः जनसंचार, समाज में विशेष व्यक्तियों, आन्दोलनों, संगठनों या उत्पादों की स्थिति और मानदंडों को मान्यता देने का भी कार्य करता है। यह मान्यता सामाजिक स्तर और नियमों के तहत होती है। यदि आप किसी उत्पाद का विज्ञापन देखेंगे तो पाएंगे वह किसी न किसी वर्ग के ग्राहक को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। वह वर्ग किसी उम्र के लोगों, किसी जेंडर के या फिर किसी खास समूह के लिए हो सकता है। ऐसे में जनसंचार उस उत्पाद के प्रति लक्षित समूह का ध्यान आकर्षित कराता है और वह समूह उस उत्पाद का उपयोग कर जनसंचार की सूचनाओं को सत्यापित करता है।

1.5.2 मनोवृत्ति गठन

मनोवृत्ति वह मूल्यांकन है जो लोग वस्तुओं, विचारों, घटनाओं या अन्य लोगों के बारे में करते हैं। यह किसी व्यक्ति की मानसिक तस्वीर है जिसके आधार पर वह व्यक्ति किसी वस्तु, घटना या किसी के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल विचार रखता है। मनोवृत्ति का प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार पर पड़ता है। कार्यपद्धति पर पड़ता है। मनोवृत्ति किसी भी व्यक्ति को किसी खास दिशा में कार्य करने के लिए उद्वेलित करती है।

मनोवृत्ति का गठन व्यक्ति के पसंद और नापसंद पर आधारित होता है। यदि कोई व्यक्ति किसी को पसंद करता है तो वह उसके साथ खुश रहता है, उसके सारे गुण और अवगुण अच्छे लगते हैं। वहीं, इसके उलट जो लोग नापसंद होते हैं, उनकी सामने वाले को हर बात खराब लगती है। यही स्थिति अन्य मामलों में होती है तभी तो लोग अक्सर कहते हैं, 'यह बात मैं अपने दिल से कह रहा हूं...', 'अपनी कसम यह बात सही हैं...' आदि। कई बार हमारी मनोवृत्ति बिना किसी सोच या तर्क के भावनाओं पर आधारित होती है।

मनोवृत्ति सकारात्मक और नकारात्मक दो तरह की होती है। सकारात्मक मनोवृत्ति वाले लोग सचेत विश्वास वाले होते हैं जो निर्णय और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। नकारात्मक मनोवृत्ति के पास अचेतन विश्वास होता है, जो निर्णयों और व्यवहार को प्रभावित करता है।

मनोवृत्ति के घटक

मनोवृत्ति के तीन घटक होते हैं, जिन्हें संक्षेप में कैब (CAB) कहा जाता है, वे हैं–

- संज्ञानात्मक घटक (Cognitive Component)
- भावनात्मक घटक (Affective Component)
- व्यावहारिक घटक (Behavioural Component)

संज्ञानात्मक घटक (Cognitive Component): किसी वस्तु से संबंधित व्यक्ति के विचार और विश्वास संज्ञान कहलाते हैं। इस मामले में कोई व्यक्ति उपलब्ध जानकारी के आधार पर अपनी धारणा कायम करते हैं। यह धारणा सकारात्मक और नकारात्मक दोनों हो सकती है। मनोवृत्ति के इस घटक को संज्ञानात्मक घटक कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि हम मानते हैं कि अमुक छात्र पढ़ाई में बेहतर है तो उसे हम बस बेहतर पढ़ाई करने वाले के रूप में देखते हैं।

टिप्पणी

भावनात्मक घटक (Affective Component): मनोवृत्ति में बदलाव, निर्णय, सामाजिक प्रभाव आदि मामले की मनोवृत्ति भावनात्मक घटक के दायरे में आती है। इसका अर्थ मनोवृत्ति वस्तु के प्रति भाव, सुहानुभूति और पसंद या नापसंद पर आधारित है। भावात्मक घटक वास्तव में मनोवृत्ति का सारभाग होता है और दूसरे घटक सिर्फ और सिर्फ सहायक की भूमिका में होते हैं।

व्यावहारिक घटक (Behavioural Component) : किसी वस्तु के प्रति व्यवहार या क्रिया करने की तत्परता को व्यवहारात्मक घटक कहते हैं। इसे क्रियात्मक घटक भी कहते हैं। इस घटक का सीधा अर्थ है कि किसी वस्तु के प्रति किसी व्यक्ति का कैसा व्यवहार है। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति को लगता है कि उसका उच्च अधिकारी भ्रष्ट है तो वह उसके साथ वैसा व्यवहार नहीं करे जैसा उसे करना चाहिए।

मनोवृत्ति के प्रकार

मनोवृत्ति दो प्रकार की होती है, पहली व्यक्त (प्रत्यक्ष) यानी सजगता का परिणाम और दूसरी अन्तर्निहित (अप्रत्यक्ष) यानी अचेतन मन में निहित। दोनों में मूल अंतर यह है कि एक में व्यक्ति मनोवृत्ति के निर्माण के मामले में सजग रहता है। वह किसके बारे में क्या सोच रहा है, उसे मालूम होता है। वहीं दूसरे मामले में वह सचेत नहीं रहता है कि वह किसके बारे में क्यों सोच रहा है। पुरानी बातें, पुराने अनुभव आदि की इन मामलों में अहम् भूमिका होती है।

नैतिक मनोवृत्ति : हरेक व्यक्ति के व्यवहार में नैतिक मनोवृत्ति दिखाई देती है। इसका अर्थ यह है कि किसी वस्तु या व्यक्ति के बारे में नैतिक निर्णय देना या मूल्यांकन करना, उचित है या अनुचित, यह तभी तय करना होता है। प्रत्येक संस्कृति का अपना–अपना सांस्कृतिक प्रतिरूप होता है। उसके अपने–अपने मूल्य, मानदंड तथा परंपराएं होती हैं। इसलिए किसी संस्कृति के सदस्यों की मनोवृत्ति के निर्माण पर उसके सांस्कृतिक प्रतिरूपों का भी प्रभाव पड़ता है। इसी कारण जहां एक संस्कृति के लोगों की मनोवृत्ति में अधिक समानता पाई जाती है, वहां भिन्न–भिन्न संस्कृतियों के लोगों की मनोवृत्ति में अधिक भिन्नता।

नैतिक मूल्य सभी प्राकृतिक मूल्यों में सर्वश्रेष्ठ है। अच्छाई, पवित्रता, सत्यवादिता, विनम्रता आदि नैतिक मूल्य, बुद्धिमत्ता, मेधाविता, खुशी, शक्ति–संपन्नता, प्राकृतिक सुन्दरता अथवा कला या फिर किसी राज्य में व्याप्त शक्ति एवं स्थायित्व आदि मूल्यों से कहीं अधिक उच्चतर स्थान रखते हैं। वैसे तो सांस्कृतिक मूल्य अनेक हैं। दया, करुणा, दानशीलता, निःस्वार्थ प्रेम जैसे नैतिक मूल्यों की बात ही अलग है। ये अन्य नैतिक मूल्यों की अपेक्षा चिरस्थायी हैं तथा ज्यादा सार्थक भी होते हैं।

राजनीतिक मनोवृत्ति : किसी खास वस्तुओं के प्रति विशेष रूप से व्यवहार करने की प्रवृति को मनोवृत्ति कहते हैं। राजनीतिक मनोवृत्ति में मामला राजनीतिक होता है। मसलन राजनीतिक उम्मीदवार, राजनीतिक मुद्दे, राजनीतिक दल और राजनीतिक संस्थाएं आदि। व्यक्ति के गुणों का असर उसकी राजनीति पर जबरदस्त पड़ता है, वे गुण हैं–

बहिर्मुखता : ऊर्जावान, कर्मठ तथा क्रियाशील होने को बहिर्मुखता कहते हैं। जिन व्यक्तियों में यह गुण होते हैं, वे समाज तथा देश–दुनिया के प्रति अधिक सजग तथा

क्रियाशील होते हैं। उनमें सामाजिकता, सहयोग की भावना, प्रतियोगिता जैसे गुण होते हैं। वे किसी विषय पर निर्णय लेने तथा उसे कार्यान्वित करने की क्षमता रखते हैं। सामान्य तौर पर उनका व्यवहार कुशल और सामाजिकता से ओतप्रोत होता है।

टिप्पणी

त्यागशीलता : यह सामाजिक तथा साम्प्रदायिक मनोवृत्ति से बिल्कुल भिन्न होता है। इससे युक्त व्यक्ति कठिन परिस्थितियों में भी ईमानदार बना रहता है। ऐसे व्यक्तियों में परोपकारिता, विनम्रता जैसी भावना होती है। कई बार इनके व्यवहार से मानसिक अपरिपक्वता भी झलकती है अर्थात् ये संवेदनशील भी होते हैं।

निष्ठता : इस तरह के व्यक्ति लक्ष्य प्रधान होते हैं। इन्हें स्वयं पर नियंत्रण होता है। वे नियमों व मान्यताओं के पालन में विश्वास रखते हैं और उन्हें अपनी प्राथमिकताओं की जानकारी होती है।

संवेगात्मक स्थिरता : ऐसे व्यक्ति संवेगात्मक रूप में परिपक्व होते हैं। जिस व्यक्ति का व्यक्तित्व विकास सामान्य एवं संतुलित होता है उसमें संवेगात्मक स्थिरता रहती है। वे परिस्थिति को समझकर उसके अनुकूल प्रतिक्रिया करते हैं। इनमें नकारात्मक प्रवृत्ति अर्थात् चिन्ता, उदासी, क्रोध या तनाव आदि अनावश्यक रूप से नहीं पाया जाता जैसा कि संवेगात्मक रूप से अस्थिर व्यक्तित्व में देखने को मिलता है।

खुलापन तथा अनुभव के प्रति उन्मुखता : ऐसे व्यक्ति महत्वाकांक्षी होते हैं। ये संकीर्ण सोच वाले व्यक्तियों से भिन्न होते हैं। खुले दिमाग तथा अनुभवों के प्रति उत्सुकता जैसे गुण वाले व्यक्ति में स्वाभाविकता होती है। ये गहन विचारशील तथा उच्च आकांक्षा स्तर वाले व्यक्ति होते हैं। इनका मानसिक क्षितिज विकसित किन्तु थोड़ा जटिल भी हो सकता है। बहिर्मुखता वह गुण है जो हमारे आदर्शों को नहीं बल्कि राजनीति में हमारी भागीदारी को प्रभावित करता है।

मनोवृत्ति के कार्य

मनोवृत्ति के प्रमुख कार्य निम्न हैं–

उपयोगितावादी कार्यः (Utilitarian): उपयोगितावादी कार्य वह होता है जिस व्यवहार से व्यक्ति को लाभ या पुरस्कार मिलता है या मिलने की संभावना होती है। इस मनोवृत्ति के लोग जिस कार्य के लिए पुरस्कार मिलता है, उसे बार–बार करने के लिए प्रवृत होते हैं और जिस कार्य से सजा मिलती है, उसे करने से परहेज करते हैं।

ज्ञान कार्य (Knowledge): मनोवृत्ति का ज्ञान से संबंधित कार्य भी महत्वपूर्ण है। हममें से प्रत्येक को अर्थपूर्ण, स्पष्ट तथा सार्थक ज्ञान की आवश्यकता होती है ताकि हम व्यावहारिक जीवन में समाज तथा देश–दुनिया के बारे में एक बेहतर समझ बना सकें। साथ ही समाज में समंजस्य भी बन सके।

अहं–रक्षात्मक कार्य (Ego-Defensive): मनोवृत्ति का यह कार्य चिंता, निराशा तथा द्वंद्व से जुड़ा है। व्यक्ति अपने अहं की तुष्टि के लिए कई बार अपनी मनोवृत्ति बदल लेता है और स्वयं के बारे में सत्य सुनने या जानने की क्षमता आ जाती है। उसमें जीवन के कटु सत्य को आसानी से स्वीकार करने की क्षमता भी बढ़ जाती है।

मूल्य अभिव्यंजक कार्य (Value Expressive): व्यक्ति इसके माध्यम से स्वयं को बेहतर तरीके से समझ पाता है। व्यक्ति अपने व्यक्तिगत मूल्य के अनुकूल अपनी

टिप्पणी

मनोवृत्ति में बदलाव लाता है तो उसे संतुष्टि मिलती है। व्यक्ति स्वयं को दूसरों के समक्ष मूल्यों में अपनी व्यक्तिगत आस्था को बेहतर ढंग से अभिव्यंजित कर पाता है।

सामाजिक पहचान कार्य (Social Identity): मनोवृत्ति के माध्यम से व्यक्ति को सामाजिक तौर पर एक पहचान भी मिलती है। यहां किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति उसके बारे में दूसरों को सूचना संप्रेषित करने का कार्य करती है।

व्यवहार पर मनोवृत्ति का प्रभाव

व्यवहार हमेशा मनोवृत्ति को नहीं दर्शाता है। हालांकि, व्यवहार कुछ स्थितियों में व्यवहार को निर्धारित करते हैं:

- यदि कुछ बाहरी प्रभाव हैं, तो रवैया व्यवहार को निर्देशित करता है।

  उदाहरण: वायट का दृष्टिकोण है कि जंक फूड खाना अस्वस्थ है। व्यक्ति जब वह घर पर होता है तो वह चिप्स या कैंडी नहीं खाता है लेकिन वही जब किसी पार्टी में जाता है तो इन खाद्य पदार्थों का सेवन करता है।

- उसका व्यवहार विशिष्ट अभिवृत्तियों द्वारा निर्देशित होता है।
- सामाजिक भूमिकाएं व्यवहार के ऐसे प्रतिमान हैं जिन्हें किसी व्यक्ति विशेष के संदर्भ में उपयुक्त माना जाता है। उदाहरण के लिए, जेंडर भूमिकाएं लोगों को बताती हैं कि एक विशेष समाज पुरुषों और महिलाओं से कैसे व्यवहार करने की अपेक्षा करता है। एक व्यक्ति जो किसी भूमिका की आवश्यकताओं का उल्लंघन करता है, वह असहज महसूस करता है या दूसरों द्वारा उसकी निंदा की जाती है। समाज में समय के साथ भूमिका की आवश्यकताएं बदल सकती हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

7. 'जनसंचार का अर्थ सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाना है।' यह किसका कथन है?

   (क) जॉर्ज ए. मिलर (ख) एडमिन एमरो

   (ग) प्रो. लावेल (घ) इनमें से कोई नहीं

8. मनोवृति के कितने घटक होते हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) छह

1.6 पूर्वाग्रह और भेदभाव तथा रूढ़िवादिता

समाज में हमारी अपनी पहचान होती है। वह पहचान चाहे हम खुद बनाते हैं या फिर समाज हमारे बारे में बनाता है। हम जिस समाज में रहते हैं, जिन मित्रों के साथ रहते हैं, उनकी भी एक पहचान होती है। ऐसे में कई बार लोग पूर्वाग्रह में किसी की

पहचान कायम करते हैं तो कई बार हम खुद दूसरों के लिए पूर्वाग्रह बनाने के लिए विषय दे देते हैं।

टिप्पणी

पूर्वाग्रह का तात्पर्य किसी व्यक्ति की उन भावनाओं से है जिसके कारण वह किसी व्यक्ति अथवा समूह के प्रति सकारात्मक और नकारात्मक रुझान रखता है। सामान्य रूप में सामाजिक विकास के दौरान व्यक्ति जिन परिस्थितियों में पलता है, उनके आधार पर उसके मन में पूर्वाग्रह का निर्माण होता है। बचपन में जिन चीजों अथवा व्यक्तियों से उसे लाभ होता है वह उसे सकारात्मक रूप में देखता है। वहीं जिन चीजों के बारे में उन्हें गलत ढंग से बताया जाता है, उनके बारे में उसके मन में नकारात्मक रुझान उत्पन्न हो जाते हैं। पूर्वाग्रह से प्रभावित व्यक्ति वास्तविकता से अनभिज्ञ रहते हुए विशेष समूह और लोगों के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार करने लगता है।

बैरोन तथा बर्न (1977) के अनुसार, 'समाज मनोविज्ञान में पूर्वाग्रह को सामान्यतः किसी प्रजातीय, मानवजातीय या धार्मिक समूह के सदस्यों के प्रति एक नकारात्मक मनोवृत्ति के रूप में परिभाषित किया जाता है।'

मेयर्स के मुताबिक, पूर्वाग्रह किसी समूह एवं उसके सदस्यों के प्रति एक अनुचित नकारात्मक मनोवृत्ति को कहा जाता है।

पूर्वाग्रह एक नकारात्मक गुण है। पूर्वाग्रह एक सामान्य रवैया होता है और वह सामाजिक लोगों या थोड़े अंतर वाले लोगों के लिए लोग अपने मन में धारणा बना लेते हैं। पूर्वाग्रह बनाने में शिक्षा का स्तर, संपर्क, संचार, संबंध आदि की बड़ी भूमिका होती है। साथ ही, सामाजिक समूह लिंग, जाति, धर्म, क्षेत्रीयता, राष्ट्रीयता के आधार पर होते हैं। भारत में पिछड़ी जातियों के व्यक्तियों के प्रति उच्च जातियों के लोगों में प्रायः नकारात्मक मनोवृत्ति देखने को मिलती है।

पूर्वाग्रह विकसित होने का कारण

रूढ़िवाद के कारण पूर्वाग्रह विकसित होता है। व्यक्ति के चरित्र, उसके समूह आदि के आधार पर पूर्वाग्रह सामने आता है। रूढ़िवाद सामान्यीकरण के कारण अस्तित्व में आता है, जब लोग किसी व्यक्ति के प्रति उसके समूह के आधार पर धारणा बना लेते हैं। जैसे कई बार कोई कंपनी मानने लगती है कि पुराने लोग अधिक कुशलतापूर्वक कार्य नहीं करते हैं। जबकि ऐसा नहीं होता है। पुराने कर्मचारियों में कई लोग काफी कुशलता के साथ कार्य करते हैं। लेकिन सभी पुराने कर्मचारियों के प्रति प्रबंधन सामान्यीकरण धारणा बना लेता है।

कई बार लोग किसी खास समूह के लोगों के प्रति पूर्वाग्रह पाल लेते हैं और उसी के अनुसार कार्य करते हैं, इसे भेदभाव कहा जाता है। यह एक नकारात्मक कार्य है और समाज में मनमुटाव उत्पन्न होता है। जब किसी व्यक्ति या समूह के बारे में नकारात्मक धारणा बना ली जाती है तो लोग उसके प्रति भेदभाव बरतने लगते हैं। जैसे यदि किसी कक्षा या सेक्शन के बच्चे आपस में बैठे हैं तो वहां यदि कोई सीनियर या जूनियर आ जाता है तो उसे उस बैठक से बाहर जाने के लिए कहा जाता है।

पूर्वाग्रह का विकास

पूर्वाग्रह के विकास के कुछ कारक होते हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है–

टिप्पणी

- **शिक्षा** : पूर्वाग्रह का विकास शिक्षा पर प्रत्यक्ष रूप से आधारित होता है। शिक्षित व्यक्तियों में अशिक्षित व्यक्तियों की तुलना में पूर्वाग्रह का विकास कम होता है। इसका कारण यह है कि शिक्षित व्यक्ति से किसी समस्या या अन्य व्यक्तियों के बारे में सही पृष्ठभूमि में सोचने एवं तर्क करने की शक्ति अधिक होती है। फलस्वरूप, उनमें जल्द पूर्वाग्रह नहीं विकसित होता है।
- **जाति** : भारतीय समाज विभिन्न जातियों में बंटा हुआ है। कई ऐसे अध्ययन हुए हैं जिसमें पता चलता है कि ऊंची जाति के लोग पिछड़ी जाति के लोगों के प्रति अधिक पूर्वाग्रह से ग्रस्त होते हैं।
- **धार्मिक समूहन** : भारत में विभिन्न धर्म के मानने वाले लोग रहते हैं। किसी धर्म को मानने वाले व्यक्तियों में उस धर्म के प्रति अटूट विश्वास होता है। धार्मिक विश्वास तथा अन्धविश्वास की कड़ी इतनी मजबूत होती है कि विशेष धर्म के समक्ष अन्य संही धर्म उसे तुच्छ लगते हैं।
- **सामाजिक संघर्ष** : विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच में संघर्ष होने से भी पूर्वाग्रह की उत्पत्ति होती है तथा उसका सम्प्रेषण होता है। किसी समूह या राष्ट्र के साथ संघर्ष होने पर व्यक्तियों की मनोवृत्ति उस समय या राष्ट्र के प्रति प्रतिकूल हो जाती है।
- **जन समूह माध्यम** : पूर्वाग्रह के निर्माण में जन समूह माध्यमों जैसे सिनेमा, दूरदर्शन, समाचार–पत्र, रेडियो, पत्रिकाओं आदि की भी भूमिका सराहनीय है। इन माध्यमों द्वारा हमें दूसरे व्यक्तियों एवं समूहों के बारे में तरह–तरह की सूचनाएं मिलती हैं, जिसके आधार पर पूर्वाग्रह विकसित होता है।
- **सामाजिक सीखना** : प्रत्येक बच्चा समाजीकरण के दौरान अपने माता–पिता, भाई–बहनों और पड़ोसियों से दूसरे व्यक्तियों या समूहों के प्रति एक खास ढंग का व्यवहार करना, विश्वास करना आदि सीखता है। समाजीकरण के इन माध्यमों से उन्हें जैसी शिक्षा–दीक्षा मिलती है, उनमें वैसी ही मनोवृत्ति विकसित होती है। यही कारण है कि यदि पिता किसी जाति या वर्ग के प्रति पूर्वाग्रही होते हैं तो उनकी संतान में भी उसी ढंग का पूर्वाग्रह विकसित हो जाता है या होने की संभावना काफी अधिक हो जाती है।
- **कुंठा तथा आक्रामकता** : कुंठा से भी व्यक्ति में पूर्वाग्रह की उत्पत्ति होती है। इसे पूर्वाग्रह का कुंठा सिद्धांत या 'बलि का बकरा' सिद्धांत भी कहा जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार जब व्यक्ति अपने लक्ष्य पर बीच में उत्पन्न बाधा के कारण नहीं पहुंच पाता है तो इससे उसमें कुंठा उत्पन्न होती है। इस कुंठा से वह बाधक स्रोत के प्रति आक्रामक हो जाता है। परन्तु चूंकि बाधक स्रोत व्यक्ति से अधिक सबल और मजबूत होता है, फलस्वरूप वह अपनी आक्रामकता तथा वैरभाव एक कमजोर स्रोत की ओर विस्थापित कर लेते हैं। इसे विस्थापित आक्रामकता कहा जाता है। इस विस्थापित आक्रामकता के कारण कमजोर स्रोत पूर्वाग्रह का निशाना बनता है।
- **असुरक्षा और चिंता** : व्यक्ति में पूर्वाग्रह असुरक्षा की भावना और चिंता से भी विकसित होती है। जिस व्यक्ति में अपनी नौकरी, सामाजिक स्तर आदि के

टिप्पणी

बारे में असुरक्षा की भावना नहीं होती है, वह हमेशा अन्य व्यक्तियों या समूहों के प्रति एक स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ विचार विकसित करता है। फलस्वरूप उसमें पूर्वाग्रह जल्दी विकसित नहीं होता है परन्तु जिन व्यक्तियों में असुरक्षा की भावना अधिक होती है, वह हमेशा ऐसे व्यक्तियों की ताक में रहता है जिन पर उसकी असुरक्षा का इल्जाम लगाया जा सके। ऐसे व्यक्तियों में पूर्वाग्रह तेजी से विकसित होता है।

- **ऐतिहासिक पृष्ठभूमि** : पूर्वाग्रह की उत्पत्ति ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में भी होती है। कुछ विशेष तरह की ऐतिहासिक घटनाओं के कारण व्यक्तियों में एक खास तरह की मनोवृत्ति विकसित हो जाती है, जो धीरे–धीरे पूर्वाग्रह का रूप ले लेती है। हमारे सामज में व्याप्त यौन पूर्वाग्रह जिसमें औरतों को कमजोर, दूसरों पर निर्भर रहने वाली एवं एक घरेलू कठपुतली समझा जाता है।
- **आरोपण** : जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के प्रति गलत आरोपण करता है, तो इससे भी पहले व्यक्ति में दूसरे व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह विकसित हो जाता है। जैसे भारत में निचली जाति का व्यक्ति चोरी करता है तो लोग कहते हैं कि यह तो उसका खानदानी पेशा है और वही यदि समाज के लिए कुछ कर गुजरता है तो लोग कहते हैं कि वह संयोगवश हुआ।

पूर्वाग्रह की विशेषताएं

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, पूर्वाग्रह की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं–

1. यह विवेकहीन होता है।
2. यह सीखा गया एक सामाजिक व्यवहार होता है।
3. इसमें संवेग भी सम्मलित होता है।
4. इसका संबंध वास्तविकता से नहीं होता है।
5. पूर्वाग्रह का स्वरूप कार्यात्मक होता है क्योंकि इससे व्यक्ति को कुछ–न–कुछ फायदा होता है।

पूर्वाग्रह और भेदभाव में अंतर

तुलना के लिए आधार	पूर्वाग्रह	भेदभाव
अर्थ	पूर्वाग्रह केवल एक सामाजिक समूह की सदस्यता के कारण किसी व्यक्ति के प्रति अनुचित और आधारहीन रवैया है।	भेदभाव का तात्पर्य किसी व्यक्ति या किसी अन्य व्यक्ति के समूह के साथ अन्याय या नकारात्मक व्यवहार से है क्योंकि वह किसी विशेष वर्ग, समूह या वर्ग से है।
यह क्या है?	सार भ्रांति, केवल मन में।	पूर्वाग्रह की अभिव्यक्ति।

टिप्पणी

किसका प्रतिनिधित्व करता है	धारणा	कार्य
प्रकृति	गैर जागरूक	सचेत और गैर–जागरूक
के कारण	रूढ़िबद्धता	पक्षपात
शामिल	किसी व्यक्ति या समूह के प्रति नकारात्मक रवैया।	एक व्यक्ति या समूह के प्रति अनुचित व्यवहार।
अंग	संज्ञानात्मक और प्रभावी	व्यवहार
कानूनी कार्रवाई	इसके खिलाफ नहीं की जा सकती।	इसके खिलाफ की जा सकती है।

पूर्वाग्रह और भेदभाव के प्रकार

जैसे ही हम किसी अजनबी से मिलते हैं, हम तीन तरह की जानकारी हासिल करना चाहते हैं, पहली उनकी जाति, लिंग और उम्र। समाज में इसके अलावा किसी और बातों पर ध्यान क्यों नहीं दिया जाता, जैसे उसका व्यवहार दोस्ताना हो, वह अच्छा कपड़ा पहने हो, उसका चेहरा हंसमुख हो आदि। हालांकि ये गुण लोगों को पहली बार में आकर्षित करते हैं लेकिन कालांतर में ये बातें गौण हो जाती हैं।

समाज में पूर्वाग्रह और भेदभाव का आधार

जातिवाद : यह पाश्चात्य जगत में होता है कि कौन अमेरिकी निवासी है, कौन अरब व अमेरिकी है, आदि लेकिन भारत जैसे देश में धर्म अधिक संवेदनशील मामला होता है।

लिंगः लिंग पूर्वाग्रह और भेदभाव का आधार होता है। पुरुष मानसिकता वाले लोग स्त्री को दोयम दर्जे का समझते हैं। नौकरी में नियुक्ति, पदोन्नति आदि के मामले में पूर्वाग्रह देखा जाता है। कुछ दशक पहले तक सेना में, फैक्ट्रियों में महिलाओं की नियुक्ति नहीं होती थी या कम होती थी।

उम्र : उम्र को लेकर भी पूर्वाग्रह पाया जाता है। मल्टीनेशनल कम्पनियां युवाओं को अधिक प्रश्रय देती हैं।

समलैंगिकता : इस तरह का पूर्वाग्रह सभी जगह पाया जाता है। जैसे समलैंगिक, ट्रांसजेंडर आदि को समाज में अच्छी नजरों से नहीं देखा जाता और नौकरियों पर नहीं रखा जाता।

1.6.1 रूढ़िबद्धता

रूढ़िबद्धता किसी विशेष समूह में शामिल होने के आधार पर लोगों के बारे में विश्वास है। रूढ़िबद्धता सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत एक ऐसी विचारधारा है जो पारंपरिक मान्यताओं का अनुकरण तार्किकता या वैज्ञानिकता के स्थान पर केवल आस्था तथा अनुभवों के आधार पर करती है। यह सामाजिक, राजनीतिक और नैतिक मान्यताओं का समुच्चय है। यह विचारधारा नए और बिना आजमाए हुए विचारों और संस्थाओं को अपनाने के बजाय पुराने और आजमाए हुए विचारों और संस्थाओं को कायम रखने का समर्थन करती है।

रूढ़िबद्धता (Stereotype) शब्द का प्रयोग पहली बार वाल्टर लिपमैन ने अपनी पुस्तक 'पब्लिक ओपिनियन' में किया था।

थॉमस एवं चाडविक के अनुसार, रूढ़िबद्धता किसी खास समुदाय या व्यक्ति के प्रति एक विश्वास है जो अपनी मान्यता सिर्फ और सिर्फ अनुमान के आधार पर लगाता है।

टिप्पणी

डेविड ह्यूम और एडमंड बर्क रूढ़िवाद के प्रमुख उन्नायक माने जाते हैं। समकालीन विचारकों में माइकेल ओकशॉट को रूढ़िबद्धता का प्रमुख सिद्धांतकार माना जाता है।

रूढ़िबद्धता सकारात्मक, नकारात्मक या तटस्थ हो सकती है। कई समाजों में लिंग, जातीयता या व्यवसाय के आधार पर रूढ़िवाद की प्रवृति आम है। उदाहरण के लिए लोग महिलाओं को पालने–पोसने वाली या कार बेचने वालों को बेईमान के रूप में मान सकते हैं।

रूढ़िबद्धता के कारण

निम्नलिखित कारणों से रूढ़िबद्धता की प्रवृति आसानी से नहीं बदली जा सकती है:

- जब लोग ऐसे उदाहरणों का सामना करते हैं जो किसी विशेष समूह के बारे में उनकी रूढ़ियों की पुष्टि करते हैं, तो वे यह मान लेते हैं कि ये उदाहरण समूह के लिए सही हैं।
- लोगों की धारणाएं उनकी अपेक्षाओं से प्रभावित होती हैं।
- लोग चुनिंदा उदाहरणों को याद करते हैं जो उनकी रूढ़ियों की पुष्टि करते हैं और अपुष्ट उदाहरणों के बारे में भूल जाते हैं।

रुढ़िबद्धता के कार्य

रूढ़िबद्धता के कई महत्वपूर्ण कार्य हैं:

- वे लोगों को किसी घटना या व्यक्ति के बारे में नई जानकारी को शीघ्रता से संसाधित करने की अनुमति देते हैं।
- वे लोगों के पिछले अनुभवों को व्यवस्थित करते हैं।
- वे व्यक्तियों और समूहों के बीच अंतर का अर्थपूर्ण आकलन करने में लोगों की मदद करते हैं।
- वे लोगों को दूसरे लोगों के व्यवहार के बारे में भविष्यवाणी करने में मदद करते हैं।

रूढ़िबद्धता का दैनिक उपयोग

रूढ़िबद्धता शब्द का अर्थ नकारात्मक तौर पर होता है। लोगों के विभिन्न समूहों की नकारात्मक रूढ़ियां उन लोगों के जीवन पर भयानक प्रभाव डाल सकती हैं। हालांकि, ज्यादातर लोग समाज में काम करने में मदद करने के लिए लगभग हर दिन रूढ़ियों पर भरोसा करते हैं। उदाहरण के लिए एक महिला देर रात काम से लौट रही है तो सड़क पर उसकी ओर पांच युवक आ रहे हैं तो वह डर कर सड़क के किनारे के

दुकान में चली जाती है और उनके गुजरने के बाद वह दुकान से निकलती है। ऐसे में लोग इसे रूढ़िवादिता का उदाहरण देंगे क्योंकि वह यह सोच रही थी कि वे पांचों उसके साथ छेड़खानी करेंगे।

टिप्पणी

रूढ़िबद्धता के खतरे

रूढ़िबद्धता कई कारणों से वास्तविकता की विकृतियों को जन्म देती है:

- वे लोगों को समूहों के बीच मतभेदों को बढ़ा–चढ़ाकर पेश करने का कारण बनते हैं।
- वे लोगों को उन सूचनाओं पर चुनिंदा रूप से ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रेरित करते हैं, जो स्टीरियोटाइप से सहमत हैं और इससे असहमत जानकारी को अनदेखा करते हैं।
- वे लोगों को अन्य समूहों को अत्यधिक समरूप के रूप में देखने के लिए प्रेरित करते हैं, भले ही लोग आसानी से देख सकते हैं कि वे जिस समूह से संबंधित हैं वे गलत हैं।

विकासवादी दृष्टिकोण

विकासवादी मनोवैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया है कि मनुष्यों ने रूढ़िवादिता की प्रवृत्ति विकसित की क्योंकि इससे उनके पूर्वजों को एक अनुकूली लाभ मिला। एक व्यक्ति किस समूह से संबंधित है, यह जल्दी से तय करने में सक्षम होने के कारण जीवित रहने का मूल्य हो सकता है, क्योंकि इससे लोगों को मित्रों और दुश्मनों के बीच अंतर करने में मदद मिलती है।

1.6.2 निहित पूर्वाग्रह

किसी व्यक्ति द्वारा किसी सामाजिक समूह के सदस्य के लिए विशेष गुणों का पूर्व चिंतन ही निहित पूर्वाग्रह कहलाता है। निहित पूर्वाग्रह विभिन्न श्रेणियों पर आधारित होता है और इसके दायरे में जाति, धर्म और जेंडर आते हैं। व्यक्तियों की आम धारणा और व्यवहार उनके द्वारा धारण की गई अन्तर्निहित रूढ़ियों से प्रभावित होती है। निहित पूर्वाग्रह को अंग्रेजी में स्टीरियोटाइप कहा जाता है और यह पहली बार 1995 ई. में मनोवैज्ञानिक महाज़्रीन बनाजी और एंथोनी ग्रीनवाल्ड ने परिभाषित किया। इसे जानबूझकर समर्थन देने या जानबूझकर नियंत्रित करने को कहा जाता है।

अपनी प्रगति जांचिए

9. समाज में पूर्वाग्रह और भेदभाव का आधार निम्न में से क्या है?

(क) जातिवाद (ख) लिंग

(ग) उम्र (घ) ये सभी

10. रुढ़िबद्धता शब्द का प्रयोग पहली बार किसने किया था?

(क) डेविड ह्यूम (ख) वाल्टर लिपमैन

(ग) एडमंड बर्क (घ) थॉमस एवं चाडविक

1.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

टिप्पणी

1. (ख)
2. (ग)
3. (क)
4. (ग)
5. (ख)
6. (ग)
7. (क)
8. (ख)
9. (घ)
10. (ख)

1.8 सारांश

मानव जीवन के प्रतिमान, संबंध, आदर्श, मूल्य, परंपरा, मान्यता आदि भी समाज और सामाजिक परिवेश पर आधारित होते हैं। समाज का आधार रीति, कार्य–प्रणाली, अधिकार, पारस्परिक सहयोग, समूह एवं उप–समूह, मानव–व्यवहार पर नियंत्रण, स्वतंत्रता है।

जिस प्रक्रिया से व्यक्ति सामाजिक जीवन का अंग बनता है उसे सामाजिक प्रक्रिया कहते हैं। समाज को समझने के लिए उसकी प्रक्रियाओं को समझना आवश्यक है। घटनाओं का क्रम, घटनाओं की पुनरावृति, घटनाओं के मध्य संबंध, घटनाओं की निरंतरता और विशिष्ट परिणाम सामाजिक प्रक्रिया के आवश्यक तत्व हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान में विशेषता का निर्धारण किसी और व्यक्ति के लिए सकारात्मक सोच को लेकर होता है। यह कई रूपों में होता है, मसलन पसंद (Like), प्रेम (Love), दोस्ती (friendship), एकतरफा प्रेम (Lust) और आदर्श (dmiration) आदि।

सामाजिक मनोवैज्ञानिक फ्रिट्ज हीडर ने संतुलन सिद्धांत को प्रतिपादित किया है जो दृष्टिकोण पर आधारित परिवर्तन के व्याख्या करता है। यह मनोवैज्ञानिक असमानता से संबंधित स्थितियों के बारे में बात करता है। इसके तहत माना जाता है कि भावना या पसंद करने वाले रिश्ते संतुलित होते हैं। हम ऐसे संबंध बनाते हैं जो हमारी पसंद और नापसंद को संतुलित करते हैं।

मनोविज्ञान में विश्लेषण के जरिये व्यक्तियों या समूहों के अनुभवों और व्यवहारों को जानने का कार्य किया जाता है। इसके जरिये हम अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी की कई कठिनाइयों से निजात पाते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने व्यवस्थित और अनुभवजन्य दोनों तरह से जाँच करने और उसका विश्लेषण करने के बाद दो तरह से कार्य करते हैं, पहला विचार बनाते हैं और दूसरा उसका परीक्षण करते हैं।

वह व्यक्ति, जिसका पाने आस–पास के लोगों पर बहुत अधिक प्रभाव हो अर्थात सोच और विचारों से समाज–जीवन प्रभावित हों, ओपिनियन लीडर कहलाता है।

व्यक्तिगत प्रभाव सिद्धांत को संचार का द्विचरणीय प्रवाह सिद्धांत कहा जाता है।

टिप्पणी

पॉल लेजर्सफील्ड और उनके साथियों ने अपने अध्ययन में पाया कि कोई भी मतदाता सीधे तौर पर जनमाध्यम से प्रभावित नहीं होता है। मतदाता पर आपसी संबंध और अंतरवैयक्तिक संचार का अधिक प्रभाव पड़ता है।

जनसंचार के तीन मुख्य कार्य होते हैं– सूचना (Information), शिक्षा (Education) और और मनोरंजन (Entertainment)।

मनोवृत्ति वह मूल्यांकन हैं जो लोग वस्तुओं, विचारों, घटनाओं या अन्य लोगों के बारे में करते हैं। यह किसी व्यक्ति की मानसिक तस्वीर है जिसके आधार पर वह व्यक्ति किसी वस्तु, घटना या किसी के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल विचार रखता है।

पूर्वाग्रह का तात्पर्य किसी व्यक्ति की उन भावनाओं से है जिसके कारण वह किसी व्यक्ति अथवा समूह के प्रति नकारात्मक रुझान रखता है।

रूढ़िवाद के कारण पूर्वाग्रह विकसित होता है। व्यक्ति के चरित्र, उसके समूह आदि के आधार पर पूर्वाग्रह सामने आता है। रूढिवाद सामान्यीकरण के कारण अस्तित्व में आता है, जब लोग किसी व्यक्ति के प्रति उसके समूह के आधार पर धारणा बना लेते हैं।

रूढ़िबद्धता किसी विशेष समूह में शामिल होने के आधार पर लोगों के बारे में विश्वास है। रूढ़िबद्धता सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत एक ऐसी विचारधारा है जो पारंपरिक मान्यताओं का अनुकरण तार्किकता या वैज्ञानिकता के स्थान पर केवल आस्था तथा प्रागनुभवों के आधार पर करती है।

किसी व्यक्ति द्वारा किसी सामाजिक समूह के सदस्य के लिए विशेष गुणों का पूर्व चिंतन हे निहित पूर्वाग्रह कहलाता है।

1.9 मुख्य शब्दावली

- **सम्बद्ध** – जुड़े हुए
- **पुनरावृत्ति** – दोहराना
- **प्रतिस्पर्धा** – मुकाबला, प्रतियोगिता
- **मध्यस्थता** – बीच–बचाव करना, सुलह करना
- **तब्दील** – बदलना
- **शोधकर्ता** – खोज करने वाला
- **पतन** – गिरना, नष्ट होना
- **विस्थापित** – अपने स्थान से हटना
- **रूढ़िबद्धता** – लकीर का फकीर होना

1.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

टिप्पणी

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक प्रक्रिया से आप क्या समझते हैं?
2. प्रतिस्पर्धा किसे कहते हैं?
3. आकर्षण को प्रभावित करने वाले करक कौन से हैं?
4. सामाजिक मनोविज्ञान क्या है?
5. ओपिनियन लीडर को परिभाषित कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक प्रक्रिया का विश्लेषण कीजिए।
2. आकर्षण का निर्धारण करने वाले तत्वों की व्याख्या कीजिए।
3. संतुलन सिद्धांत क्या है? विस्तार से बताइए।
4. मनोवृत्ति गठन के घटकों की व्याख्या कीजिए।
5. पूर्वाग्रह और भेदभाव में अंतर स्पष्ट कीजिए।

1.11 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2000), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
2. सुलेमान, डॉ. मुहम्मद, (2005), उच्चतर समाज मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
3. बैरन, आर, ए., एवं ब्रेन्स्कोम्ब, एन. आर. (2016). सोशल साइकोलॉजी, बोस्टनः पियर्सन/अलीन एवं बेकन
4. कसिन, एस.,फैन, एस., एवं मार्कस, एच. आर (2017). सोशल साइकोलॉजी, सेनगेज लर्निंग
5. एस. आर. जयसवाल : एजुकेशनल साइकोलॉजी (एलायड पब्लिशर्स–हिंदी वर्जन)।
6. एस. एस. माथुर : एजुकेशनल साइकोलॉजी (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–हिंदी वर्जन)।
7. शिक्षा मनोविज्ञान : पी.डी. पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
8. शिक्षा मनोविज्ञान : अरुण कुमार सिंह, (भारती भवन)।
9. एस.पी. गुप्ता,उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

इकाई 2 समूह गतिकी

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय

2.1 उद्देश्य

2.2 समूह गतिकी : समूह की अवधारणा, भूमिका एवं स्थिति

- 2.2.1 समूह की अवधारणा
- 2.2.2 समूह में विभेद की भूमिका
- 2.2.3 समूह की स्थिति

2.3 समूह गतिकी : मानदंड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा एवं सामाजिक आवारगी

- 2.3.1 मानदंड
- 2.3.2 समूह समग्रता
- 2.3.3 सामाजिक सुविधा
- 2.3.4 सामाजिक आवारगी

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

2.5 सारांश

2.6 मुख्य शब्दावली

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

समूह गतिकी एक सामाजिक इकाई है और हर व्यक्ति समाज से किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ होता है। व्यक्ति की आवश्यकताएं समाज के द्वारा पूरी होती हैं। सभी व्यक्तियों का संबंध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर एक–दूसरे जुड़ा होता है। यही कारण है कि समाज के साथ बेहतर संबंध बनाए रखने वाले व्यक्ति को कई सामाजिक सुविधा भी खुद–ब–खुद मिल जाती है।

प्रस्तुत इकाई में समूह की अवधारणा, भूमिका, स्थिति, सामाजिक नियम, सामाजिक सुविधा आदि के बारे में विस्तार से अध्ययन किया गया है।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- समूह गतिकी और इसके विभिन्न पक्षों का विवेचन पर पाएंगे;
- समूह में विभेद की भूमिका को समझ पाएंगे;
- समूह समग्रता के विभिन्न पक्षों की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- समूह की सामजिक सुविधा और सामाजिक आवारगी से अवगत हो पाएंगे।

2.2 समूह गतिकी : समूह की अवधारणा, भूमिका एवं स्थिति

समूह गतिकी अध्ययन का वह क्षेत्र है जिसमें समूहों में रहने वाले लोगों के व्यवहार पर सामाजिक कारकों या दवाबों के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। इसके अंतर्गत

टिप्पणी

समूह संरचना, समूह अंतःक्रिया, समूह परिवर्तन, समूह मनोबल तथा समूह नेतृत्व का अध्ययन किया जाता है। समूह गतिकी का अर्थ समूह के सदस्यों के व्यवहारों को प्रभावित करने वाले समस्त कारकों का अध्ययन करने से है जो उनके व्यवहार को शक्तिशील या विघटित कर सके। इसका प्रतिपादन कर्ट लेविन ने सन 1945 में किया। लेविन के अनुसार, समूह गतिकी का अर्थ समूह के विशेषकर छोटे समूह के उन प्रभावों से होता है जिनसे सदस्यों का व्यवहार एक निश्चित दिशा में परिवर्तित होता है। समूह गतिकी का तात्पर्य समूह के भीतर के उन दबावों से होता है जो सदस्यों के व्यवहारों को इस सीमा तक प्रभावित करते हैं कि उनमें महत्वपूर्ण परिवर्तन आ जाते हैं।

समूह गतिकी का अर्थ संबंध समूह–संगठन तथा संचालन के स्वरुप से है। समूह गतिकी का तात्पर्य भूमिका निर्वाह, समूह चिकित्सा, संवेदनशीलता–प्रशिक्षण तथा अन्य सम्बद्ध प्रविधियों से है। समूह गतिकी का तात्पर्य समूहों के अन्दर होने वाले परिवर्तनों से है, तथा इनका संबंध सामाजिक परिस्थितियों में समूह–सदस्यों के बीच पारस्परिक प्रतिक्रिया तथा शक्तियों से है।

लेविन के अनुसार, समूह गतिकी का अर्थ इस बात का अध्ययन करना है कि किस प्रकार के अध्ययन से परिवर्तन की संभावना अधिक होती है तथा किस दिशा में परिवर्तन की संभावना अधिक होती है।

रेबर एवं रेबर के अनुसार, 'समूह गतिकी का अर्थ है समूहों का अध्ययन, जिसमें गत्यात्मक, अन्तःसमूह परस्पर क्रियाओं यथा अधिकार, अधिकार परिवर्तन, नेतृत्व, समूह निर्माण, एक समूह दूसरे समूहों के प्रति कैसे प्रतिक्रिया करता है, समग्रता, निर्णय लेना आदि पर बल दिया जाता है।'

फिशर कहते हैं कि समूह गतिकी अध्ययन का ऐसा क्षेत्र है, जो उन दबावों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूह में व्यक्तियों का व्यवहार प्रभावित होता है।

समूह–गतिकी एक व्यापक शब्द है, जिसके अंतर्गत समूह का अध्ययन गतिकी, अन्तःसमूह प्रक्रियाओं यथा शक्ति, शक्ति परिवर्तन, नेतृत्व, समूह–निर्माण, समग्रता, निर्णय–निर्माण आदिक मुख्य संघटक शामिल होते हैं।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, समूह–गतिकी के संबंध में माना जाता है कि समूह का प्रभाव सदस्य के व्यवहार पर आवश्यक रूप से पड़ता है। समूह जितना ही अधिक समग्र होता है, सदस्यों पर उसका असर उतना ही अधिक पड़ता है।

कार्य–संतुष्टि तथा उत्पादकता में गहरा संबंध होता है। अधिकांश परिस्थितियों में जब सदस्य अपने कार्य से संतुष्ट होते हैं तो उत्पादकता बढ़ जाती है। इसलिए सदस्यों को नजरअंदाज करना उचित नहीं है।

समूह का प्रभाव सदस्यों पर किस रूप में पड़ेगा, यह बहुत अंशों में नेतृत्व प्रकार पर निर्भर करता है। छोटे समूह के लिए सत्तावादी प्रकार तथा बड़े समूह के लिए लोकतांत्रिक प्रकार अधिक उपयोगी होते हैं।

समूह का प्रभाव नेता तथा दूसरे सदस्यों के बीच संबंध पर आधारित होता है। साधारणतः एक–दूसरे के प्रति धनात्मक मनोवृति होने पर समूह का प्रभाव स्थायी

होता है। समूह की उत्पादकता बढ़ जाती है तथा समूह–लक्ष्य को प्राप्त करना आसान हो जाता है।

टिप्पणी

समूह की प्रभावशीलता तथा वैयक्तिक समस्या–समाधान में गहरा संबंध होता है। समूह जितना ही अधिक प्रभावशाली होता है, व्यक्ति की समस्या का समाधान उतना ही सरल बन जाता है।

समूह गतिकी की अवधारणा से प्रभावित होकर मनोवैज्ञानिकों ने कई प्रयोग किए जिसमें उन्होंने पाया कि समूह के सदस्यों के व्यवहारों में सामूहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन लाने में सात चरण होते हैं। सेकर्ड तथा बैकमैन के अनुसार ये सात चरण हैं–

(i) समूह का नेता समूह में सदस्यों की जरूरतों और प्रेरणाओं के अनुसार समस्या को रखता है जिसमें एक निश्चित कार्यक्रम होता है।

(ii) उस कार्य को सम्पन्न कराने में सदस्य अपने विचारों एवं भावनाओं को अभिव्यक्त करते हैं तथा किसी सदस्य द्वारा किसी बिंदु पर विरोध किए जाने पर लोग आपस में विचार–विमर्श करते हैं।

(iii) नेता सदस्यों द्वारा विरोध के बिंदुओं को बिना किसी हिचकिचाहट के स्वीकार करता है।

(iv) वह स्वयं भी समस्या से संबंधित सूचनाओं को सदस्यों को देता है।

(v) वह सदस्यों के बीच परिचर्चा को प्रोत्साहित करता है ताकि विरोध बिंदुओं का उत्तर अधिक से अधिक मिल सके।

(vi) परिचर्चा समाप्त होने पर समूह का नेता सदस्यों से स्पष्टतः सामूहिक निर्णय कराते हैं कि वे वांछित कार्यों को सफलतापूर्वक संपन्न करेंगे।

(vii) अंत में समूह का नेता इस बात की संभावना पर भी ध्यान देता है कि कितने और लोग नई क्रियाओं को कार्यरूप देने के लिए सहमत हो पाते हैं।

समूह गतिकी में दूसरा महत्वूर्ण अध्ययन लिपित तथा वाइट ने किया, जिसमें समूह के नेता द्वारा उत्पन्न किया गया सामाजिक आबोहवा का प्रभाव सदस्यों के व्यवहारों पर देखा गया।

समूह गतिकी के क्षेत्र में तीसरा प्रमुख अध्ययन किप्निस ने किया। उन्होंने अपने अध्ययन में सहभागी नेतृत्व की तुलना नेतृत्व के एक ऐसे प्रकार की तीन परिस्थितियों में की जहां नेता मात्र भाषण देकर ही सदस्यों में अपना स्थान कायम किए हुए थे।

समूह गतिकी की विशेषताएं

समूह गतिकी की विशेषताएं निम्न हैं–

- समूह–गतिकी का संबंध समूह से है। इसका अध्ययन हमेशा सामाजिक समूह के संदर्भ में किया जाता है।
- समूह–गतिकी का गहरा संबंध समूह में घटित होने वाली पारस्परिक क्रियाओं से है।
- इसका संबंध समूह में घटित विभिन्न प्रक्रियाओं से है। इसका संबंध शक्ति, शक्ति–परिवर्तन, समूह–निर्माण आदि से होता है।

टिप्पणी

- समूह गतिकी के अंतर्गत समूह के विभिन्न कार्यों का उल्लेख किया जाता है।
- समूह–समग्रता भी समूह–गतिकी का एक मुख्य संघटक है।
- नेतृत्व का गहरा संबंध समूह–गतिकी से है। नेतृत्व के प्रकार, इसके कार्य, इसकी प्रभावशीलता आदि का अध्ययन भी समूह–गतिकी के मुख्य संघटक हैं।
- सामूहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा सदस्यों के व्यवहारों में अधिक आसानी से परिवर्तन लाया जा सकता है क्योंकि इस प्रक्रिया में स्वयं इनके द्वारा ही सुझाव रखे जाते हैं और निर्णय पर पहुंचा जाता है।
- सदस्यों में कार्य संतुष्टि तथा समूह का निष्पादन बहुत कुछ नेतृत्व के प्रकार पर निर्भर करता है। लोकतांत्रिक नेतृत्व में सदस्यों में कार्य संतुष्टि तथा समूह का निष्पादन सत्तावादी नेतृत्व की अपेक्षा अधिक होता है।
- सहभागी नेतृत्व में भाषण नेतृत्व की अपेक्षा सदस्यों के व्यवहारों में परिवर्तन तेजी से आता है।
- छोटे समूहों में बड़े समूहों की अपेक्षा सदस्यों के व्यवहारों में परिवर्तन लाना अधिक आसान होता है, शायद यही कारण है कि 'समूह गतिकी' का संप्रत्यय जितना छोटे समूह पर प्रभावी होता है, उतना बड़े समूह पर नहीं।

2.2.1 समूह की अवधारणा

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति सामान्य उद्देश्य के लिए एक–दूसरे से संबंध स्थापित करते हैं और प्रभावित होते हैं तो व्यक्तियों के ऐसे संग्रह को समूह कहा जाता है। आधुनिक युग में समूह कई स्तर पर होता है। उदाहरण के लिए हम व्यावसायिक प्रतिष्ठानों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में लोगों के समूह को देख सकते हैं।

सामाजिक समूह दो शब्दों से मिलकर बना है– सामाजिक + समूह। सामाजिक यानी समाज से संबंधित समूह यानी दो या दो से अधिक व्यक्ति। इस प्रकार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के संगठन को सामाजिक समूह कहते हैं।

मैकाइवर व पेज के मुताबिक, समूह से आशय व्यक्तियों के किसी भी ऐसे समूह से है जो एक–दूसरे के साथ सामाजिक संबंधों में लाए गए हों। इस प्रकार समूह से आशय कम से कम दो या अधिक व्यक्ति और उनमें सामाजिक संबंध होने से है। सामाजिक संबंध से तात्पर्य है कि व्यक्तियों में संपर्क (चाहे शारीरिक निकटता का हो अथवा मानसिक निकटता का) और उनमें पारस्परिक संदेश (अथवा प्रभाव) का पाया जाना। समूह में व्यक्ति एक–दूसरे के प्रति जागरूक होते हैं।

समूह की धारणाएं समुच्चय और सामाजिक श्रेणियों में होती हैं। समुच्चय और सामाजिक श्रेणियां निश्चित रूप से व्यक्तियों का योग है। इन दोनों से समूह अलग होता है। समुच्चय किसी भी व्यक्ति, वस्तु आदि का हो सकता है। सामाजिक श्रेणी का संबंध समाज के धार्मिक, जातिगत, वर्गगत विभाजन से है। इन श्रेणियों में कई सामाजिक समूह हो सकते हैं। समूह श्रेणी से भी छोटी इकाई हो सकती है।

समूह न तो अनेक व्यक्तियों का समुच्चय होता है और न ही यह एक सामाजिक श्रेणी का ही। समूह में सम्मिलित लोगों के बीच में पारस्परिक सम्पर्क होता है जो

सामान्यतः स्थायी या दीर्घकालिक होता है। समूह के सदस्यों के बीच की अन्तःक्रियाएं नियमित होती हैं। यह अन्तःक्रियाएं ही व्यक्तियों को समूह का सदस्य बनाती हैं।

सभी व्यक्ति विभिन्न आधारों पर किसी न किसी समूह में विभाजित होते हैं–

टिप्पणी

(क) व्यावसायिक आधार पर : मजदूर, क्लर्क, कलाकार, अध्यापक, इंजीनियर, डॉक्टर, व्यापारी आदि।

(ख) आयु के आधार पर : बच्चे, युवा, प्रौढ़ समूह।

(ग) लिंग के आधार पर : स्त्री और पुरुष।

इसी तरह, विभिन्न धर्मों में विश्वास रखने वाले, एक साथ कक्षा में पढ़ने वाले, एक समान रुचियां रखने वाले लोग भी समूह का निर्माण करते हैं।

समूह की परिभाषा

समूह दो या दो से अधिक व्यक्तियों का संकलन तो है ही, साथ ही, उनके बीच आपस में किसी न किसी प्रकार का संबंध अवश्य होता है।

आगबर्न और निमकॉफ के अनुसार, जब दो या अधिक व्यक्ति एकत्र होकर एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं तो वे सामाजिक समूह का निर्माण करते हैं।

मैकाइवर और पेज के अनुसार, समूह से हमारा तात्पर्य मनुष्य के किसी भी ऐसे संग्रह से है जो सामाजिक संबंधों द्वारा एक–दूसरे से बंधे हों।

शेरिफ एवं शेरिफ कहते हैं कि समूह एक सामाजिक इकाई है, जिसका निर्माण ऐसे व्यक्तियों से होता है, जिनके बीच निश्चित स्थिति एवं कार्य–विषयक संबंध हो।

फेयरचाइल्ड के मुताबिक, दो या अधिक व्यक्तियों का संग्रह समूह है, जिनके बीच स्थापित मनोवैज्ञानिक अन्तःक्रिया प्रतिमान होती है, जो उसके सदस्यों द्वारा तथा सामान्यतया दूसरों के द्वारा भी, उसके विशिष्ट सामूहिक व्यवहार के कारण एवं संधि के रूप में स्वीकृत किया जाता है।

कैटेल के अनुसार, समूह उस जमात को कहते हैं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सभी सदस्यों का सहयोग लिया जाए।

एड्रिल और मेरिल के अनुसार, समूह दो या दो से अधिक व्यक्तियों का ऐसा समूह है, जिसका एक लम्बे समय तक संचार होता है और जो एक सामान्य कार्य या प्रयोजन के अनुसार कार्य करते हैं।

ग्रीन कहते हैं कि समूह ऐसे व्यक्तियों का संग्रह है, जो स्थायी है, जिनके एक या अधिक सामान्य हित या क्रियाएं हैं तथा जो संगठित हैं।

एन्थोनी गिडेन्स के अनुसार, समूह केवल व्यक्तियों का एक योग है, जो नियमित रूप से परस्पर अन्तःक्रिया करते हैं। यह नियमित अन्तःक्रियाएं समूह के सदस्यों को एक निश्चित इकाई का रूप देती हैं। आकार की दृष्टि से समूह में विभिन्नता होती है। समूह का आकार बहुत निकट संबंधों जैसे परिवार से लेकर विशाल समष्टि तक होता है।

ऐमोरी बोगार्डस के अनुसार, एक समूह में कई व्यक्ति होते हैं, दो या दो से अधिक। इन व्यक्तियों का ध्यान कुछ सामान्य लक्ष्यों की ओर होता है। ये लक्ष्य

टिप्पणी

एक–दूसरे को प्रेरित करते हैं। इन सदस्यों में एक सामान्य निष्ठा होती है और ये सदस्य एक जैसी गातिविधियों में अपनी भागीदारी करते हैं। उन्होंने समूह की व्याख्या वृहत् रूप में करते हुए समूह का संबंध संस्कृति, परिवार, समुदाय, व्यवसाय, खेलकूद, शिक्षा, धर्म, प्रजाति और संसार तक के साथ माना है। उनके अनुसार, ये सब समाज के अंग अपने आप में समूह हैं।

बोगार्डस मानते हैं कि रेडियो और टी.वी. देखने–सुनने वाले लोग भी एक समूह हैं। उनके अनुसार समूह व्यक्तियों की एक इकाई है जिनमें पारस्परिक संबंध होते हैं। यह पारस्परिक संबंध वस्तुओं या अन्य जड़ पदार्थों के बीच भी हो सकता है। जैसे, किसी बाग में पौधों का झुरमुट समूह है, किसी कॉलोनी के मकान या बहुमंजिला इमारत भी एक समूह है। इन सबका संबंध मानव समाज से है फिर भी इन्हें हम सामाजिक समूह नहीं कह सकते। इन्हें समुच्चय ही कहा जाएगा। समूह कभी भी स्थिर नहीं होता, उसमें गतिशीलता होती है और इससे आगे इसकी गतिविधियों में परिवर्तन आता है और इसका स्वरूप भी बदलता रहता है। समूह किसी तालाब के पानी की तरह बंधा हुआ नहीं रहता। उसमें गतिशीलता बराबर रहती है। कभी यह गतिशीलता बहुत धीमी होती है, कभी मध्यम और कभी–कभार बहुत तेज।

समूह में एकीकरण की भावना तब शक्तिशाली बनती है, जब समूह के सदस्य समूह को बचाए रखने में अपना कल्याण समझते हैं। समूह का एकीकरण उद्देश्यों की उपलब्धि में प्रत्येक सदस्य के योगदान और उपलब्धि की भावना से चेतना के स्तर पर जुड़ा रहता है। समूह की एकता के लिए यह भी आवश्यक है कि समूह के सदस्यों के पारस्परिक संबंध घनिष्ठ और वैयक्तिक हों। पारस्परिक प्रोत्साहन और प्रशंसा के शब्द सदस्यों के बीच में होने अनिवार्य हैं। समूह का एकीकरण और अधिक सुदृढ़ होता है, जब समूह के उद्देश्य आसानी से पूर्ण न हों और उन्हें प्राप्त के लिए निरन्तर प्रयास करना पड़े। समूह की एकता का एक आधार यह भी है कि समूह के सदस्य संगीत, अनुष्ठान, पद आदि के प्रतीकों द्वारा बार–बार सदस्यों को बांधे रखें। समूह के एकीकरण के लिए यह भी आवश्यक है कि सदस्यों को समूह की परम्पराओं, उपलब्धियों और उच्चता का बराबर ज्ञान दिया जाए।

समूह की विशेषताएं

समूह की कुछ विशेषताएं होती हैं, जो उनके सदस्यों, संपर्क, लक्ष्य, मानदंड, मूल्य आदि पर निर्भर करती हैं।

एक से अधिक सदस्यों की बहुलता : कोई भी व्यक्ति चाहे वह कितना ही महान क्यों न हों, समूह नहीं बनाता। समूह के लिए कम से कम दो व्यक्ति होने चाहिए। अधिकतम सदस्यों की संख्या वहां तक सीमित है, जहां तक सदस्यों के बीच में किसी न किसी तरह की अन्तःक्रिया सम्भव हो।

परस्पर संबंध : व्यक्तियों के किसी भी संग्रह को समूह नहीं कहा जा सकता है। समूह के लिए आवश्यक है कि व्यक्तियों में पारस्परिक सम्पर्क हों और उनके बीच में अन्तःक्रियाएं हों। मर्टन अन्तःक्रियाओं पर सबसे अधिक जोर देते हैं। निश्चित रूप से अन्तःक्रियाएं समूह की प्राणवायु हैं।

टिप्पणी

पारस्परिकता की चेतना : समूहों के सदस्यों में यह चेतना होनी चाहिए कि उनके समूह के सदस्य उनके ही भाई–बन्धु हैं। हम सब एक की आंगन की उपज हैं, यह चेतना समूह के लिए आवश्यक है। समूह के प्रति इस चेतना को कार्ल मार्क्स ने अधिक ताकत के साथ रखा है। मजदूर का संगठन यह जानता है कि अन्ततोगत्वा वे मजदूर हैं, उसकी पहचान एक मजदूर की है। मार्क्स इसके लिए वर्ग चेतना की बात करते हैं।

एकता की भावना : समूह का सदस्य अपनी अस्मिता को समूह के साथ जोड़ता है। वह यह समझता है कि समूह से पृथक उसकी न कोई पहचान है और न कोई अस्तित्व। व्यक्ति की पहचान उसके समूह से है, जिसका वह सदस्य है और दूसरी ओर समूह की पहचान उसके सदस्यों से हैं। दोनों का अस्तित्व पारस्परिक पहचान पर निर्भर है।

समान लक्ष्य : कोई भी व्यक्ति किसी भी समूह का सदस्य समान लक्षणों के कारण बनता है। कभी–कभी ऐसा भी होता है जब समूह के लक्ष्य अपने आप सदस्य के लक्ष्य बन जाते हैं। परिवार का सदस्य या तो जन्म से बनता है या विवाह से। ऐसी अवस्था में जन्म के बाद या विवाह के उपरान्त सदस्य के लक्ष्य समूह के साथ जुड़ जाते हैं। जब तक सदस्यों का समूह लक्ष्यों के साथ में तालमेल नहीं बैठाता, व्यक्ति की सदस्यता अप्रासंगिक बन जाती है।

समान मानदंड : वस्तुतः लक्ष्य साध्य होते हैं और मानदंड साधन। साध्य और साधन समूह के अनिवार्य तत्व हैं। ऐसी स्थिति में जब व्यक्ति साध्यों यानी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए समूह का सदस्य बनता है तो परिणामस्वरूप उसके साधन यानी मानदंड भी एक जैसे होते हैं। यदि परिवार उच्च व तकनीकी शिक्षा को अपने सदस्यों की समृद्धि के लिए स्वीकार करता है तो निश्चित रूप से सदस्य भी ऐसी शिक्षा प्राप्त करने के मानदंडों को स्वीकार करेंगे।

समान मूल्य : मूल्य मानदंड के ऊंचे स्तर होते हैं। इस दृष्टि से जब प्रत्येक समूह के मानदंड होते हैं तब उसके कुछ मूल्य भी होते हैं। समूह के सदस्यों का यह प्रयास होता है कि वे अपने निर्धारित मूल्यों को प्राप्त कर सकें।

समूह के कार्य

किसी भी सामाजिक समूह के कार्यों का निश्चित विभाजन संभव नहीं है। प्रत्येक समूह अपने सदस्यों की आवश्यकताओं के अनुसार कार्य करता है। कुछ कार्य ऐसे हैं जो सभी सामाजिक समूह में अनिवार्य रूप से पाये जाते हैं। इन कार्यों को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं–

1. समूह व्यक्तियों को एक शाखा के रूप में संयोजित करने का कार्य करता है।
2. समूह अपनी संरचना और आवश्यक कार्यबलों का संगठन करता है।
3. यह लोक व्यवहार का अपना मानक और मानदंड निर्धारित करता है और उनका पालन किया जाना सुनिश्चित करता है।
4. यह सदस्यों की भूमिका और संबंध की स्थिति को मजबूत करता है।

टिप्पणी

5. समूह अपने सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक प्रावधान करता है और सदस्यों को संतुष्टि प्रदान करता है।
6. समूह परस्पर बातचीत की प्रक्रिया द्वारा सदस्यों को जागरूक करता है।
7. समूह अपने निश्चित लक्ष्य और उद्देश्य के लिए कार्य करता है।
8. समूह अपने सदस्यों के सामाजिक और भावनात्मक विकास की गतिशील प्रक्रिया को स्थापित करता है।

समूह के प्रकार

सामाजिक समूह कई प्रकार के होते हैं। कमोबेश निरंतर, अंतरंग, आमने–सामने के जुड़ाव और सहयोग की विशेषता वाले समूह प्राथमिक समूह हैं, उदाहरण के लिए, परिवार, बच्चों के खेल समूह, किशोर समूह, पड़ोस समूह आदि।

(क) प्राथमिक समूह : प्राथमिक समूह का अर्थ है कि ऐसा समूह जिसके सदस्यों के बीच निकट का संबंध होता है। इस समूह में हम परिवार, मित्र, सहकर्मी आदि को शामिल करते हैं। प्राथमिक समूह समाज का सबसे छोटा समूह होता है और समाज में समन्वित विकास में या गतिशीलता में उसकी भूमिका सीमित होती है। प्राथमिक समूह अपने सदस्यों में हम की भावना विकसित करता है। इसके सदस्य एकदम निकट का संबंध रखते हैं, इसलिए इनमें अधिक एकता व हम का भाव होता है। यही भाव उन्हें एक बड़े सामाजिक समूह का योग्य सदस्य बनने की शक्ति देता है। प्राथमिक समूहों का आकार बहुत छोटा होता है। इसके सदस्यों में संवाद व अन्तःक्रिया अधिक होती है। प्राथमिक समूह के सदस्य दूसरे समूहों के अंग बनकर बड़े समूह की रचना में भागीदारी करते हैं।

(ख) द्वितीयक समूह : द्वितीयक समूह आधुनिक युग की देन मानी जाती है। हालांकि इसकी शुरुआत काफी पहले हो गई थी। इस तरह के समूहों का आकार अधिक बड़ा होता है और सभी सदस्यों में निकट संपर्क नहीं होता। इसके कारण उनके बीच अपनत्व कम होता है और परस्पर अन्तःक्रिया भी कम होती है। इस द्वितीयक समूह को हम व्यापक समूह भी कह सकते हैं क्योंकि इसमें धर्म, जाति आदि पर आधारित बड़े समूह भी इसी श्रेणी में आते हैं। वैसे इन व्यापक समूहों का अपना अलग महत्व व कार्य है। इसमें एक से अधिक समूह शामिल होते हैं, जो माध्यमिक समूह होते हैं।

(ग) माध्यमिक समूह : माध्यमिक समूह विशेष रुचि वाले समूह होते हैं, जैसे राष्ट्रीय, राजनीतिक, धार्मिक, भाईचारे और पेशेवर समूह। वे आमने–सामने संपर्क पर निर्भर नहीं हैं, हालांकि सदस्यों के बीच सीधी बातचीत हो सकती है।

(घ) व्यापक समूह : विभिन्न प्राथमिक समूहों से मिलकर बने समूह को व्यापक समूह कहते हैं। देश, धर्म, भाषा व क्षेत्र आदि के आधार पर चिह्नित समूहों को व्यापक समूह कहा जाता है। वैसे कई समाजशास्त्री इस तरह के सामाजिक समूह को अस्वीकार करते रहे हैं परंतु वर्तमान अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य में यह एक वास्तविकता है।

टिप्पणी

(ङ) पेशेवर समूह : इन तीन प्रकार के प्राथमिक समूहों के अलावा कुछ और भी समूह होते हैं। वैसे उनका सामाजिक मूल्य अधिक नहीं है फिर भी आजकल सामाजिक अध्ययनों में उन्हें भी शामिल किया जाने लगा है। इस तरह के समूहों को पेशेवर समूह कहते हैं। इनका आधार कोई न कोई पेशा या व्यवसाय होता है। इस तरह के समूहों में वकील, चिकित्सक, व्यापारी व औद्योगिक संगठन, शिक्षक, छात्र, खिलाड़ी आदि के समूह शामिल हैं। यह समूह भी कम या ज्यादा सामाजिक समूहों की तरह ही कार्य करते हैं परंतु यह अस्थाई समूह होते हैं और सदस्यों की स्थिति बदलती रहती है।

(च) संगठित और असंगठित समूह : संगठित समूह में सदस्य सामान्य लक्ष्यों के संबंध में एक संगठन के तहत समान लक्ष्य के लिए कार्य करते हैं। यह अक्सर श्रम संगठन के रूप में, विभिन्न क्लबों के रूप में और समाजसेवी संगठनों के रूप में होते हैं। इनके सदस्य अलग–अलग भूमिका निभाते हैं। असंगठित समूह में प्रत्येक सदस्य कमोबेश दूसरों से स्वतंत्र रूप से कार्य करता है। यह अत्यधिक लचीला है, सदस्य अपनी भूमिकाओं को अपनी इच्छानुसार विकसित करने के लिए स्वतंत्र रहते हैं।

2.2.2 समूह में विभेद की भूमिका

सामाजिक समूहों के सदस्यों में कई तरह के विभेद मिलते हैं। इसी प्रकार एक समाज के विभिन्न समूहों में विभिन्न आधार पर विभेद पाया जाता है। विभेद के कई सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव होते हैं। इसके बाद भी विभेद होता है जो समाज या समूह में व्यवस्था बनाए रखने का काम करता है। किसी भी सामाजिक समूह के सदस्यों का व्यवहार उनमें उपस्थित विभेद से प्रभावित होता है। विभेद के लिए दूसरे शब्दों के रूप में हम भिन्नता का प्रयोग कर सकते हैं। समूह में सदस्यों की योग्यता, कार्य क्षमता और सामूहिक कार्यों में उनके योगदान के आधार पर सदस्यों व समूह का मूल्यांकन किया जाता है। विभेद के कारण सदस्यों में कई विषयों जैसे नेतृत्व, अधिकार और कर्तव्य आदि को लेकर मतभेद और टकराव की स्थिति भी बन जाती है। इससे व्यक्तिगत और सामूहिक व्यवहार प्रभावित होता है।

विभेद का अर्थ : विभेद का अर्थ है कि अलग–अलग आधारों पर एक समूह के सदस्यों या एक समाज के विभिन्न समूहों के बीच भेद या अंतर किया जाता है। इसे हम सामाजिक स्तरीकरण की व्यवस्था से भी समझ सकते हैं। विभेद का अर्थ है कि सदस्यों या समूहों को कुछ एक खास तरह का व्यवहार करने के लिए अधिकृत किया जाता है, साथ ही उन्हें कुछ विशेष कार्य करने से प्रतिबंधित किया जाता है। मानवीय दृष्टिकोण से यह उचित नहीं है कि जाति, धर्म, रंग, क्षेत्र आदि के आधार पर किसी के साथ भेदभाव किया जाए। इसके बाद भी उदार और अनुदार, सभी समाजों में यह स्थिति मौजूद है। भारत जैसे पारम्परिक समाज में, जिसमें पहले से कई स्तर पर विभेद की स्थिति है, यह समस्या और भी गम्भीर हो जाती है। शासन से लेकर समाज तक के स्तर पर इस विभेद को समाप्त करने के सभी प्रयास अभी तक सफल नहीं हो सके हैं।

टिप्पणी

विभेद के प्रकार

समूह के सदस्यों और समूहों में विभेद के कई कारण हैं। भारतीय समाज के सन्दर्भ में धर्म व जाति दो बड़े आधार हैं। दुनिया के सभी समाजों में विभेद के जो मुख्य आधार हैं उनमें भी धर्म एक प्रमुख आधार है। इसके अलावा नस्ल, रंग, क्षेत्र, लैंगिक, आर्थिक स्थिति, शिक्षा जैसे आधार सभी समाजों में उपस्थित हैं। सामाजिक संरचनाओं में स्थानीय कारणों से भी विभेद दिखाई देता है।

उम्र, पीढ़ी और लैंगिक विभेद : भारतीय समाज में समूहों में उम्र, पीढ़ी और लैंगिक आधार पर समूह के सदस्यों में विभेद स्पष्ट दिखाई देता है। विशेष रूप से परिवार व सामाजिक संगठनों में यह विभेद है। युवा पीढ़ी की अपेक्षा वरिष्ठ पीढ़ी को अधिक अधिकार व सामाजिक नियंत्रण मिला है। इससे समूहों में अनेक मामलों में पीढ़ियों में टकराव देखा जा सकता है। युवा पीढ़ी अधिक स्वतंत्रता और अधिकार चाहती है जबकि वरिष्ठ पीढ़ी अपना वर्चस्व बनाए रखना चाहती है। सामाजिक कार्यों में आज भी वरिष्ठ पीढ़ी निर्णायक भूमिका में होती है।

लैंगिक विभेद की स्थिति सभी समाजों में है। प्रगतिशील और विकसित समाजों में भी स्त्री व पुरुष के बीच विभेद किया जाता है। भारतीय समाज में यह समस्या अधिक गम्भीर है। दुनिया के सभी समाजों में स्त्रियों की पुरुषों की तुलना में पारिवारिक, सामाजिक कार्यों में निर्णायक स्थिति नहीं है। उन्हें पारिवारिक सम्पत्ति में अधिकार भी सभी समाजों में नहीं दिया गया है। ज्यादातर देशों में स्त्री को पुरुष के बराबर कानूनी अधिकार दिए गए हैं परंतु समाज के स्तर पर आज भी भेदभाव किया जाता है। भारत में शिक्षा और रोजगार के मामले में आज भी स्त्रियां पुरुषों की तुलना में पिछड़ी हुई हैं। शहरी क्षेत्रों में स्थिति बदली है पर ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत सुधार नहीं हुआ है। इसके अलावा सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक व राजनीतिक रूप से पिछड़े समाजों में स्त्री आज भी विभेद की शिकार है। राजनीतिक स्तर पर देखें तो संवैधानिक प्रावधानों के बाद भी उनकी भागीदारी कम है। इसके अलावा राजनीतिक नेतृत्व के मामले में भी वे विभेद की शिकार होती हैं।

पुराने समय की अपेक्षा इसमें कमी आई है फिर भी इसे लेकर समूह के सदस्यों में अक्सर टकराव और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती रहती है। पीढ़ियों के बीच टकराव का प्रभाव हमें कई क्षेत्रों में दिखाई देता है। इससे सामाजिक व्यवहार में बदलाव आ रहा है। समूहों में होने वाले परिवर्तनों में साफ देखा जा सकता है कि युवा पीढ़ी के व्यवहार में काफी परिवर्तन आया है जिसका प्रभाव समूह के व्यवहार पर दिखाई दे रहा है। इसी प्रकार लैंगिक विषमता को लेकर परिवर्तन देखा जा सकता है। हालांकि भारतीय समाज में आज भी स्त्री व पुरुष के बीच समानता नहीं है, दोनों को समान सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं। इससे समाज व उसके समूहों में सकारात्मक परिवर्तन की दिशा प्रभावित होती है।

आर्थिक विभेद : दुनिया भर के समाजों में आर्थिक आधार पर काफी विभेद देखने को मिलता है। रोजगार, व्यापार, उद्योग आदि पर कुछ प्रभावशाली समूहों का अधिकार है जबकि ज्यादातर समूह इससे वंचित हैं। भारतीय समाज में जातीय आधार

टिप्पणी

पर कुछ विशेष जातियों का अधिक लाभ वाले कामों पर कब्जा रहा जबकि ज्यादातर समूहों के हिस्से में अधिक मेहनत वाले पर कम लाभ वाले कार्य रहे। इससे विभिन्न सामाजिक समूहों में आर्थिक विभेद ने स्थाई रूप ले लिया। आर्थिक रूप से लाभ कम होने के कारण ऐसे जातीय समूहों का आर्थिक के साथ ही सामाजिक व राजनीतिक विकास भी अधिक नहीं हो सका। अनेक जातीय समूह आज भी आर्थिक दृष्टि से विभेद के शिकार हैं।

समूहों के बीच आर्थिक विभेद तो है ही, समूहों में सदस्यों के बीच भी आर्थिक विभेद है। समूह में जिन सदस्यों के पास अधिक आर्थिक शक्ति होती है वह नेतृत्व की स्थिति में होते हैं। ऐसे सदस्य अपना नेतृत्व बनाए रखने के लिए अन्य सदस्यों के विकास को बाधित करते हैं। वे उनके विकास में उतना सहयोग नहीं करते जितने की अपेक्षा की जाती है। इससे समूह में आर्थिक असंतुलन हमेशा बना रहता है।

एक ही सामाजिक समूह में सदस्यों में आर्थिक आधार पर विषमता के कारण टकराव देखा जा सकता है। भारत के सामाजिक समूहों में यह समस्या गम्भीर है। भारत में आर्थिक संसाधनों पर कुछ समूहों का नियंत्रण है जबकि ज्यादातर समूह आर्थिक साधनों की दृष्टि से बहुत कमजोर हैं। विभिन्न समूहों में भी लोगों की आर्थिक स्थिति में बड़ा अंतर है। इसके कारण समूह के सभी लोग समूह के उद्देश्यों की पूर्ति में वांछित योगदान नहीं दे पाते हैं।

भारतीय सामाजिक समूहों में कई ऐसे हैं जो आर्थिक दृष्टि से सबसे निचले पायदान पर हैं। उत्पादन और उपभोग, दोनों में उनकी भागीदारी नगण्य है। इसके कारण उन समूहों का सामाजिक उन्नतिकरण संभव नहीं हो पा रहा है। ऐसे समूह सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप में हमेशा पिछड़े रहते हैं। इससे उनके समूह की प्रगति बाधित रहती है। इसीलिए उनमें अन्तःक्रिया भी कमजोर रहती है।

आर्थिक रूप से कमजोर सदस्य उपभोग के क्षेत्र में भी पिछड़े रहते हैं। इससे वह आर्थिक विकास के समकालीन ढांचे में फिट नहीं हो पाते। बाजार और समग्र रूप में अर्थव्यवस्था के विकास में उनका योगदान कम रहता है। इससे वह लाभ प्राप्त करने के संदर्भ में भी पिछड़ जाते हैं।

राजनीतिक विभेद : मानव समाज में सत्ता पर हमेशा उसी का कब्जा रहा जो शक्तिशाली समूह से संबंधित रहा। एक बार जिस समूह के पास राजनीतिक सत्ता आ गई फिर उसने उसे कभी छोड़ा नहीं। अपनी राजनीतिक शक्ति को बचाने और बढ़ाने के लिए उसने दूसरे सामाजिक समूहों को राजनीतिक दृष्टि से हमेशा कमजोर करने का प्रयास किया। भारतीय समाज मे देखें तो राजनीतिक सत्ता हमेशा एक वर्ग के हाथ में रही। समाज का बहुसंख्यक हिस्सा जो निचली जातियों में शामिल किया गया, राजनीतिक शक्ति से हमेशा वंचित रखा गया।

आधुनिक समय में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं के कारण यह देखा गया है कि किस तरह से राजनीतिक शक्तियों का एक समूह से दूसरे समूह में अंतरण हुआ है। इसके कारण अनेक सामाजिक समूहों में, जो कल तक सभी दृष्टि से पिछड़े हुए थे, विकास व परिवर्तन दिखाई दे रहा है। हालांकि समूहों में राजनीतिक शक्ति के

आधार पर परिवर्तन की स्थिति अभी उन समूहों के एक विशेष हिस्से तक ही है पर इससे उन समूहों में राजनीतिक चेतना आई है। इसका परिणाम उनकी सामाजिक स्थिति में बदलाव के रूप में देखा जा सकता है।

टिप्पणी

जातिवादी विभेद : भारतीय समाज में विभेदीकरण का एक बड़ा आधार जातीय व्यवस्था है। इस व्यवस्था में कुछ जातियों को श्रेष्ठ माना गया है और उन्हें सभी प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक अधिकार प्राप्त हैं। इसके विपरीत ज्यादातर जातियों को यह अधिकार नहीं है। 1947 के बाद भारत में संवैधानिक व्यवस्था के कारण स्थिति में कुछ परिवर्तन आया है। इसका प्रभाव उन जातीय समूहों की अन्तःक्रियाओं में देखा जा सकता है पर अभी भी बहुत भेदभाव है। इसके कारण सामाजिक तनाव और टकराव भी बढ़ता रहता है। इससे सभी समूहों का विकास प्रभावित होता है।

विभेद के प्रभाव

वैसे तो सामाजिक विभेद को न्यायोचित नहीं माना जाता फिर भी समाज व समूह के स्तर पर विभेद के कुछ सकारात्मक प्रभाव हैं। उदाहरण के लिए समाज में व्यवस्था सुचारु बनाए रखने के लिए आर्थिक, शैक्षिक व बाहुबल वाले समूहों को प्राथमिकता दी जाती है। उन्हें शेष समूहों का नेतृत्व करने का अधिकार दिया जाता है। जब शक्तिशाली व समर्थ समूह और व्यक्ति नेतृत्व करते हैं तो वह पूरे समाज को विकास के मार्ग पर ले जाते हैं। बौद्धिक रूप से शक्तिशाली लोगों में समूह और सदस्यों के हित में निर्णय लेने की क्षमता होती है। शिक्षित सदस्य समूह के अन्य सदस्यों को भी शिक्षा की दिशा में अग्रसर करने का प्रयास करते हैं। इसी प्रकार राजनीतिक रूप से समर्थ व्यक्ति अपने समूह के राजनीतिक अस्तित्व को और अधिक मजबूत करते हैं। समूह में ऐसे सदस्यों को दूसरे सदस्यों पर प्राथमिकता दी जाती है, उन्हें अधिक अधिकार दिए जाते हैं जो समाज व समूह को आगे ले जा सकें। इसके साथ ही ऐसे समर्थ सदस्य और समूह दूसरे सदस्यों व समूहों के सशक्तिकरण का आधार बनते हैं।

2.2.3 समूह की स्थिति

आगबर्न एवं निमकाफ ने सामाजिक समूहों के सन्दर्भ में कहा था कि जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति एक साथ मिलते हैं और एक–दसरे को प्रभावित करते हैं तो वे सामाजिक समूह का निर्माण करते हैं। सामाजिक समूह की स्थिति को निम्नलिखित तथ्यों से समझा जा सकता है–

- **व्यक्तियों का समूह** : किसी भी समूह का निर्माण एक अकेले व्यक्ति द्वारा नहीं हो सकता। इसके लिए दो या दो से अधिक व्यक्तियों का होना आवश्यक है।
- **उद्देश्य पूर्ति** : प्रत्येक समूह का निर्माण किसी न किसी उद्देश्य के कारण ही होता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समूह के सदस्यों में कार्य विभाजन किया जाता है।

टिप्पणी

- **सामान्य रुचि** : किसी भी समूह की स्थापना उन्हीं व्यक्तियों द्वारा होती है जिनकी रुचि एक समान होती है। जैसे एक ही पसंद का होना।
- **एक समान हित** : जब व्यक्ति का हित समान होता है तो वह समूह का निर्माण करना आरम्भ कर देता है। विरोधी हितों वाले व्यक्तियों से समूह का निर्माण करना असंभव हो जाता है।
- **लक्ष्य** : कोई समूह समूह के रूप में उसी समय तक कायम रह सकता है जब तक वह किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक साथ मिलकर प्रयास करते हैं। यदि लक्ष्य प्राप्ति न हो तो समूह में एकता की भावना नहीं रह पाएगी और समूह टूट जाएगा।
- **ऐच्छिक सदस्यता** : समूह की सदस्यता ऐच्छिक होती है। इसका अर्थ है कि सदस्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह को स्वीकारता है। व्यक्ति सभी समूहों का सदस्य नहीं बनता वरन् उन्हीं समूहों की सदस्यता ग्रहण करता है जिनमें उसके हितों, आवश्यकताओं एवं रुचियों की पूर्ति होती हो।
- **स्तरीकरण** : समूह में सभी व्यक्ति समान पदों पर नहीं होते वरन् वे अलग–अलग प्रस्थिति एवं भूमिका निभाते हैं। अतः समूहों में पदों का उतार–चढ़ाव पाया जाता है।
- **सामूहिक आदर्श** : प्रत्येक समूह में सामूहिक आदर्श एवं प्रतिमान पाए जाते हैं जो सदस्यों के पारस्परिक व्यवहारों को निश्चित करते हैं एवं उन्हें एक स्वरूप प्रदान करते हैं। प्रत्येक सदस्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह समूह के आदर्शों एवं प्रतिमानों जैसे प्रथाओं, कानूनों, लोकाचारों, जनरीतियों आदि का पालन करें।
- **स्थायित्व** : समूह में थोड़ी बहुत मात्रा में स्थायित्व भी पाया जाता है। हालांकि कुछ समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के बाद ही समाप्त हो जाते हैं, बावजूद इसके वे इतने अस्थिर नहीं होते कि वे सदा के लिए बने या अगले दिन ही समाप्त हो जाएं। इसलिए समूह में स्थायित्व पाया जाता है।
- **समझौता** : किसी भी समूह की स्थापना तभी संभव है, जब उसके सदस्यों में समूह के उद्देश्यों, कार्य प्रणाली, स्वार्थ पूर्ति, नियमों आदि को लेकर आपस में समझौता हो।
- **ढांचा** : प्रत्येक समूह की एक संरचना या ढांचा होता है अर्थात उसके नियम, कार्यप्रणाली, अधिकार, कर्तव्य, पद एवं भूमिकाएं आदि तय होते हैं और सदस्य उन्हीं के अनुसार आचरण करते हैं।
- **अंतर्वैयक्तिक संबंध** : एक समूह में परस्पर अन्तःक्रिया का होना अत्यंत ही आवश्यक होता है जब तक वह किसी अन्य व्यक्ति के साथ अन्तः क्रिया नहीं करेगा तब तक वह समूह का सदस्य नहीं कहला सकता।
- **आदान–प्रदान** : एक समूह के सदस्य अपने विचारों का ही आदान–प्रदान नहीं करते बल्कि एक–दूसरे के कष्ट में सहयोग एवं सहायता भी करते हैं।

टिप्पणी

सहयोग एवं आदान–प्रदान से ही समूह के सदस्य अपने सामान्य हितों की पूर्ति कर पाते हैं।

- **स्पष्ट संख्या** : एक सामाजिक समूह में सदस्यों की संख्या स्पष्ट होनी चाहिए, जिससे उसके आकार एवं प्रकार को स्पष्ट रूप से समझा जा सके।
- **हम–भावना** : समूह के सदस्य एक–दूसरे की सहायता करते हैं तथा अपने हितों की प्राप्ति के लिए वे इकट्ठे होते हैं।

सामाजिक समूह की स्थिति

विभिन्न सामाजिक समूहों की वृहत्तर समाज में अलग–अलग स्थिति होती है। इसी प्रकार एक समूह में विभिन्न व्यक्तियों की स्थिति अलग–अलग होती है। इस प्रकार सामाजिक प्रभाव और व्यवहार के अध्ययन की दृष्टि से सामाजिक स्थिति को हम दो श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं।

समूहों की स्थिति

समूहों की स्थिति उनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि स्थितियों पर निर्भर करती है। इसी स्थिति के आधार पर समूह के सदस्यों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक स्थिति : जिन समूहों की सामाजिक स्थिति दूसरों से बेहतर होती है उनके सदस्यों में अधिक गतिशीलता पाई जाती है। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उनकी सक्रियता व भागीदारी के कारण उन समूहों में अन्तःक्रियाओं में तेजी रहती है। इसके कारण वह समूह लगातार प्रगति करते हुए अन्य समूहों से बेहतर स्थिति में आ जाते हैं। भारतीय समाज में हम देख सकते हैं कि कुछ जातीय समूह हमेशा शिखर पर रहते हैं। इसका कारण उन जातियों के सदस्यों की सक्रियता और अधिक गतिशीलता है। इन समूहों के सदस्य राजनीति, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, संस्कृति सभी क्षेत्रों में दूसरों की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में रहते हैं।

आर्थिक स्थिति : दुनिया के सभी समाजों में व्यक्ति व समूहों की स्थिति का निर्धारण का एक बड़ा आधार उनकी आर्थिक स्थिति है। आर्थिक स्थिति का प्रभाव सामाजिक, राजनीतिक व अन्य स्थितियों को भी प्रभावित करता है। पूर्व आधुनिक समय में भी आर्थिक रूप से संपन्न व आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण रखने वाले समूह व उनके सदस्य सभी दृष्टि से दूसरे समूहों की अपेक्षा उच्च स्थिति में रहते थे। आधुनिक युग में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के कारण आर्थिक संसाधनों का विस्तार होने से उन समूहों को भी अपनी स्थिति सुधारने का अवसर मिला जो पहले निचली पायदान पर थे। शासन व्यवस्था में आर्थिक रूप से सक्षम समूहों व उनके सदस्यों को अधिक महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त हो जाती है।

राजनीतिक स्थिति : राजनीतिक समूहों की स्थिति कुछ ऐसी है जैसे सांडों को खुला छोड़कर खेत के रखवालों से कहा जाए कि फसल की रक्षा करना व उनके सदस्यों की स्थिति को प्रभावित करने वाला एक कारण राजनीतिक शक्ति भी है। सामन्तशाही

टिप्पणी

के दौर में सत्ता का नियंत्रण कुछ ही हाथों में होता था। इससे कुछ विशेष समूह हमेशा उच्च स्थिति में रहते थे। लोकतांत्रिक शासन के कारण अब ऐसा नहीं है। भारतीय समाज में देखें तो अनेक जातीय समूहों ने राजनीतिक शक्ति पाने के बाद अपनी सामाजिक स्थिति को सुधारा है। इसके साथ ही इन समूहों में राजनीतिक चेतना का विस्तार होने से सामाजिक गतिशीलता में उनकी भागीदारी बढ़ी है।

सांस्कृतिक स्थिति : किसी भी सामाजिक समूह की सांस्कृतिक स्थिति उसके सामाजिक स्तरीकरण का एक आधार रही है। सांस्कृतिक दृष्टि से सम्पन्न और सक्रिय समूहों में अधिक गतिशीलता देखी जाती है। सांस्कृतिक स्थिति समूह की राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक स्थिति के साथ ही शैक्षणिक स्थिति से भी प्रभावित होती है।

समूह में व्यक्ति की स्थिति

समूह में व्यक्ति की स्थिति सामाजिक संरचना में स्थिति के विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है। समाज में सभी व्यक्ति योग्यता व क्षमता के आधार पर एक जैसे नहीं होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का समूह में स्थान उसकी योग्यता व क्षमता से निर्धारित होता है। व्यक्ति की क्षमता व योग्यता कई कारणों से प्रभावित व संचालित होती है। समूह में कुछ लोगों को क्षमता व योग्यता होने के बाद भी उचित अवसर नहीं मिलने से वे समाज के विकास में पूरा योगदान नहीं दे पाते। समूह में व्यक्ति की स्थिति उसकी आर्थिक, शैक्षिक योग्यता से भी निर्धारित होती है।

योग्यता : किसी भी समूह में जो सदस्य दूसरों से अधिक योग्यता रखते हैं वे सामाजिक क्रियाओं में अधिक प्रभावी भूमिका निभाते हैं। ऐसे सदस्य दूसरों की अपेक्षा अधिक कार्य क्षमता रखते हैं। इसके कारण वे समूह का नेतृत्व करते हैं जिससे उनकी समूह में स्थिति बेहतर होती है। जिस समूह में योग्य व्यक्तियों की संख्या अधिक होती है वह समूह भी अधिक गतिशीलता के कारण दूसरे समूहों से आगे निकल जाता है।

आर्थिक स्थिति : समूह में जिन सदस्यों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है वह अपने समूह में सामुदायिक गतिशीलता को बढ़ाने का काम करते हैं। वह दूसरे सदस्यों को बेहतर आर्थिक स्थिति के लिए प्रोत्साहित करते हैं, उसमें सहयोग देते हैं। इससे उनकी स्थिति में तो सुधार होता ही है, पूरे समूह की स्थिति भी उन्नत होती है। कुछ सामाजिक समूह अधिक उद्यमशील होते हैं जिससे उसके सदस्यों का विकास होता है। सिख, पारसी, सिंधी, गुजराती आदि जातीय समूहों में लोगों में उद्यमशीलता अधिक होती है। इसके कारण उनकी स्थिति में निरन्तर प्रगति दिखाई देती है।

शैक्षिक स्थिति : सामाजिक समूह में जो लोग शिक्षा के माध्यम से स्वयं को समुन्नत करते हैं उनकी स्थिति भी समुन्नत हो जाती है। ऐसे लोग दूसरों को भी शिक्षा के लिए प्रेरित करते हैं। पारम्परिक रूप में भारतीय समाज के कुछ जातीय समूह शुरू से शिक्षा पर अधिकार के कारण दूसरे समूहों से उच्च स्थिति में रहते थे। पर अब स्थिति बदल रही है। अनेक पिछड़ी व निचली जातियों के सामाजिक समूहों में लोग शिक्षा के आधार पर आगे बढ़ रहे हैं। इससे उनकी समूह में स्थिति में सुधार हुआ है, साथ ही उनके समूह की स्थिति भी सुधरी है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. "समूह गतिकी अध्ययन का ऐसा क्षेत्र है, जो उन दबावों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूहों में व्यक्तियों का व्यवहार प्रभावित होता है।" यह परिभाषा किसने दी?

   (क) लेविन (ख) फिशर

   (ग) रेबर एवं रेबर (घ) वाइट

2. ऐसा समूह जिसके सदस्यों के बीच निकट का संबंध होता है वह कहलाता है–

   (क) प्राथमिक समूह (ख) द्वितीयक समूह

   (ग) माध्यमिक समूह (घ) व्यापक समूह

2.3 समूह गतिकी : मानदंड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा एवं सामाजिक आवारगी

समूह गतिकी के अंतर्गत मानंदड, समूह समग्रता, सामाजिक सुविधा एवं सामाजिक आवारगी आदि तथ्यों को क्रमशः इस प्रकार समझा जा सकता है।

2.3.1 मानदंड

समाज अपने सदस्यों के लिए कुछ निश्चित प्रकार के आदर्श, आचरण या व्यवहार निर्धारित करता है, जिनका पालन करना उसके सदस्यों से अपेक्षित होता है। समाजशास्त्रीय भाषा में इन्हें मानदंड कहा जाता है। मानदंड किसी समूह के भीतर अव्यक्त नियम होते हैं जो इस बात को निर्देशित करते हैं कि इसके सदस्यों को कैसे व्यवहार करना चाहिए या कैसे नहीं करना चाहिए। मानदंड सामान्यतया पूर्वसहमति पर आधारित अनौपचारिक नियम होते हैं।

मानदंडों का अनुकरण कराने के लिए दंड व्यवस्था भी होती है। जोकि मानदंडों की गंभीरता के आधार पर तय होती है। यह सामाजिक रूप से निंदा करना, शारीरिक दंड या कानूनी प्रकिया जैसे रूपों में पाया जाता है। मानदंड परिभाषित करते हैं कि समाज ने अच्छे, सही और महत्वपूर्ण के रूप में क्या परिभाषित किया है, और समाज के अधिकांश सदस्य उनका पालन करते हैं।

मानदंड के प्रकार

मानदंड दो प्रकार के होते हैं–

निर्देशात्मक मानदंड और निषेधात्मक मानदंड।

जिस मानदंड से हमारा आचरण निर्देशित होता है, उसे निर्देशात्मक मानदंड कहा जाता है और जो मानदंड हमें किसी आचरण को करने की इजाजत नहीं देता है, उसे निषेधात्मक मानदंड कहा जाता है।

टिप्पणी

जैसे प्रत्येक आधुनिक समाज यह अपेक्षा रखता है कि सार्वजनिक स्थानों पर किसी को नग्न नहीं घूमना चाहिए। यह एक निषेधात्मक मानदंड का उदाहरण है। लेकिन समाज यदि यह मानता है कि लोगों को अपने माता–पिता का सम्मान करना चाहिए तो यह निर्देशात्मक मानदंड है।

दूसरे शब्दों में समाज जो नहीं करने की इजाजत देता है, उसे निषेधात्मक मानदंड कहा जाता है।

निर्देशात्मक एवं निषेधात्मक मानदंड में क्या फर्क है, इसे लेस्ली ने बहुत ही स्पष्ट ढंग से रखा है– निर्देशात्मक मानदंड निर्देश देता है जो लोगों को करना चाहिए और निषेधात्मक मानदंड लोगों को यह निर्देश देता है कि लोगों को क्या नहीं करना चाहिए।

इसके अलावा एक और प्रकार का मानदंड होता है, सामुदायिक मानदंड जिसे हम सार्वभौम मानदंड भी कह सकते हैं। समाज में कुछ वैसे भी मानदंड होते हैं, जो सार्वभौम होते हैं। समाज के हर एक सदस्य को उस मानदंड के अनुसार आचरण करना होता है। वैसे आदर्श या मानदंड को सामुदायिक मानदंड कहा जाता है। दूसरी तरफ समाज में कुछ ऐसे भी मानदंड होते हैं, जो समाज के विभिन्न उपखण्डों के स्तर पर पाए जाते हैं। उसे बीयरस्टेट ने सहचारी मानदंड कहा है।

जैसे भारतीय समाज में अपने गुरुजनों को प्रणाम करना सामुदायिक मानदंड कहा जाता है क्योंकि ये सब पर लागू होता है। वहीं जनेऊ धारण करना सहचारी मानदंड माना जाता है क्योंकि कई जातियों के लिए यह समान रूप से आवश्यक नहीं है।

यहां यह बात ध्यान में रखने लायक है कि जो आज सामुदायिक मानदंड है, वह कल सहचारी मानदंड भी हो सकता है। उसी तरह जो आज सहचारी मानदंड है, वह कल सामुदायिक मानदंड भी हो सकता है। कई बार सामुदायिक मानदंड एवं सहचारी मानदंड समय के साथ समाप्त भी हो जाते हैं और उसकी जगह कोई नया सामुदायिक मानदंड एवं सहचारी मानदंड स्थापित हो जाता है। कुछ समाजशास्त्रियों ने मानदंड को वास्तविक मानदंड एवं नैतिक मानदंड के रूप में विभाजित किया है।

जैसे अहिंसा, सच बोलना, ईमानदारी से काम करना नैतिक मानदंड हैं लेकिन हम व्यवहार में कुछ और ही करते हैं। क्रोध में हम थोड़ा हिंसक हो जाते हैं, अपने किसी खास उद्देश्य की पूर्ति के लिए झूठ भी बोल लेते हैं या कभी हम अपने कार्य में पूरी निष्ठा नहीं रखते हैं। समाज ऐसे नैतिक विचलनों को सहन करता है, कर्ता को इसके लिए कोई विशेष दंड नहीं दिया जाता है। यह भी एक किस्म का मानदंड है। इस प्रकार वास्तविक जीवन के आचरण को हम वास्तविक मानदंड कहते हैं। कुछ समाजशास्त्रियों ने इसे स्टेटिस्टिकल्स नॉर्क्स भी कहा है।

बीयरस्टेट ने मानदंड को 14 भागों में बांटा है– कानून, अधिनियम, नियम, नियमन, प्रथा, लोकाचार, लोकरीति, निषेध, फैशन, संस्कार, कर्मकाण्ड, समारोह, परंपरा, शिष्टाचार।

इन 14 प्रकार के मानदंडों को उन्होंने फिर तीन भागों में विभाजित कर दिया है– लोकरीति, लोकाचार और कानून।

टिप्पणी

लोकरीति : लोकरीति सामाजिक व्यवहार एवं आचरण की सामान्य विधियों को कहा जाता है, जैसे वस्त्र पहनने की शैली, अभिवादन करने के तरीके । कभी–कभी हम अभिवादन के क्रम में नमस्कार की जगह हेलो से काम चला लेते हैं। धोती की बजाय पैंट–शर्ट या कुर्ता–पायजामा भी पहन लेते हैं। इस प्रकार लोकरीति अनिवार्य कार्यविधि नहीं होती।

लोकाचार : लोकाचार भी आचरण की विधियां हैं, लेकिन लोकाचार का पालन करना समाज के सभी सदस्यों के लिए अनिवार्य होता है। लोकाचार की अवहेलना करने वाले लोगों को समाज कुछ न कुछ दंड अवश्य देता है, जैसे जाति से निष्कासन करना आदि।

कानून : लोकरीतियों और लोकाचार से हटकर कानून लिखित प्रावधान के रूप में होते हैं, जो सामाजिक मूल्यों एवं मान्यताओं को ध्यान में रखकर बनाए जाते हैं। विभिन्न प्राधिकारियों को इसका पालन सुनिश्चित कराने की जिम्मेदारी भी सौंपी जाती है। जरूरत पड़ने पर न्यायपालिका इसका विश्लेषण करती है।

औपचारिक और अनौपचारिक मानदंड दो अलग विभाजन हैं। इनमें ऊपर बताए गए सभी मानदंड शामिल हैं। औपचारिक मानदंड लिखित नियम होते हैं जिनका पालन सबको करना ही होता है। कानून औपचारिक मानदंड हैं, लेकिन अस्पताल या विद्यालय में आप कैसे व्यवहार करते हैं, यह अनौपचारिक मानदंड हैं।

मानदंडों की विशेषताएं

मानदंडों की विशेषताएं निम्न हैं–

1. सामाजिक सांस्कृतिक मानदंड सामूहिक होते हैं।
2. सामाजिक मानदंड सामाजिक मानक हैं।
3. सामाजिक–सांस्कृतिक मानदंड समाज द्वारा स्वीकार किए जाते हैं।
4. मानदंड लोगों की भावनाओं से जुड़े होते हैं।
5. मानदंड गतिशील होते हैं।
6. मानदंड भिन्नताएं लिए होते हैं।
7. मानदंड सामाजिक कल्याण व आवश्यकताओं के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

2.3.2 समूह समग्रता

समूह समग्रता का अर्थ है कि समूह के सभी सदस्य किस सीमा तक बने रहने के लिए प्रेरित रहते हैं। जिस सीमा तक समूह के सदस्य समूह में बने रहने के लिए प्ररित रहते हो, समूह की समग्रता उतनी ही अधिक समझी जाती है। समूह समग्रता समूह की संरचना की एक प्रमुख डायमेंसन है। समूह समग्रता बताती है कि सदस्यों के लिए समूह कितना आकर्षक है। जिस कारण से भी सदस्यों के लिए समूह जितना आकर्षक होगा, सदस्य उतना ही समूह में बने रहेंगे और तब समूह की समग्रता उतनी ही अधिक होगी।

फेल्डमैन (1985) के अनुसार, समूह समग्रता से तात्पर्य उस सीमा से होता है जिस सीमा तक समूह के सदस्यों में सदस्य बने रहने की इच्छा होती है।

फेस्टिंगर (1950) के अनुसार, समूह समग्रता उन सभी बातों का परिणाम होता है जो सदस्यों को समूह में रहने के लिए बाध्य करता है।

टिप्पणी

टेलर, पेपलाऊ एवं सीयर्स (2006) कहते हैं, समूह समग्रता का अर्थ धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों ही होता है जो सदस्यों को समूह में रहने का कारण होता है। समग्रता पूरे समूह की एक विशेषता होती है जो समूह के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की संयोजित वचनबद्धता पर आधारित होती है।

समूह के व्यवस्थित व सुचारु संचालन के लिए उसमें सामंजस्य का होना आवश्यक है। सामंजस्य दो स्तरों पर होता है। पहला, समूह के सदस्यों के बीच और दूसरा, समूहों के बीच। यह सामंजस्य वस्तुतः सदस्यों के निजी व सार्वजनिक व्यवहार के बीच होता है। समूह के प्रति दायित्वों को लेकर सभी सदस्यों की भावनाएं व मनोवृत्ति एक जैसी नहीं होती। उन्हें नियंत्रित व निर्देशित करना पड़ता है। कोई भी व्यक्ति दूसरों के लाभ के लिए काम करना नहीं चाहता। इसके लिए उसे कुछ प्रेरणाओं की जरूरत होती है। सामाजिक समूह में आदर्श व मूल्य प्रेरक का कार्य करते हैं। सामान्य रूप में समूह के ज्यादातर सदस्य समूह के दायित्वों को लेकर सहमत होते हैं। इससे समूह में सामंजस्य बना रहता है। असहमति अधिक होने पर समूह में अव्यवस्था फैल जाती है जिसके कारण समूह का अस्तित्व तक खतरे में पड़ जाता है। किसी भी सामाजिक समूह में सामंजस्य का आधार सदस्यों में परस्पर विश्वास पर निर्भर करता है। यह माना जाता है कि जो देश आर्थिक दृष्टि से मजबूत हैं उनमें सामाजिक समूहों में विश्वास का स्तर ऊंचा होता है। हालांकि परस्पर विश्वास व्यक्ति की आर्थिक स्थिति या क्षमता पर निर्भर नहीं करता परंतु उसका प्रभाव मानव व्यवहार पर अवश्य होता है। आर्थिक निश्चिंतता वाले समूह के सदस्यों में अधिक गतिशीलता होती है। उनके बीच संवाद की बेहतर स्थिति के कारण वह निजी और सामुदायिक, दोनों विकास पर काम करने के लिए सहमत रहते हैं। इसके विपरीत जिन सामाजिक समूहों की आर्थिक स्थिति कमजोर होती है उनके सदस्यों में परस्पर विश्वास की कमी होती है। इससे सामूहिकता की भावना नहीं बन पाती। इसके अलावा जिन समूहों में सदस्यों की आर्थिक स्थिति में बहुत अधिक अंतर होता है, यानी कुछ सदस्य अमीर होते हैं और ज्यादातर गरीब, उनमें भी गतिशीलता का अभाव देखा गया है। आर्थिक रूप से कमजोर सदस्य समूह को गतिशील रखने में योगदान नहीं दे पाते। वह निजी विकास को ही प्राथमिकता देते हैं।

यद्यपि सामंजस्य एक बहुआयामी प्रक्रिया है, लेकिन इसे चार मुख्य घटकों में विभाजित किया जा सकता है– सामाजिक संबंध, कार्य संबंध, कथित एकता और भावनाएं।

सामाजिक संबंध : किसी भी समाज या समूह के निर्माण के लिए उसके सदस्यों के बीच सामाजिक संबंध का होना अनिवार्य है। सामाजिक संबंध का आधार जन्म, जाति, धर्म आदि होते हैं। समूह गतिकी की दृष्टि से सामंजस्य को सामाजिक संबंध

टिप्पणी

का कार्य–कारण आधार स्वीकार किया जाता है। सदस्यों के बीच यदि सामुदायिक सामंजस्य की भावना न हो तो किसी भी प्रकार के सामाजिक संबंध को बनाना और उसे जारी रखना असंभव हो जाता है। निजी से लेकर सामाजिक संबंध तक सदस्यों में कई स्तर पर सामंजस्य की मांग करते हैं।

कार्य संबंध : प्रत्येक समाज और उसके समूहों के सदस्यों के आपस में जुड़े होने का एक आधार उनके बीच कार्य संबंध है। कार्य संबंध से आशय है कि समूह के हित में दिए गए लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सामूहिक स्तर पर कार्य करना। सामूहिक स्तर पर कार्य तभी सम्भव है जब सदस्यों में आपसी सामंजस्य हो। सामंजस्य के अभाव में कोई भी कार्य पूरा नहीं हो सकता। समाज के विभिन्न समूहों के बीच कार्य विभाजन होता है। विभिन्न समूहों को कुछ निर्धारित कार्य आवंटित किए जाते हैं जो उन समूहों की कार्य विशेषज्ञता होती है। इसी प्रकार समूह में भी सदस्यों के बीच कार्य विभाजन होता है। यह अपेक्षा की जाती है कि सभी सदस्य समूह के हित में कार्य करेंगे। सदस्यों के बीच कार्य संबंध को लेकर मतभेद भी हो सकते हैं परंतु वह आवंटित कार्य से इनकार नहीं करते क्योंकि एक व्यक्ति के कार्य का संबंध दूसरे व्यक्ति से और इस तरह पूरे समूह से होता है।

एकता : समूह सामंजस्य का एक आधार सदस्यों के बीच एकता का होना है। समूह के सभी सदस्य निजी पसन्द–नापसन्द रखते हुए भी समूह के हित में मिलकर काम करते हैं। समूह की रक्षा के लिए वह एकजुट रहते हैं।

विश्वास व भावनाएं : समूह सामंजस्य स्थापित करने में सदस्यों में परस्पर विश्वास और भावनाएं भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सदस्यों में यदि अपने समूह और उसके सदस्यों के प्रति विश्वास है तो समूह को गतिशील रखना आसान हो जाता है। सदस्यों में इस विश्वास को स्थापित करना होता है कि समूह उनकी बेहतरी के लिए है और उसके सारे कामों का प्रतिफल सदस्यों के लिए है। इसके साथ ही सदस्यों में यह विश्वास भी होना चाहिए कि आवश्यकता होने पर समूह उनकी रक्षा करेगा। इस तरह का विश्वास होने पर सदस्यों में समूह के प्रति सकारात्मक भावनाओं का उभार होता है और वह समूह से भावनात्मक रूप से अधिक मजबूती से जुड़ जाते हैं। इससे समूह को गतिशील रखते हुए प्रगति व परिवर्तन के लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

लोट और लोट (1965) ने माना है कि समूह के भीतर पारस्परिक आकर्षण समूह सामंजस्य के लिए पर्याप्त है। दूसरे शब्दों में, समूह सामंजस्य तब होता है जब उसके सदस्यों में एक–दूसरे के प्रति आपसी सकारात्मक भावनाएं होती हैं।

समूह समग्रता में–

- समूह के सदस्य द्वारा जितना ही अधिक आकर्षण दिखाई पड़ता है, समूह में समग्रता उतनी ही अधिक होती है।
- समूह में समग्रता अधिक होने से सदस्यों में संतोष की भावना अधिक होती है, जिसका कारण सकारात्मक या नकारात्मक बल कुछ भी हो सकता है।
- समूह में समग्रता होने पर सदस्यों को समूह लक्ष्य की ओर प्रेरित करने के लिए अधिक प्रयास तथा प्रोत्साहन की जरूरत नहीं पड़ती है।

- समग्र समूह अधिक स्थिर होता है तथा साथ–ही–साथ इसमें सदस्यों का मनोबल ऊंचा भी होता है। ऐसे समूह में संघर्ष कम–से–कम होता है।

समूह समग्रता को प्रभावित करने वाले कारक

टिप्पणी

समूह समग्रता को प्रभावित करने वाले कुछ कारक भी हैं जो कभी अधिक होते हैं तो कभी कम। वे हैं–

आवश्यकताओं की संतुष्टि : समूह समग्रता इस बात से सीधे प्रभावित होती है कि समूह में भिन्न–भिन्न कोटि के सदस्य होते हैं। कुछ सदस्य प्राथमिक होते है तथा कुछ सदस्य द्वितीयक होते हैं। प्राथमिक सदस्य की भूमिका द्वितीयक सदस्यों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होती है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, जिस समूह में दोनों तरह के सदस्यों की अधिकतर आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, वह समूह सदस्यों के लिए अधिक आकर्षक होता है तथा उसमें समूह समग्रता अधिक होती है। अगर किसी कारणवश सदस्यों की आवश्यकताओं की संतुष्टि समूह द्वारा नहीं हो पाती है तो वैसी स्थिति में समूह के सदस्यों का आकर्षण समूह के लिए नहीं रह पाता है और उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है।

समूह लक्ष्य : प्रत्येक समूह का एक लक्ष्य होता है जिसे हम समूह लक्ष्य कहते हैं। समूह के प्रत्येक सदस्य का इस लक्ष्य में एक सामान्य विश्वास होता है। इस समूह के अलावा सदस्यों का अपना व्यक्तिगत लक्ष्य भी होता है और वह दृष्टिगोचर नहीं होता है। समूह का लक्ष्य तथा सदस्य के व्यक्तिगत लक्ष्य में संगति होती है तो समूह समग्रता अधिक होती है, परन्तु यदि इन दोनों तरह के लक्ष्यों में किसी तरह की असंगति उत्पन्न हो जाती है तो समूह में समग्रता की कमी हो जाती है और सदस्य समूह लक्ष्य को गौण समझकर अपने व्यतिगत लक्ष्य को प्रधान समझने लगता है। ऐसी स्थिति में समूह समग्रता कम हो जाती है।

सदस्यों में आकर्षकता : सदस्यों में आकर्षकता एक ऐसा चर है जिसका प्रभाव समग्रता पर सीधा पड़ता है। यदि कोई समूह अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं भी कर पाया हो तो भी उसकी सदस्यता किसी कारण से सदस्यों के लिए आकर्षक होती है और वैसी भी स्थिति में समूह समग्रता बनी रहती है। वहीं, यदि समूह में सदस्यों की एक–दूसरे के प्रति आकर्षकता नहीं है, एक–दूसरे को पसंद नहीं करते हैं तो समूह के लक्ष्य की प्राप्ति सदस्यों के लिए गुणकारी एवं लाभादायक होते हुए भी समूह समग्रता तथा सहभागिता में कमी हो जाती है। समूह सदस्यों की आकर्षकता एक ऐसा चर है जो समूह समग्रता के निर्धारण में समूह लक्ष्य के महत्त्व से भी अधिक महत्वपूर्ण है।

समूह के कार्य एवं नेतृत्व : समूह की समग्रता सदस्यों के कार्यों और उसके नेतृत्व पर निर्भर करती है। यदि किसी समूह द्वारा किए जाने वाले कार्य ऐसे हैं जिनके प्रति सदस्यों में आकर्षकता होती है तथा जिसे सदस्यों द्वारा सफलतापूर्वक पूरा कर लिया जा रहा है तो ऐसी परिस्थिति में समूह समग्रता अधिक होती है। समूह समग्रता समूह के नेता के व्यवहार द्वारा भी प्रभावित होती है। कार्टराइट (1968) के अनुसार, जिस समूह का नेता लोकतांत्रिक ढंग से व्यवहार करता है तथा महत्वपूर्ण निर्णय एवं कार्यों में सदस्यों की सहभागिता को प्रोत्साहन देता है, वैसे समूह में समग्रता अधिक है।

वहीं, जिस समूह का नेता सत्तावादी ढंग से व्यवहार करता है तथा सभी निर्णय करके सदस्यों पर थोप देता है उस समूह में समग्रता काफी कम देखी गई।

टिप्पणी

समूह समग्रता का प्रभाव

समूह समग्रता के प्रभाव को चार भागों में बांटा जा सकता है–

सदस्यता का संपोषण : अगर समूह में समग्रता अधिक है तो समूह सदस्यों के लिए काफी आकर्षक है, तो वैसी परिस्थिति में यह स्वाभाविक है कि अधिकतर सदस्य उस समूह की सदस्यता को समाप्त कर देते हैं। किसी समूह की समग्रता अधिक होने पर भी व्यक्ति उसकी सदस्यता का स्वेच्छा से त्याग करना चाहता है बशर्ते कि उसके सामने कोई और अधिक विकल्प उपलब्ध हो।

सदस्यों पर नियंत्रण : जब समूह से समग्रता अधिक होती है तो समूह का सदस्यों पर प्रभाव एवं नियंत्रण अधिक होता है। समूह की समग्रता कम होने पर ऐसी बात नहीं देखी जाती है। समूह में समग्रता अधिक होने से सदस्यों में अनुरूप व्यवहार अधिक बढ़ जाता है। यदि समूह अधिक समग्र होता है तो वैसी परिस्थिति में सदस्य समूह के मूल्य तथा मानक आदि के अनुरूप अधिक व्यवहार करते हैं।

आत्मसम्मान : जब समूह में समग्रता अधिक होती है तो उनके सदस्यों में सुरक्षा की भावना अधिक होती है तथा उनमें चिंता की मात्रा कम होती है। इस कारण समूह में सहभागिता बढ़ती है और उनका आत्म–सम्मान भी अधिक ऊंचा होता है। जिस समूह में समग्रता कम होती है, उसके सदस्यों में असुरक्षा की भावना एवं चिंता अधिक होती है। इस कारण उनमें आत्मसम्मान की कमी देखने को मिलती है।

समूह की उत्पादकता : समूह की समग्रता का प्रभाव समूह की उत्पादकता पर पड़ता है। इन दोनों चरों के बीच का यह संबंध सीधा नहीं है बल्कि विभिन्न शर्तों के साथ है। यदि समूह का मानक ऐसा है जिसमें अधिक उत्पादकता पर बल दिया गया है, तब तो अधिक समग्र समूह के होने पर उत्पादकता अवश्य ही होगी लेकिन यदि समूह का मानक अधिक उत्पादकता को निरुत्साहित करता है तो वैसी परिस्थिति में समूह समग्रता अधिक होने पर भी उत्पादकता अधिक नहीं होगी।

समूह समग्रता की माप

समाज मनोवैज्ञानिकों ने समग्रता को मापने के लिए सात बिंदु मापनी (7 point scale) जैसी रेटिंग का निर्माण किया है, जिसमें सदस्य सम्पूर्ण समूह के प्रति अपनी आकर्षिकता को व्यक्त करता है। इसके बाद इसका सांख्यिकीय विश्लेषण करके समग्रता की माप की जाती है। समग्रता को मापने के लिए प्रत्येक सदस्य की रेटिंग प्राप्त करके उसका औसत ज्ञान भी ज्ञात किया जाता है। इससे औसत के आधार पर फिर समूह समग्रता की माप की जाती है। इशमैन के अनुसार, समूह समग्रता मापने की दोनों विधियां आपस में सहसंबंधित हैं, फिर भी कभी–कभी ये दोनों विधियां स्वतंत्र रूप से भी इस्तेमाल की जाती हैं। इसके अलावा, मोरेनो (Moreno) की समाजमितीय विधि के जरिये भी समूह समग्रता का मापन होता है। इस विधि में सदस्यों का नाम गुप्त रूप से पूछा जाता है जिनके साथ वे समूह के लिए उपयोगी

क्रिया–कलाप में भाग लेना पसंद करेंगे। यदि अधिक–से–अधिक सदस्य वैसे व्यक्ति का नाम लेते हैं जो अपने समूह के सदस्य न होकर दूसरे समूह के सदस्य होते हैं, तो यह समझा जाता है कि समूह में समग्रता कम है। वहीं, यदि अधिक–से–अधिक सदस्य अपने ही समूह के अन्य सदस्यों के नाम लेते हैं तो ऐसा समझा जाता है कि समूह में समग्रता अधिक है।

टिप्पणी

2.3.3 सामाजिक सुविधा

सामाजिक सुविधा को सरलीकरण भी कहते हैं। सामाजिक सुविधा या सरलीकरण का अर्थ है समूह के गतिशील व्यवहार में सरलीकरण व सुविधाओं की व्यवस्था। समाज के सदस्यों व विभिन्न समूहों के बीच गतिशीलता को लेकर कुछ नियमों का निर्धारण किया जाता है जो समूहों व सदस्यों के व्यवहार को सरलीकृत करते हुए सुविधाजनक स्थितियां बनाते हैं।

सामाजिक सुविधा एक मनोवैज्ञानिक अवधारणा है जो किसी सामुदायिक कार्य में किसी व्यक्ति के प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए दूसरों की उपस्थिति की प्रवृत्ति से संबंधित है। हालांकि यह एक सीधी परिभाषा की तरह लग सकता है, यह वास्तव में कई बारीकियों के साथ एक बहुत ही जटिल अवधारणा है। इसका एक लंबा इतिहास भी है, जिसमें घटना को अधिक गहराई से समझाने में मदद करने के लिए विभिन्न सिद्धांतों का विकास शामिल है। इस इतिहास की सीमा और जटिलता की परतों को बेहतर ढंग से समझने के लिए, सिद्धांतों, संबंधित अवधारणाओं और निहितार्थों के बारे में जानना आवश्यक है।

सामाजिक सुविधा या सरलीकरण की अवधारणा सर्वप्रथम 1898 में सामने आई। इस अवधारणा को प्रस्तुत किया था नॉर्मन ट्रिपलेट ने। ट्रिपलेट ने सबसे पहले एक साइकिलिंग एसोसिएशन के रिकॉर्ड का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि एक प्रतियोगी के रूप में प्रत्येक प्रतिभागी दूसरों को देखते हुए तुलनात्मक रूप से अधिक क्षमता के साथ आगे निकलने का प्रयास कर रहा रहा था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समूह में काम करते समय व्यक्ति दूसरों से प्रेरित होकर या प्रतियोगिता करते हुए अपनी क्षमता का पूरा प्रदर्शन करता है। वह अपनी क्षमता से अधिक प्रदर्शन करने का प्रयास भी करता है। इस तरह देखें तो सामाजिक सुविधा या सरलीकरण की अवधारणा में प्रतिस्पर्धा के साथ–साथ प्रेरणा का तत्व भी शामिल रहता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रत्येक प्राणी, चाहे वह मनुष्य हो या पशु–पक्षी, यहां तक कि कीड़े ही क्यों न हों, सब में सामाजिक सुविधा व सरलीकरण की स्थितियां कम या अधिक मात्रा में पाई जाती हैं। ट्रिपलेट ने अपने अध्ययन के क्रम में बच्चों के मछली पकड़ने के कार्य को भी शामिल किया था और यही निष्कर्ष निकाला था कि दूसरों की उपस्थिति व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती है। उनका निष्कर्ष था कि आधे से अधिक बच्चों ने अन्य बच्चों से प्रतिस्पर्धा करते हुए तेजी से काम किया। उन्होंने अधिक उत्पादकता दी। इसके विपरीत एक चौथाई बच्चे ऐसे भी थे जो काम के प्रति उदासीन बने रहे।

टिप्पणी

सामाजिक सुविधा से संबंधित परस्पर विरोधी परिणामों का अध्ययन अनेक दूसरे समाजशास्त्रियों ने भी किया था। जाजोंक और सेल्स ने 1966 में इस संदर्भ में ''प्रमुख प्रतिक्रिया'' की अवधारणा प्रस्तावित की थी। उन्होंने तर्क दिया कि अच्छी तरह से अभ्यास किए गए कार्यों में सदस्यों का प्रदर्शन सरल व सहज होता है। इसे इस तरह से भी कह सकते हैं कि किसी कार्य में कुशल लोगों में कार्य प्रदर्शन प्रभावशाली रहता है। समूह के प्रशिक्षित सदस्य आपस में प्रतिस्पर्धा करते हुए भी लगभग समान स्तर पर कार्य करते हैं। इसे हम खेलों के संदर्भ में अच्छी तरह समझ सकते हैं। रेस में शामिल सभी खिलाड़ी प्रशिक्षित होते हैं इसीलिए उनमें हार–जीत में बहुत अधिक अंतर नहीं होता। इसके विपरीत ऐसे कार्यों में लोगों का प्रदर्शन प्रभावित होता है जिसका उन्हें अभ्यास नहीं है या जिस कार्य को करने में वह स्वयं को दूसरों से कमजोर पाते हैं। ऐसे में वह खुद को कुशल लोगों के समक्ष लाने की बजाय कार्य के प्रति उदासीन हो जाते हैं जिससे उनकी उत्पादकता प्रभावित होती है।

सामाजिक सुविधा की कोई एक अवधारणा प्रस्तुत करना आसान नहीं है। इस संदर्भ में अनेक समाजशास्त्रियों ने काम किया है। सभी ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर सामाजिक सुविधा की विवेचना की है। अलग–अलग देशों व समाजों की भिन्न परिस्थितियों के कारण उनमें सामाजिक सुविधा का सिद्धांत भी भिन्न होता है।

ज्यादातर समाजशास्त्रियों ने दो प्रकार की सामाजिक सुविधा को परिभाषित किया हैः सह–क्रिया प्रभाव जिसे प्रतियोगिता व प्रेरणा प्रभाव भी कह सकते हैं। दूसरा है दर्शकों और श्रोताओं की उपस्थिति का प्रभाव जिसे हम सार्वजनिक जीवन का प्रभाव कह सकते हैं।

सह–क्रिया प्रभाव : सह–क्रिया प्रभाव किसी कार्य पर समूह या उसके सदस्यों के प्रदर्शन के बेहतर होने का संदर्भ देता है, केवल इसलिए कि अन्य लोग भी वही कार्य कर रहे हैं जो आप कर रहे हैं। उदाहरण के लिए हम किसी कारखाने या कार्यालय में देख सकते हैं कि एक ही तरह का काम करने वाले लोग दूसरों से बेहतर व अधिक उत्पादन का प्रयास करते हैं।

सार्वजनिक प्रभाव : कई समाजशास्त्रियों ने इसे दर्शक–श्रोता की उपस्थिति के प्रभाव के रूप में व्याख्यायित किया है। ऐसा इसलिए कि उन्होंने प्रदर्शनकारी कलाओं में व्यक्ति के प्रदर्शन का अध्ययन किया। कोई गायक, संगीतकार या नर्तक के लिए दर्शकों या श्रोताओं की उपस्थिति प्रेरक का काम करती है। दर्शकों या श्रोताओं को प्रभावित करने के लिए वह अपना सर्वश्रेष्ठ देने का प्रयास करता है। इसमें दर्शकों व श्रोताओं की सक्रिय भागीदारी यानी उनकी प्रतिक्रिया भी भूमिका निभाती है। उनके उत्साहवर्धन से कलाकार और तन्मय होकर अच्छा प्रदर्शन करता है। यह बात कलाकारों के साथ ही अन्य लोगों पर भी लागू होती है।

सामाजिक सुविधा के कारक

सामाजिक सुविधा में तीन कारक शामिल हैंः शारीरिक कारक (गति और उत्तेजना), संज्ञानात्मक कारक (व्याकुलता और ध्यान), और भावात्मक कारक (चिंता और आत्म–प्रस्तुति)।

शारीरिक कारक : यह एक उच्च उत्तेजना स्तर को संदर्भित करता है और सामाजिक सुविधा से जुड़ी स्थिति में आपकी शारीरिक उत्तेजना से परिणाम प्राप्त करने के लिए आपको गतिशील करता है।

टिप्पणी

संज्ञानात्मक कारक : यह सामाजिक सुविधा में ध्यान और व्याकुलता की भूमिका को दर्शाता है। उदाहरण के लिए, लोगों को आपको कुछ करते हुए देखने से आप अधिक ध्यान केंद्रित महसूस कर सकते हैं, या यह आपको भी कार्य के लिए व्याकुल कर सकता है।

भावनात्मक कारक : भावात्मक कारक यह दर्शाता है कि चिंता और आत्म–प्रस्तुति सामाजिक सुविधा को कैसे प्रभावित करती है। व्यक्ति अपनी व परिजनों की स्थिति में सुधार की चिंता करते हुए बेहतर कार्य करने को प्रवृत्त होता है। इसी प्रकार स्वयं को दूसरों की तुलना में अधिक सक्षम, योग्य और जिम्मेदार के रूप में प्रस्तुत करने की भावना से कार्य करता है।

2.3.4 सामाजिक आवारगी

सामाजिक आवारगी (सोशल लोफिंग) एक ऐसी घटना है जिसमें लोग एक समूह में काम करने का कम प्रयास करते हैं। एक समूह में काम करते समय, अक्सर प्रेरणा कम हो जाती है जिसके कारण समूह लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयास कम होने लगता है। इस घटना को सोशल लोफिंग कहते हैं। एक सामान्य कार्य के लिए समूह में काम करते हुए, व्यक्तियों के बीच एक सामान्य भावना उत्पन्न होती है कि भले ही वे थोड़ा कम योगदान दें, लेकिन समूह लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। इसलिए उनके पास प्रेरणा कम होती है और समूह के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कम प्रयास करते हैं। व्यक्ति अपने सह–सदस्यों के प्रयासों पर अधिक भरोसा करता है।

सामाजिक स्तर पर समूह में काम करते हुए कुछ लोग दूसरों की अपेक्षा कम मेहनत करते हैं जिससे लक्ष्य प्राप्त करना मुश्किल हो जाता है। इसके विपरीत व्यक्ति निजी स्तर पर प्रयास अधिक करता है। लोगों में यह मानसिकता होती है कि वह दूसरों के लिए मेहनत क्यों करें। साथ ही यह भी कि समूह में काम करते समय मेरे कम काम करने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा क्योंकि बाकी लोग तो मेहनत कर ही रहे हैं। इस चक्कर में कई बार कोई भी मेहनत नहीं करता। उदाहरण के लिए, रस्सी खींचने की प्रतियोगिता में वह टीम हार जाती है जिसका कोई एक या अधिक सदस्य पूरी मेहनत नहीं करता।

सोशल लोफिंग इस अवधारणा को संदर्भित करता है कि अकेले कार्य करने की तुलना में समूह के हिस्से के रूप में सामूहिक रूप से काम करते समय लोग कम प्रयास करने के लिए प्रवृत्त होते हैं। सोशल लोफिंग उन कार्यों में अधिक स्पष्ट है जहां समूह के प्रत्येक सदस्य के योगदान को समूह के परिणाम में जोड़ा जाता है, जिससे किसी एक व्यक्ति के योगदान की पहचान करना मुश्किल हो जाता है।

- कार्यस्थलों में सामाजिक घृणा हानिकारक हो सकती है। जब हर कोई अपना पूरा प्रयास नहीं करता है क्योंकि वे एक समूह का हिस्सा हैं, तो इससे उत्पादकता कम हो सकती है।

टिप्पणी

- सोशल लोफिंग को प्रभावित करने वाले कारकों में सहकर्मी के प्रदर्शन, कार्य की सार्थकता और संस्कृति की अपेक्षाएं शामिल हैं।
- सोशल लोफिंग का सामूहिक प्रयास मॉडल (सीईएम) मानता है कि सामाजिक लोफिंग होता है या नहीं, यह समूह के लक्ष्य के लिए सदस्यों की अपेक्षाओं और मूल्य पर निर्भर करता है।
- सौभाग्य से, समूहों को अधिक उत्पादक बनाने के लिए सामाजिक लोफिंग को कम करने के कई तरीके हैं।

रिंगेलमैन प्रभाव, या सामाजिक लोफिंग एक ऐसी घटना है जो लोगों के समूहों में होती है जो प्रत्येक समूह के सदस्य द्वारा किए जाने वाले प्रयासों की मात्रा को सीमित करती है (इस प्रकार व्यक्तिगत उत्पादकता को कम करती है)।

सोशल लोफिंग की पहचान पहली बार तब हुई जब फ्रांसीसी कृषि इंजीनियर मैक्स रिंगेलमैन समूह के प्रदर्शन का अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने पाया कि समूह (लोगों के साथ–साथ जानवरों) ने अपनी क्षमता को पूरा नहीं किया, हालांकि समूह व्यक्तियों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं, समूह आमतौर पर उस हद तक प्रदर्शन नहीं करते हैं जितना कि वे कर सकते हैं यदि प्रत्येक व्यक्ति अधिकतम क्षमता पर काम कर रहा हो। उदाहरण के लिए, एक अध्ययन में, उन्होंने लोगों को एक दबाव नापने के यंत्र से जुड़ी रस्सी पर खींचा और पाया कि जितने अधिक लोग खींचेंगे, उनकी क्षमता से उतना ही नीचे वे प्रदर्शन करेंगे।

रिंगेलमैन (1913) ने इस घटना को दो स्रोतों के लिए जिम्मेदार ठहरायाः समन्वय हानि और प्रेरणा हानि। उनका मानना था कि समन्वय हानि यानी उनके प्रयासों की एक साथ की कमी थी और यह सामाजिक घृणा का मुख्य कारण था। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि प्रत्येक व्यक्ति अपने पड़ोसी को कार्य न करते देख या उस पर विश्वास करने के कारण प्रेरित होता है और वह कार्य करने की प्रेरणा से दूर हो जाता है।

सामाजिक आवारगी (सोशल लेफिंग) के कारण

सोशल लोफिंग के कई कारण हैं–

सहकर्मी प्रदर्शन की उम्मीदें

सामाजिक मुआवजे की परिकल्पना यह मानती है कि लोग व्यक्तिगत रूप से सामूहिक रूप से अधिक मेहनत करेंगे जब वे अपने सहकर्मियों से एक सार्थक कार्य के खराब प्रदर्शन की उम्मीद करेंगे। जैक्सन और हार्किंस (1985) ने एक अध्ययन किया था जिसमें प्रतिभागियों की अपेक्षाओं में हेरफेर किया गया था कि उनके सहकर्मी कितनी मेहनत करेंगे। उन्होंने पाया कि जिन व्यक्तियों को सहकर्मियों की कम उम्मीदें थीं, उन्होंने इक्विटी बनाए रखने के अपने स्वयं के प्रयासों को कम कर दिया। इसका मतलब यह है कि उच्च–प्राप्तकर्ताओं के समूह में काम करते समय सामाजिक घृणा उत्पन्न होने की अधिक संभावना है, क्योंकि एक व्यक्ति सुस्त हो सकता है और अन्य सक्षम समूह के सदस्यों को अधिकांश काम करने की अनुमति दे सकता है। वैकल्पिक

रूप से व्यक्ति वास्तव में अपने सामूहिक प्रयास में वृद्धि कर सकते हैं जब वे उम्मीद करते हैं कि उनके सहकर्मी सामाजिक मुआवजे के रूप में संदर्भित एक सार्थक कार्य प्रभाव पर खराब प्रदर्शन करेंगे।

टिप्पणी

मूल्यांकन क्षमता

कई शोधकर्ताओं ने सोशल लोफिंग की व्याख्या करने के लिए मूल्यांकन क्षमता की अवधारणा का उपयोग किया है। यह सिद्धांत बताता है कि सामूहिक कार्यों में प्रयास में कमी आती है क्योंकि समूह के सदस्यों का व्यक्तिगत रूप से मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। वे भीड़ में छिप सकते हैं क्योंकि वे अपना पूरा प्रयास नहीं करते हैं।

सामाजिक प्रभाव सिद्धांत

लैटाने (1981) ने इस बात पर ध्यान केंद्रित किया कि कैसे व्यक्ति सामाजिक प्रभाव के स्रोत या लक्ष्य हो सकते हैं, और दावा किया कि सामाजिक आवारगी प्रयोगों में, कुछ स्रोत और कुछ लक्ष्य होते हैं, इसलिए प्रत्येक लक्ष्य का प्रयास कम हो जाता है। सिद्धांत बताता है कि जब व्यक्ति सामूहिक रूप से काम करते हैं, तो समूह के सदस्यों में सामाजिक प्रभाव फैलता है, और समूह के आकार में वृद्धि के रूप में प्रत्येक अतिरिक्त समूह सदस्य का प्रभाव कम होता है। सोशल इंपैक्ट स्टेट्स के अनुसार जैसे–जैसे लोगों की संख्या बढ़ती है, वैसे–वैसे व्यक्ति पर दूसरों का प्रभाव बढ़ता है, जबकि प्रत्येक नए व्यक्ति को जोड़ने पर प्रभाव में वृद्धि की दर कम होती जाती है।

आत्म–ध्यान

मुलेन (1983) ने सामूहिक बनाम व्यक्तिगत कार्यों के दौरान व्यक्तियों द्वारा बनाए गए आत्म–ध्यान की मात्रा के संदर्भ में सामाजिक आवारापन की व्याख्या करने का प्रयास किया, लेकिन इस सिद्धांत को अभी तक अनुभवजन्य समर्थन प्राप्त नहीं हुआ है। यह सिद्धांत बताता है कि समूह कार्य पर काम करने से आत्म–जागरूकता में गिरावट आती है, जिससे व्यक्ति समूह के भीतर अपने कार्य के योगदान के बारे में कम जागरूक हो जाता है, और कार्य की मांगों के प्रति कम ध्यान देता है।

उत्तेजना में कमी

जैक्सन और विलियम (1985) के उत्तेजना में कमी सिद्धांत के आवेदन में दावा किया गया है कि सामूहिक कार्यों के दौरान व्यक्तियों के कम प्रयास को उस ड्राइव में कमी के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जो व्यक्ति सामूहिक रूप से काम करते समय महसूस करते हैं। उनका तर्क है कि एक समूह में अन्य सहकर्मियों की उपस्थिति किसी व्यक्ति को कार्य करने की प्रेरणा को कम करती है।

सामूहिक प्रयास मॉडल (सीईएम)

पूरे क्षेत्र के विभिन्न वैज्ञानिकों के निष्कर्षों को एकीकृत करने के लिए करौ और विलियम्स (1993) ने ऐसे 78 अध्ययनों की एक मेटा–विश्लेषणात्मक समीक्षा प्रकाशित की। मेटा–विश्लेषण में पाया गया कि सोशल लोफिंग ''परिमाण में मध्यम और कार्यों और विषय आबादी में सामान्यीकरण योग्य है''।

टिप्पणी

करौ और विलियम्स के मेटा–विश्लेषण ने सोशल लोफिंग की व्याख्या करने के लिए अपना स्वयं का एकीकृत मॉडल प्रस्तुत कियाः सामूहिक प्रयास मॉडल (सीईएम)। लेखकों ने इस मॉडल को ऊपर चर्चा की गई कई आंशिक व्याख्याओं को एकीकृत करके बनाया है, जैसे मूल्यांकन क्षमता और प्रयास मिलान। इसमें कार्य की सार्थकता और संस्कृति जैसे चर भी शामिल थे।

सीईएम का सुझाव है कि दो प्रमुख तत्व समूह में काम करते समय व्यक्तियों की प्रेरणा के स्तर को निर्धारित करते हैंः लक्ष्य तक पहुंचने की उनकी क्षमता के बारे में उनकी अपेक्षाएं, और लक्ष्य को वे मूल्य प्रदान करते हैं।

प्रेरणा तब बढ़ती है जब व्यक्तियों में लक्ष्य के लिए उच्च अपेक्षाएं और उच्च मूल्य होते हैं, और जब कोई भी चर कम हो जाता है तो प्रेरणा कम हो जाती है। समूहों में, प्रत्येक व्यक्ति की अपेक्षाएं कम होती हैं, क्योंकि एक व्यक्ति अक्सर पूरे समूह के परिणाम की भविष्यवाणी नहीं कर सकता है।

समूह में काम करने से लक्ष्य के लिए कम मूल्य भी हो सकता है। सीईएम के अनुसार, यह बताता है कि इन मामलों में प्रेरणा कम क्यों है। सीईएम मॉडल करौ और विलियम्स के मेटा–विश्लेषण द्वारा समर्थित है। लेखकों ने पाया कि वेरिएबल जैसे मूल्यांकन क्षमता, कार्य संयोजकता (टास्क वैलेंस), सह–कार्यकर्ता प्रदर्शन की अपेक्षाएं और समूह आकार सभी मॉडरेट किए गए सोशल लोफिंग प्रभावों के रूप में सीईएम भविष्यवाणी करता है।

उदाहरण के लिए, टास्क वैलेंस के संबंध में, ''टास्क वैलेंस बढ़ने के साथ सोशल लोफिंग में संलग्न होने की प्रवृत्ति कम हो गई''। यह सीईएम के साथ फिट बैठता है, क्योंकि टास्क वैलेंस समूह के लक्ष्य पर रखे गए मूल्य के सीईएम तत्व से दृढ़ता से संबंधित है।

सोशल लोफिंग को कम करना

डोनेलसन फोर्सिथ के अनुसार, ऐसे कई तरीके हैं जिनका उपयोग समूहों के भीतर सोशल लोफिंग को कम करने के लिए किया जा सकता है। व्यक्तिगत जवाबदेही स्थापित करके, फ्री राइडिंग को कम करके, टीम की वफादारी को प्रोत्साहित करके और टीम के प्रत्येक सदस्य के लिए अलग–अलग जिम्मेदारियां सौंपकर सोशल लोफिंग को सीमित किया जा सकता है।

व्यक्तिगत जवाबदेही स्थापित करना

समूह उत्पादकता बढ़ाने वाला एक कारक तब होता है जब समूह के सदस्यों को लगता है कि उनका व्यक्तिगत रूप से मूल्यांकन किया जा रहा है। इसलिए, बढ़ती हुई पहचान सोशल लोफिंग (हार्डी एंड लैटेन, 1986) को कम करने की ओर प्रवृत्त होती है।

फ्री राइडिंग को कम करना

फ्री राइडिंग को कम करना एक और महत्वपूर्ण कदम है जो समूह सामाजिक आवारगी को कम करने के लिए उठा सकते हैं। फ्री राइडिंग से तात्पर्य उन स्थितियों से है जिनमें समूह के सदस्य कम प्रयास करते हैं क्योंकि अन्य उनकी भरपाई करेंगे। जब

समूह के सदस्य मुफ्त सवारी करने में असमर्थ होते हैं, तो सामाजिक घृणा कम हो जाती है क्योंकि समूह के सदस्य अधिक जिम्मेदारी महसूस करते हैं।

विशिष्ट जिम्मेदारियां सौंपें

टिप्पणी

टीम के प्रत्येक सदस्य को अलग और विशिष्ट जिम्मेदारियों सौंपें। अलग–अलग लक्ष्यों के बिना, समूह और समूह के सदस्य अधिक आसानी से सामाजिक आवारगी के क्षेत्र में चले जाते हैं।

स्पष्ट लक्ष्य निर्धारित करने से समूह के सदस्यों को अधिक उत्पादक बनने और सोशल लोफिंग को कम करने में मदद मिलती है। लक्ष्य भी प्राप्य होने चाहिए। वे बहुत आसान नहीं होने चाहिए, लेकिन बहुत कठिन भी नहीं होने चाहिए।

टीम की वफादारी को प्रोत्साहित करना

एक अन्य कारक जो सामाजिक आवारगी की उपस्थिति को बहुत प्रभावित कर सकता है, वह है समूह में शामिल होना। जब समूह के सदस्य समूह में शामिल और निवेशित महसूस करते हैं, तो वे अधिक उत्पादक होते हैं। इसलिए, समूह में बढ़ती भागीदारी टीम की वफादारी को प्रोत्साहित कर सकती है और सामाजिक घृणा को कम कर सकती है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. जिस मानदंड से हमारा आचरण निर्देशित होता है, उसे क्या कहा जाता है?

   (क) निषेधात्मक मानदंड (ख) निर्देशात्मक मानदंड

   (ग) सामुदायिक मानदंड (घ) सहचारी मानदंड

4. "समूह समग्रता उन सभी बातों का परिणाम होता है जो सदस्यों को समूह में रहने के लिए बाध्य करता है।" यह परिभाषा किसने दी?

   (क) फेल्डमैन (ख) टेलर

   (ग) फेस्टिंगर (घ) पेपलाऊ

2.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (क)
3. (ख)
4. (ग)

2.5 सारांश

समूह गतिकी अध्ययन का वह क्षेत्र है जिसमें समूहों में रहने वाले लोगों के व्यवहार पर सामाजिक कारकों या दवाबों के प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। इसके अंतर्गत

समूह संरचना, समूह अंतःक्रिया, समूह परिवर्तन, समूह मनोबल तथा समूह नेतृत्व का अध्ययन किया जाता है।

टिप्पणी

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति सामान्य उद्देश्य के लिए एक–दूसरे से संबंध स्थापित करते हैं और प्रभावित होते हैं तो व्यक्तियों के ऐसे संग्रह को समूह कहा जाता है। आधुनिक युग में समूह कई स्तर पर होता है। उदाहरण के लिए हम व्यावसायिक प्रतिष्ठानों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में लोगों के समूह को देख सकते हैं।

समूह के सदस्यों और समूहों में विभेद के कई कारण हैं। भारतीय समाज के सन्दर्भ में धर्म व जाति दो बड़े आधार हैं। दुनिया के सभी समाजों में विभेद के जो मुख्य आधार हैं उनमें भी धर्म एक प्रमुख आधार है। इसके अलावा नस्ल, रंग, क्षेत्र, लैंगिक, आर्थिक स्थिति, शिक्षा जैसे आधार सभी समाजों में उपस्थित हैं। सामाजिक संरचनाओं में स्थानीय कारणों से भी विभेद दिखाई देता है।

समाज अपने सदस्यों के लिए कुछ निश्चित प्रकार के आदर्श, आचरण या व्यवहार निर्धारित करता है, जिनका पालन करना उसके सदस्यों से अपेक्षित होता है। समाजशास्त्रीय भाषा में इन्हें मानदंड कहा जाता है। मानदंड किसी समूह के भीतर अव्यक्त नियम होते हैं जो इस बात को निर्देशित करते हैं कि इसके सदस्यों को कैसे व्यवहार करना चाहिए या कैसे नहीं करना चाहिए। मानदंड सामान्यतया पूर्वसहमति पर आधारित अनौपचारिक नियम होते हैं।

समूह समग्रता का अर्थ है कि समूह के सभी सदस्य किस सीमा तक बने रहने के लिए प्रेरित रहते हैं। जिस सीमा तक समूह के सदस्य समूह में बने रहने के लिए प्रेरित रहते हैं, समूह की समग्रता उतनी ही अधिक समझी जाती है। समूह समग्रता समूह की संरचना की एक प्रमुख डायमेंसन है। समूह समग्रता बताती है कि सदस्यों के लिए समूह कितना आकर्षक है। जिस कारण से भी सदस्यों के लिए समूह जितना आकर्षक होगा, सदस्य उतना ही समूह में बने रहेंगे और तब समूह की समग्रता उतनी ही अधिक होगी।

सामाजिक सुविधा एक मनोवैज्ञानिक अवधारणा है जो किसी सामुदायिक कार्य में किसी व्यक्ति के प्रदर्शन को बेहतर बनाने के लिए दूसरों की उपस्थिति की प्रवृत्ति से संबंधित है। हालांकि यह एक सीधी परिभाषा की तरह लग सकता है, यह वास्तव में कई बारीकियों के साथ एक बहुत ही जटिल अवधारणा है। इसका एक लंबा इतिहास भी है, जिसमें घटना को अधिक गहराई से समझाने में मदद करने के लिए विभिन्न सिद्धांतों का विकास शामिल है। इस इतिहास की सीमा और जटिलता की परतों को बेहतर ढंग से समझने के लिए, सिद्धांतों, संबंधित अवधारणाओं और निहितार्थों के बारे में जानना आवश्यक है।

सोशल लोफिंग एक ऐसी घटना है जिसमें लोग एक समूह में काम करने पर कम प्रयास करते हैं। एक समूह में काम करते समय, अक्सर प्रेरणा कम हो जाती है जिसके कारण समूह लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयास कम होने लगता है। इस घटना को सोशल लोफिंग कहते हैं। एक सामान्य कार्य के लिए समूह में काम करते व्यक्तियों के बीच एक सामान्य भावना उत्पन्न होती है कि भले ही वे थोड़ा कम योगदान दें, लेकिन समूह लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। इसलिए उनके पास प्रेरणा कम होती है और समूह

के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कम प्रयास करते हैं। व्यक्ति अपने सह–सदस्यों के प्रयासों पर अधिक भरोसा करता है।

2.6 मुख्य शब्दावली

टिप्पणी

- **प्रतिष्ठान** – संस्था
- **समुच्चय** – समूह, ढेर
- **प्रोत्साहन** – बढ़ावा देना
- **प्रतीक** – चिह्न
- **घनिष्ठ** – गहरा
- **अस्तित्व** – वजूद
- **विभेद** – अंतर
- **व्याकुलता** – बेचैनी

2.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. समूह गतिकी क्या है? परिभाषित कीजिए।
2. समूह क्या है? स्पष्ट कीजिए।
3. सामूहिक समूह के कितने प्रकार हैं? नाम लिखिए।
4. समूह समग्रता से क्या तात्पर्य है?
5. सोशल लोफिंग की परिभाषा दीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. समूह गतिकी की अवधारणा एवं भूमिका का उल्लेख कीजिए।
2. समूह को परिभाषित करते हुए इसके विभिन्न घटकों का वर्णन कीजिए।
3. समूह के गठन के विभिन्न चरणों का वर्णन करते हुए भीड़ और समूह में अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. समूह समग्रता के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालिए।
5. सोशल लोफिंग क्या है? इसके कारणों को स्पष्ट कीजिए।

2.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2000), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
2. सुलेमान, डॉ. मुहम्मद, (2005), उच्चतर समाज मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।

टिप्पणी

3. बैरन, आर, ए., एवं ब्रेन्स्कोम्ब, एन. आर. (2016). सोशल साइकोलॉजी, बोस्टनः पियर्सन/अलीन एवं बेकन

4. कसिन, एस.,फैन, एस., एवं मार्कस, एच. आर (2017). सोशल साइकोलॉजी, सेनगेज लर्निंग

5. एस. आर. जयसवाल : एजुकेशनल साइकोलॉजी (एलायड पब्लिशर्स–हिंदी वर्जन)।

6. एस. एस. माथुर : एजुकेशनल साइकोलॉजी (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–हिंदी वर्जन)।

7. शिक्षा मनोविज्ञान : पी.डी. पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

8. शिक्षा मनोविज्ञान : अरुण कुमार सिंह, (भारती भवन)।

9. एस.पी. गुप्ता,उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

इकाई 3 समन्वय : सहयोग या संघर्ष

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 समन्वय : अर्थ, प्रकार एवं महत्व
  3.2.1 समन्वय का अर्थ
  3.2.2 समन्वय के प्रकार
  3.2.3 समन्वय का महत्व
3.3 संघर्ष : प्रकृति, कारण एवं प्रभाव
  3.3.1 संघर्ष की परिभाषा, प्रकृति एवं प्रकार
  3.3.2 संघर्ष के कारण एवं प्रभाव
3.4 समूह : प्रकृति, नेतृत्व, समूह निर्णय निर्माण एवं संदर्भ समूह
  3.4.1 समूह की प्रकृति
  3.4.2 समूह प्रक्रिया का नेतृत्व
  3.4.3 परिवर्तन प्रतिनिधि के रूप में समूह
  3.4.4 समूह निर्णय निर्माण
  3.4.5 सन्दर्भ समूह
3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

समाज में मनुष्य के बने रहने के लिए समन्वय की आवश्यकता होती है और इसका सामान्य अर्थ होता है– सामान्य उद्देश्य के लिए मिलकर काम करना और सामाजिक प्रक्रियाओं में भागीदारी करना। समाज भी एक समूह ही है और समूह बनने के कुछ कारण होते हैं। समूह का व्यक्ति और समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। समूह की प्रक्रिया में नेतृत्व की भूमिका अहम होती है। समूह को परिवर्तन का प्रतिनिधि माना जाता है। समूह में निर्णय निर्माण कई तरह से होता है।

प्रस्तुत इकाई में समन्वय की अवधारणा, संघर्ष के कारण व प्रभाव। समूह की प्रवृति, समूह प्रक्रिया का नेतृत्व, परिवर्तन प्रतिनिध के रूप में समूह, समूह निर्णय निर्माण तथा सन्दर्भ समूह आदि तथ्यों का अध्ययन किया जा रहा है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- समन्वय और संघर्ष की प्रकृति को समझ पाएंगे;
- समूह की प्रकृति, समूह प्रक्रिया में नेतृत्व और परिवर्तन से अवगत हो पाएंगे;
- समूह में निर्णय निर्माण और सन्दर्भ समूह की व्याख्या कर पाएंगे।

टिप्पणी

3.2 समन्वय : अर्थ, प्रकार एवं महत्व

समन्वय का सामान्य रूप से अर्थ होता है एक सामान्य उद्देश्य के लिए मिलकर काम करना। सामाजिक प्रक्रियाओं में समन्वय सबसे अधिक व्यापक तथा अबाध प्रक्रिया है। समन्वय व्यक्ति की जन्मजात आवश्यकता है। उसका अस्तित्व, विकास तथा जीवन सहयोग पर निर्भर है। भूख व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता है, इसकी संतुष्टि के लिए उसे किन–किन व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करना पड़ता है, यह सभी जानते हैं। इसी प्रकार उसकी बहुत–सी आवश्यकताएं हैं, जिनकी संतुष्टि के लिए दूसरों का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है। अंग्रेजी भाषा का शब्द 'Co&operation' दो लैटिन शब्दों 'Co' अर्थात इकट्ठे तथा 'Operation' अर्थात काम करना से मिलकर बना है। इस प्रकार समन्वय सामान्य उद्देश्यों या सहभागी हितों की प्राप्ति के लिए संयुक्त क्रिया है। समन्वय एक चेतन प्रक्रिया है जिसमें समन्वय करने वाले व्यक्ति या समूह एक–दूसरे के प्रति जागरूक रहते हैं।

3.2.1 समन्वय का अर्थ

समन्वय व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता है क्योंकि इससे उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा उद्देश्यों की पूर्ति होती है। व्यक्ति चेतन रूप से सहयोगिक क्रिया में भाग लेता है।

समन्वय चेतन अवस्था है जिसमें संगठित एवं सामूहिक प्रयत्न किए जाते हैं, क्योंकि समान उद्देश्य होता है। सभी का भागीकरण होता है, क्रियाओं एवं विचारों का आदान–प्रदान होता है। अंतःक्रिया सकारात्मक होती है तथा सहायता करने की प्रवृति पाई जाती है। समन्वय में भाग लेने वाले व्यक्ति उत्तरदायित्व पूरा करते हैं। लेकिन उनके निश्चित प्रतिमान नहीं होते हैं।

ग्रीन. ए. डब्ल्यू के अनुसार, समन्वय दो या अधिक व्यक्तियों के किसी कार्य को करने या किसी सामान्य रूप से इच्छित लक्ष्य पर पहुंचने के सम्मिलित प्रयत्न को कहते हैं।

ऑगबर्न तथा निमकॉफ के अनुसार, जब व्यक्ति समान उद्देश्य के लिए एक साथ कार्य करते हैं तो उनके व्यवहार को समन्वय या सहयोग कहते हैं।

फेयरचाइल्ड एच.पी. के अनुसार, समन्वय वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एकाधिक व्यक्ति या समूह अपने प्रयत्नों को बहुत कुछ संगठित रूप में सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संयुक्त करते हैं।

समन्वय की आवश्यक शर्तें

समन्वय तभी प्राप्त किया जा सकता है जब उसकी आवश्यक शर्तें पूरी हों। ये आवश्यक शर्तें हैं–

1. **सामान्य उद्देश्य** : व्यक्ति समन्वय के लिए तभी तत्पर होते हैं जब उनके उद्देश्य में समानता हो। उदाहरण के लिए किसी संगठन का सदस्य इसलिए बनता है क्योंकि उससे उसके हितों की पूर्ति होती है।

टिप्पणी

2. **सहमति** : सहयोग के लिए आवश्यक है कि दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशेष उद्देश्य के लिए एकमत हों। सामूहिकता की भावना अत्यंत आवश्यक होती है। इस भावना से प्रेरित होकर व्यक्ति दूसरे से समन्वय स्थापित करते तथा कार्य की पूर्ति के लिए सहयोग करते हैं।
3. **सामूहिक प्रयत्न** : सामूहिक प्रयत्नों के द्वारा ही व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए विकास एवं उन्नति कर सकते हैं।
4. **समान इच्छा** : समन्वय के लिए आवश्यक है कि सहयोग करने वाले व्यक्तियों की समान इच्छा हो तथा मानसिक रूप से समन्वय करने के लिए तत्पर हों।
5. **प्रेम एवं सद्भावना** : समन्वय प्रक्रिया प्रेम तथा सद्भावना पर आश्रित है। जितना अधिक परस्पर प्रेम होगा, सहयोग उतना ही अधिक होगा।
6. **व्यवहारों में एकरूपता** : समन्वय के लिए सामूहिक प्रयत्न आवश्यक है, जिसके लिए आपस में समन्वय करने वाले व्यक्तियों के व्यवहार में एकरूपता होनी चाहिए।
7. **संबंधों की घनिष्ठता** : संबंधों की प्रगाढ़ता समन्वय के प्रकार को निश्चित करती है, जितने ही संबंध घनिष्ठ होते हैं, उतना ही समन्वय अधिक प्राप्त होता है।
8. **अन्तःक्रिया** : बिना अंतःक्रिया के सहयोग का प्रारंभ ही नहीं हो सकता है। व्यक्ति हाव–भाव, शारीरिक गति आदि द्वारा एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं।

3.2.2 समन्वय के प्रकार

ग्रीन ने समन्वय के तीन प्रकारों का वर्णन किया है–

1. **प्राथमिक समन्वय** : इस प्रकार का समन्वय प्राथमिक संबंधों या प्राथमिक समूहों में पाया जाता है। परिवार तथा मित्र मंडली, इसके प्रमुख उदाहरण हैं। इस प्रकार के समन्वय में व्यक्ति तथा समूह के स्वार्थों में कोई भिन्नता नहीं होती है। इस प्रकार के समन्वय में त्याग की भावना प्रधान होती है।
2. **द्वितीयक समन्वय** : इस प्रकार का समन्वय जटिल समाजों में पाया जाता है। इस प्रकार का समन्वय द्वितीयक समूहों में पाया जाता है, जिसमें औपचारिकता अधिक होती है और व्यक्तिगत स्वार्थ की प्रधानता होती है। सरकार, स्कूल, ऑफिस, कारखाने आदि में द्वितीयक सहयोग पाया जाता है।
3. **तृतीयक समन्वय** : इस प्रकार का समन्वय किसी विशेष स्थिति का सामना करने या किसी विशेष उद्देश्य प्राप्ति के लिए किया जाता है। वह लक्ष्य या उद्देश्य बिल्कुल अस्थायी होता है। इस प्रकार के समन्वय की प्रकृति अस्थिर होती है। इस प्रकार के समन्वय में सम्मिलित लोगों के दृष्टिकोण में अवसर की प्रधानता होती है। यह चुनाव जीतने के लिए भिन्न पार्टियों में समन्वय या लड़ाई के समय विभिन्न पार्टियों में समन्वय तृतीयक होता है।

मैकाइवर तथा पेज ने समन्वय के दो प्रकार बताए हैं:–

टिप्पणी

1. प्रत्यक्ष समन्वय और
2. परोक्ष समन्वय

प्रत्यक्ष समन्वय : जब लोग मिलकर साथ–साथ कार्य करते हैं, जैसे प्रार्थना करना, पूजा, खेती, पत्थरों के ढेर को हटाना या कीचड़ से मोटरगाड़ी व कार को बाहर करने हेतु धक्का देना आदि का समन्वय प्रत्यक्ष समन्वय कहलाता है।

अप्रत्यक्ष समन्वय : अप्रत्यक्ष समन्वय तब लिया जाता है जब लोग एक ही लक्ष्य के लिए असमान कार्य करते हैं। प्रत्येक अपना विशिष्ट ढंग का कार्य या भूमिका पूरी करता है। उदाहरण के लिए, जब घर बनाने के लिए बढ़ई, प्लंबर, राज मिस्त्री, वास्तुविद और अकुशल मजदूर साथ–साथ काम करते हैं तो इस प्रकार हर व्यक्ति का समन्वय विशेष प्रकार के ज्ञान तथा कुशलताओं पर आधारित होता है। वर्तमान समाज में व्यक्ति को अप्रत्यक्ष समन्वय की स्थितियों का अधिकाधिक सामना तकनीकी उन्नति की विशेषज्ञतापूर्ण भूमिकाओं के कारण करना पड़ रहा है।

समन्वय एक ऐसी प्रक्रिया है, जो सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए अत्यंत अनिवार्य और महत्वपूर्ण है। अतएव, सहयोग एक सहगामी सामाजिक प्रक्रिया के रूप में जाना–समझा जाता है। यह एक सार्वभौम घटक है। यदि हमें समाज के एक सदस्य की तरह रहना है तो हम सहयोग के बिना कुछ नहीं कर सकते।

समन्वय सामाजिक अंतःक्रिया का लक्षित तथा सचेतन प्रकार है। इसमें दो तत्व सम्मलित हैं–

1. सामान्य लक्ष्य तथा
2. संगठित प्रयास

सभी व्यक्तियों का एक सामान्य उद्देश्य है, जैसे उत्सव का मनाया जाना। पर यह वे तभी कर सकते हैं जब सभी सदस्य संगठित तरीके से एक–दूसरे के साथ समन्वय करें। उदाहरणतः परिवार, समुदाय और राष्ट्र। परिवार के लोग परस्पर आर्थिक, संवेगात्मक, भावनात्मक तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक–दूसरे के साथ समन्वय करते हैं। यदि परिवार का कोई सदस्य बीमार हो जाता है या किसी कारण से मानसिक तनाव में आ जाता है तो घर के अन्य सभी लोग, अपने सम्पूर्ण कार्य छोड़कर बीमार व्यक्ति की ओर विशेष ध्यान देने लगते हैं। यदि एक व्यक्ति डॉक्टर से समय लेने और बीमार व्यक्ति को डॉक्टर के पास ले जाने, दवा लाने में व्यस्त हो जाता है तो दूसरे लोग उसके निर्धारित खाने की वस्तु तैयार करने तथा बीमार व्यक्ति के साथ रहकर वांछित चीजें देते रहने में लग जाते हैं। यह घर के सदस्यों के सहयोग का परिणाम होता है कि परेशानी में पड़ा हुआ व्यक्ति अपने कष्ट के क्षणों में परिस्थिति के साथ तालमेल बिठाकर ठीक हो जाता है।

पारिवारिक परिवेश में केवल मुसीबत के समय समन्वय किया जाना आवश्यक नहीं समझा जाता बल्कि दैनिक जीवन में भी घर की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परस्पर समन्वय से कार्य निपटाए जाते हैं।

समन्वय के स्वरूप

समन्वय की आवश्यकता प्रत्येक क्षेत्र में होती है। जितने प्रकार की क्रियाएं होती हैं, समन्वय भी उतने प्रकार का होता है। सामान्यतः समन्वय के निम्न स्वरूप हैं:–

टिप्पणी

1. सामाजिक समन्वय
2. मनोवैज्ञानिक समन्वय
3. सांस्कृतिक समन्वय
4. शैक्षिक समन्वय
5. आर्थिक समन्वय

3.2.3 समन्वय का महत्व

मानव जीवन की सुरक्षा, उन्नति तथा विकास के लिए समन्वय आवश्यक प्रक्रिया है। इसका महत्व जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में है।

1. **सामाजिक क्षेत्र में** : सामाजिक क्षेत्र में समन्वय से व्यक्ति में सामाजिक गुण विकसित होते हैं। व्यक्ति व्यवहार करना सीखता है। सामाजिक संबंधों का विकास होता है। समाज की व्यवस्था बनी रहती है। सामाजिक संगठन कार्य करने में सक्षम होते हैं।
2. **मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में** : मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। व्यक्ति की मनोवृतियां विकसित होती हैं। व्यक्ति में निर्णय करने की क्षमता आती है। व्यक्ति का सांवेगिक पक्ष दृढ़ होता है। व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण उचित दिशा में होता है। व्यक्ति समस्याओं का समाधान करना सीखता है।
3. **सांस्कृतिक क्षेत्र में** : संस्कृति का विकास होता है। संस्कृति की रक्षा होती है। सांस्कृतिक परिवर्तन सहयोग पर निर्भर है। सांस्कृतिक गुण सहयोग से आते हैं।
4. **शैक्षिक क्षेत्र में** : शैक्षिक क्षेत्र में सभी प्रकार की सीखने तथा समझने की प्रक्रिया सहयोग पर निर्भर है। शैक्षणिक उन्नति का आधार सहयोग है। अर्जित ज्ञान सहयोग पर निर्भर है।
5. **आर्थिक क्षेत्र में** : व्यक्ति अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति सहयोग द्वारा ही कर सकता है। देश का आर्थिक विकास सहयोग पर निर्भर है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. "जब व्यक्ति समान उद्देश्य के लिए एक साथ कार्य करते हैं तो उनके व्यवहार को समन्वय या सहयोग कहते हैं।" यह परिभाषा किसकी है?
   (क) ग्रीन. ए. डब्ल्यू. (ख) फेयरचाइल्ड एच. पी.
   (ग) ऑगबर्न तथा निमकॉफ (घ) इनमें से कोई नहीं
2. समन्वय की आवश्यक शर्त क्या है?
   (क) सहमति (ख) सामूहिक प्रयत्न
   (ग) समान इच्छा (घ) ये सभी

टिप्पणी

3.3 संघर्ष : प्रकृति, कारण एवं प्रभाव

संघर्ष शब्द का अर्थ होता है हितों में टकराव। संसाधनों की कमी से समाज में संघर्ष उत्पन्न होता है क्योंकि इन संसाधनों को पाने और उन पर कब्जा करने के लिए प्रत्येक समूह संघर्ष करता है। संघर्ष के आधार अलग–अलग होते हैं। ये वर्ग अथवा जाति, जनजाति अथवा लिंग या फिर धार्मिक समुदाय होते हैं। सामाजिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं में संघर्ष की प्रकृति तथा रूप सदैव परिवर्तित होते रहे हैं। प्रांत संघर्ष किसी भी समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा सदैव से रहा है। सामाजिक परिवर्तन तथा लोकतान्त्रिक अधिकारों पर सुविधावंचित तथा भेदभाव का सामना कर रहे समूहों द्वारा हक जताना संघर्षों को और उभारता है।

संघर्ष विसंगति अथवा प्रत्यक्ष झड़प के रूप में दिखाई देते हैं जहां ये खुलकर प्रकट किए जाते हैं। संघर्ष सामाजिक प्रक्रिया की अन्य प्रकार के विरोध की प्रक्रिया होती है। यह प्रत्येक समाज या सामाजिक प्राणियों में अन्तर्निहित होता है और अभिवृतियों, व्यवहार, रूढ़िबद्धताओं तथा सामाजिक दूरी में प्रतिबिंबित होता है। संघर्ष की प्रक्रिया तब सामने आती है, जब एक समूह के प्रतिमान और जीवन–मूल्य दूसरे समूह के प्रतिमान और जीवन–मूल्यों से टकराते हैं या जब एक समूह अपने स्वयं के जीवन–मूल्यों तथा उद्देश्यों के लिए दूसरों से संघर्ष या द्वंद्व करता है। कभी–कभी संघर्ष तब स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं जब एक व्यक्ति या समूह अपने लक्ष्यों को पूरा करने की चेष्टा इस तरह से करता है कि उन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए चेष्टा करते हुए दूसरे लोगों को बाधा पहुंचाता है।

समाज में संघर्ष उस समय उत्पन्न होता है जब प्रतिभागियों का ध्यान अभीष्ट उद्देश्यों या लक्ष्य से हटकर व्यक्तियों तथा समूहों पर केन्द्रित हो जाता है। संघर्ष एक सामाजिक प्रक्रिया है, जो सभी समाजों में पाई जाती है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति अथवा समूह किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए दूसरे व्यक्तियों अथवा समूहों को रोकने का प्रयत्न करते हैं।

संघर्ष की प्रक्रिया में घृणा, दुश्मनी, विरोध, अवमानना, वैर, नफरत, प्रतिद्वंद्विता तथा तनाव आदि सम्मिलित होते हैं। इन सभी की अभिव्यक्ति अनेक अर्थपूर्ण कथनों के साथ क्रियाकलापों में भी पाई जाती है, जैसे सामाजिक दूरी बनाए रखने, परस्पर भोजन के नियम आदि। इसी तरह अन्य मसलों पर संघर्ष व्यक्ति को विरोध करने, झगड़ा, हाथापाई, वैर, असहमति तथा मुकदमा डालने आदि की ओर ले जाता है। इस तरह समाजशास्त्रियों द्वारा संघर्ष एक असहयोग पैदा कने वाली सामाजिक प्रक्रिया मानी जाती है।

प्रत्यक्ष संघर्ष में एक सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति एक–दूसरे का सीधा विरोध करते हैं। संघर्ष कई बार हिंसात्मक रूप अख्तियार कर लेते हैं। इसके हिंसात्मक रूप अख्तियार कर लेने पर संघर्ष की प्रक्रिया में आर्थिक कारणों से वर्ग संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। कार्ल मार्क्स ने वर्ग संघर्ष की अवधारणा के द्वारा यह बताने की कोशिश की थी कि कैसे आर्थिक स्वार्थ की टकराहट से उन्माद की प्रक्रिया में एक वर्ग का स्वार्थ परस्पर विरोधी होता है जिसके कारण शोषित वर्ग

टिप्पणी

संगठित होकर वर्ग चेतना के आधार पर शोषक वर्ग को हटाकर वर्गविहीन समाज की स्थापना करने का लक्ष्य बनाता है।

जब व्यक्ति या समूह एक–दूसरे के सामान्य लक्ष्य को प्राप्त करने में स्वयं तो सफल नहीं होते लेकिन उस लक्ष्य को अगर दूसरे प्राप्त करना चाहें तो उसका मिल–जुलकर विरोध करते है तो ऐसे संघर्ष को अप्रत्यक्ष संघर्ष की संज्ञा दी जाती है। संघर्ष एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समाज के प्रतिमानों का व्यक्तिगत तथा सामूहिक स्तर पर विरोध किया जाता है।

प्रतिस्पर्धा में नियमों का पालन किया जाता है लेकिन संघर्ष में प्राथमिक रूप से कोई नियम नहीं होता। संघर्षपूर्ण स्थितियां तब पैदा होती हैं जब आपसी व्यवहार में लोगों के व्यक्तिगत अथवा समूह के परस्पर स्वार्थ एक–दूसरे से टकरा जाते हैं। दैनिक जीवन में दिखाई देने वाले संघर्ष के सर्वाधिक सामान्य उदाहरण पिता की मृत्यु के बाद भाइयों में जायदाद के बंटवारे को लेकर संघर्ष, गांव की दो जातियों या समूहों में संघर्ष, स्थानीय स्तर पर विभिन्न राजनीतिक पार्टियों या दलों का संघर्ष आदि है।

संघर्ष में दूसरे लोगों की इच्छा के विरुद्ध जानबूझकर विरोध, आग्रह अथवा जबरदस्ती करने की कोशिश होती है। एक प्रक्रिया के रूप में संघर्ष सहयोग का विरोधी होता है। संघर्ष से असहमति, उत्पाद या अशांति के लिए खतरा पैदा होता है।

संघर्ष की प्रक्रिया का वर्णन करने वाले प्रायः यह मान कर चलते हैं कि संघर्ष के द्वारा समाज की व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो जाती है, परन्तु इसके बावजूद भी यह कहा जाता है कि सहयोग की तरह संघर्ष भी एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

3.3.1 संघर्ष की परिभाषा, प्रकृति एवं प्रकार

ग्रीन. ए. डब्ल्यू के अनुसार, संघर्ष किसी अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों की इच्छा का जानबूझकर विरोध करने, उसे रोकने अथवा उसे शक्तिपूर्वक पूर्ण कराने से संबंधित प्रयत्न है।

सेल्जेनिक के मुताबिक, संघर्ष के लिए स्वार्थों की टकराहट एक महत्वपूर्ण कारक है। जब एक समूह के सदस्य भौतिक पदार्थों की कमी के कारण, उसे प्राप्त करने के लिए एक–दूसरे के खिलाफ कार्य करते हैं, तब इसे संघर्ष कहा जाता है।

गिलिन एंड गिलिन के अनुसार, संघर्ष वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति अथवा समूह अपने उद्देश्य की प्राप्ति अपने विरोध के प्रति प्रत्यक्षतः हिंसात्मक तरीके अपना कर अथवा उसे हिंसात्मक तरीका अपनाने की धमकी देकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहता है।

ए. डब्ल्यू. ग्रीन के मुताबिक, संघर्ष वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति या समूह अपने विरोधी को प्रत्यक्ष चुनौती देकर या दबाव डालकर अपने उद्देश्य को प्राप्त करना चाहता है।

जार्ज सिमेल के अनुसार, संघर्ष को विघटनात्मक प्रक्रिया के रूप में देखना भ्रामक होगा क्योंकि इसके कुछ सकारात्मक पहलू भी देखे जा सकते हैं।

टिप्पणी

संघर्ष प्रतिकूलता के पश्चात प्रारंभ होता है। स्वार्थपरता बढ़ने से व्यक्ति एक–दूसरे को हानि पहुंचाने लगता है। इसके विरोध में दूसरा व्यक्ति अपनी रक्षा करने का प्रयत्न करता है और उसको हानि पहुंचाने से रोकता है, जिससे मनोवैज्ञानिक स्तर पर संघर्ष की रूपरेखा बनती है तथा अवसर आने पर प्रत्यक्ष संघर्ष होने लगता है।

संघर्ष की प्रकृति

संघर्ष की प्रकृति को निम्न बिदुंओं के तहत समझा जा सकता है–

- संघर्ष एक चेतन व्यक्ति, निरंतर चलने वाली तथा सार्वभौमिक प्रक्रिया है।
- संघर्ष एक चेतन प्रक्रिया है। संघर्ष में प्रतिद्वंद्वियों को एक–दूसरे के बारे में पूरा ज्ञान होता है।
- संघर्षरत व्यक्ति उद्देश्य और लक्ष्य प्राप्त करने के साथ–साथ अपने विरोधी का दमन भी करना चाहता है।
- संघर्ष में व्यक्ति अपनी शक्ति का अधिकाधिक उपयोग करता है।
- संघर्ष में प्रायः व्यक्ति के संवेग (क्रोध) तेज होते हैं।
- संघर्ष द्वारा व्यक्ति की सतर्कता में वृद्धि होती है।
- संघर्ष में स्थितियों का सूक्ष्म से सूक्ष्म विश्लेषण होता है।
- संघर्ष में व्यक्ति प्रधान होता है।
- संघर्ष में व्यक्ति लक्ष्य विरोधी होने की दिशा की ओर अग्रसर होते हैं।
- संघर्ष में व्यक्ति द्वारा नियम और कानूनों का उल्लंघन होता है।
- संघर्ष में व्यक्ति द्वारा विरोधी का दमन होता है।
- संघर्ष में व्यक्ति की शक्ति का ह्रास होता है।
- समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया सदैव चलती रहती है। अतः समाज में संघर्ष भी निरंतर चलता रहता है।
- समाज में संचय की प्रवृति का बढ़ना भी संघर्ष उत्पन्न करता है।

संघर्ष के गुण–दोष

- संघर्ष की प्रकृति हर समाज में अलग–अलग तरह की होती है किन्तु यह सभी समाजों में पाया जाता है। अतः संघर्ष सार्वभौमिक होता है। फिर भी कोई भी समाज हमेशा संघर्षरत नहीं होता है।
- संघर्ष एक सचेतन क्रिया है। इसमें संलग्न लोग अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जानबूझकर एक–दूसरे का विरोध करते हैं।
- मूल रूप से संघर्ष एक व्यक्तिगत क्रिया होता है। समय–समय पर और अधिक बल प्राप्त कर लेता है तथा इसमें अनेक लोग शामिल हो जाते हैं। ऐसे मामलों में यह एक सामाजिक समूह के स्तर पर प्रकट होने लगता है या इसमें सम्पूर्ण समाज ही शामिल हो जाता है।

टिप्पणी

- संघर्ष एक सामाजिक प्रक्रिया है, जो कभी–कभी दिखाई देती है। यह निरंतर प्रक्रिया नहीं है। उदाहरणतः एक गांव में दो विरोधी समूहों के बीच का संघर्ष एक उपद्रव का रूप धारण कर सकता है और उसके बाद वही शांति स्थापित हो सकती है, जो इस संघर्ष के पहले थी। अतः संघर्ष में सदा निरंतरता का अभाव होता है।
- संघर्ष से सामाजिक परिवर्तन आता है। संघर्षपूर्ण विचार और परस्पर विरोधी विचारधाराएं सामाजिक परिवर्तन की पूर्व शर्तें होती हैं। यदि एक समाज सदा एकरस और शांति की अवस्था में रहेगा तो वह तब तक स्थिर रहेगा जब तक उसमें सामाजिक विषमता या असंतुलन नहीं आएगा। संघर्ष विषमता की अभिव्यक्ति है।

समाजशास्त्री संघर्ष का उद्‌भव व्यक्तियों या मानव–समूहों के बीच विद्यमान सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संबंधों में निहित मानते हैं। ऐसे संबंधों में अंतःनिहित असमानता प्रतिबिंबित होती है। इस भांति, सामाजिक संघर्ष की उत्पत्ति का मूल आधार असमानता है। एक व्यक्ति अथवा समूह के स्तर पर व्याप्त संबंधों के समझ या पूर्णतः वंचित करने की स्थिति स्थिति संघर्ष के उद्‌गम या उत्पत्ति का प्रमुख तत्व है। संघर्षरत दल इस बात को समझते हैं कि वे एक–दूसरे के विरोधी दल से संघर्ष कर रहे हैं और यही जानकारी संघर्ष जारी रखने के लिए आवश्यक होती है। समाजशास्त्री मानव की नैसर्गिक प्रकृति को संघर्ष के प्रमुख स्रोत के रूप में स्वीकृति नहीं देते अर्थात उनके अनुसार, आदमी प्रकृति से ही लड़ाकू नहीं होता। दूसरी ओर, वे असमान, असंतुलित सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक सम्बन्ध की प्रवृति को सामाजिक संघर्ष का मूल कारण मानते हैं।

संघर्ष के प्रकार

संघर्ष अनेक प्रकार का हो सकता है। वे हैं– युद्ध, पारिवारिक कलह, झगड़ा, मुकदमा और अवैयक्तिक विचारों का संघर्ष। युद्ध एक सामूहिक संघर्ष होता है, जिसे हम सभी जानते हैं। मनुष्य में गहन असहमति की प्रवृति या आवेग के कारण युद्ध हो जाया करते हैं। पारिवारिक कलह या झगड़े एक से दूसरे समूह द्वारा आरोपित किसी प्रकार के अन्याय के कारण घटित हो जाते हैं। मुकदमेबाजी कोर्ट–कचहरी में दायर प्रकरणों से संबंधित होती है। किसी आदर्श के लिए व्यक्तियों द्वारा किया गया संघर्ष अवैयक्तिक विचारों का संघर्ष होता है।

3.3.2 संघर्ष के कारण एवं प्रभाव

समाज में संघर्ष के प्रमुख कारण हैं–

1. **वैयक्तिक संघर्ष** : एक ही समूह के दो सदस्यों के बीच संघर्ष व्यक्तिक होता है। यह संघर्ष निजी स्वार्थों के कारण होता है। इससे समूह को कोई लाभ नहीं होता है। अतः हर संभव प्रयत्न संघर्ष रोकने के लिए किया जाता है।
2. **प्रजातीय संघर्ष** : विभिन्न प्रजातियों में एक–दूसरे से श्रेष्ठता और हीनता की भावना के कारण यह संघर्ष होता है। जैसे, संयुक्त राज्य अमेरिका में नीग्रो और श्वेत प्रजातीय संघर्ष आदि।

टिप्पणी

3. **वर्ग संघर्ष** : दो वर्गों के बीच का संघर्ष वर्ग संघर्ष कहलाता है। इसका प्रमुख कारण इनके हितों का टकराव या एक वर्ग का दूसरे वर्ग द्वारा शोषण है।
4. **राजनीतिक संघर्ष** : यह दो प्रकार का होता है। देश के अन्दर तथा अंतर्राष्ट्रीय। पहला संघर्ष देश में विभिन्न दलों के मध्य होता है तथा दूसरा संघर्ष युद्ध होता है।

गिलिन एंड गिलिन ने संघर्ष के कारणों को निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया है।

1. **व्यक्तिगत विभेद** : दो व्यक्तियों के बीच स्वभाव, दृष्टिकोण, विचारों तथा मूल्यों आदि का अंतर संघर्ष का कारण बनता है।
2. **सांस्कृतिक विभेद** : समाज के दो समूहों के सांस्कृतिक विभेद के कारण उनमें आपस में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है।
3. **हितों का संघर्ष** : दो व्यक्तियों या समूहों के हित जब आपस में टकराते हैं तो उनमें संघर्ष होता है।
4. **सामाजिक परिवर्तन** : जब समाज के एक भाग में परिवर्तन होता है और दूसरा भाग पीछे रह जाता है, जिससे एक सामाजिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है और संघर्ष पनपता है।

संघर्ष का प्रभाव

संघर्ष अन्तःसमूह में एकता पैदा करता है। एक समूह के सदस्य संघर्ष के समय आपसी मतभेद भुलाकर एकता बनाए रखते हैं ताकि बाहरी समूह के आक्रमण का मुंहमांगा जवाब दिया जा सके। उदाहरण के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच हुए युद्ध को ले लीजिए, युद्ध के समय देश के अंदर एकता की भावना बढ़ गई। युद्ध की स्थिति में हमारे बीच के भेदभाव पर हमारा ध्यान न जाकर राष्ट्र की रक्षा करना प्रमुख लक्ष्य होता है तब सभी देशवासी एक होकर संगठित शक्ति का परिचय देते हैं।

मजूमदार ने संघर्ष के महत्व को स्पष्ट करते हुए यह उल्लेख किया कि संघर्ष अंतःसमूह के मनोबल को बढ़ाता है। एक संघर्ष संकटों को दूर करने के लिए अहिंसात्मक साधनों की खोज की ओर प्रेरित कर सकता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि संघर्ष समाज में सकारात्मक भूमिका का निर्वाह करता है। किन्तु संघर्ष सदैव सकारात्मक परिणाम ही नहीं देता बल्कि इसके नकारात्मक परिणाम भी होते हैं। संघर्ष में विरोधी के प्रति हिंसात्मक तरीका, बल प्रयोग का इस्तेमाल भी किया जा सकता है और इसका परिणाम जीवन को भी खत्म करने तक हो सकता है। जब एक ही समूह के सदस्यों में संघर्ष होता है तब यह समूह में एकता की कमी होने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संघर्ष की वजह से समूह के सदस्य छोटे–छोटे समूहों में विभाजित हो जाते हैं। लगातार चलने वाला संघर्ष व्यक्तित्व के विकास में भी बाधा उत्पन्न करता है। संघर्ष के दौरान परिवार, समूह या राष्ट्र के लोग चिंताग्रस्त रहते हैं, तनाव में जीते हैं। अतः उनका व्यक्तित्व खण्डित होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि संघर्ष का जहां एक ओर प्रकार्यात्मक पक्ष है, वहीं दूसरी ओर इसका अकार्यात्मक पक्ष भी है, समाज में व्यक्तिगत संघर्ष, वैयक्तिक संबंधों में संघर्ष बढ़ने से मुकदमेबाजी, विवाद

की स्थिति बढ़ती है। जब संघर्षरत समूह समान शक्तिशाली हो तब कोई भी विजयी नहीं होता। ऐसी अवस्था में संघर्ष से अपने संकटों को दूर करने हेतु संघर्षरत व्यक्ति अथवा समूह व्यवस्थापन की ओर बढ़ते हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

3. एक ही समूह के दो सदस्यों के बीच होने वाला संघर्ष कहलाता है–

   (क) प्रजातीय संघर्ष (ख) वर्ग संघर्ष

   (ग) वैयक्तिक संघर्ष (घ) राजनीतिक संघर्ष

4. गिलिन एंड गिलिन ने संघर्ष के कारणों को कितने आधारों पर स्पष्ट किया हैं?

   (क) तीन (ख) चार

   (ग) छह (घ) आठ

3.4 समूह : प्रकृति, नेतृत्व, समूह निर्णय निर्माण एवं संदर्भ समूह

समूह का निर्माण अकारण नहीं होता है। इसके पीछे कई कारण होते हैं। एक समूह निर्माण में प्रभावी कारण मनुष्य की स्वार्थता नजर आती है। समूह के निर्माण के बारे में मैकाइवर और पेज ने समूह निर्माण की कुछ विशेषताओं को बताते हुए कहा कि यह सामान्य हित की सामूहिकता की भावना को जन्म देता है। इसका स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने तीन बातों को मुख्य रूप से कहा कि सर्वप्रथम मनुष्य स्वयं ही आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है, पर वह व्यावहारिक नहीं है। दूसरा, व्यक्ति समाज के अन्य सदस्यों से संघर्ष करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है, पर वह समान समाज के लिए विघटनकारी है। तीसरा, व्यक्ति कुछ लोगों से सहयोग करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है।

मानव–क्षेत्र में समूह का अर्थ मनुष्यों के ऐसे संकलन से है जो एक–दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध रखते हैं। शेरिफ के अनुसार, समूह एक सामाजिक इकाई है जिसका निर्माण ऐसे व्यक्तियों से होता है, जिनके बीच निश्चित परिस्थिति एवं भूमिका विषय का संबंध हो तथा व्यक्ति–सदस्यों के आचरण को, कम से कम समूह के लिए महत्वपूर्ण मामलों में, नियमित करने के लिए जिसके अपने कुछ मूल्य या आदर्श नियम हो।

3.4.1 समूह की प्रकृति

समूह की प्रकृति निम्न होती है–

- **व्यक्तियों का समूह** : यह दो या दो से अधिक व्यक्तियों का होता है। किसी भी समूह का निर्माण एक व्यक्ति अकेले नहीं कर सकता है।

टिप्पणी

- **उद्देश्य पूर्ति** : प्रत्येक समूह का निर्माण किसी न किसी उद्देश्य के कारण ही होता है जिसमें सभी सदस्य साथ मिलकर उद्देश्य की प्राप्ति करते हैं। समूह के सदस्यों में कार्य–विभाजन कर दिया जाता है।
- **सामान्य रुचि** : किसी भी समूह का निर्माण उन्हीं व्यक्तियों द्वारा होता है जिनकी रुचि एक समान होती है, जैसे एक सी पसंद का होना, खेलना–कूदना आदि।
- **एक समान हित** : मनुष्य एक स्वार्थी प्राणी है, जब व्यक्ति का हित समान होता है तो वह समूह का निर्माण करना आरम्भ कर देता है। विरोधी हितों वाले व्यक्तियों के समूह का निर्माण करना असंभव हो जाता है।
- **लक्ष्य** : कोई समूह समूह के रूप में उसी समय तक कायम रह सकता है जब तक वह किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक साथ मिलकर प्रयास करता है। यदि लक्ष्य प्राप्ति न हो तो समूह में एकता की भावना नहीं रह पाएगी और समूह टूट जाएगा।
- **ऐच्छिक सदस्यता** : समूह की सदस्यता ऐच्छिक होती है। इसका तात्पर्य यह है कि सदस्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह को स्वीकारता है। व्यक्ति सभी समूहों का सदस्य नहीं बनता बल्कि उन्हीं समूहों की सदस्यता ग्रहण करता है जिनमें उसके हितों, आवश्यकताओं एवं रुचियों की पूर्ति होती हो।
- **स्तरीकरण** : समूह में सभी व्यक्ति समान पदों पर नहीं होते वरन् वे अलग–अलग प्रस्थिति एवं भूमिका निभाते हैं। अतः समूहों में पदों का उतार–चढ़ाव पाया जाता है।
- **सामूहिक आदर्श** : प्रत्येक समूह में सामूहिक आदर्श एवं प्रतिमान पाए जाते हैं जो सदस्यों के पारस्परिक व्यवहारों को निश्चित करते हैं, उन्हें एक स्वरूप प्रदान करते हैं। प्रत्येक सदस्य से यह अपेक्षा कि जाती है कि वह समूह के आदर्शों एवं प्रतिमानों जैसे प्रथाओं, कानूनों, लोकाचारों, जनरीतियों आदि का पालन करें।
- **स्थायित्व** : समूह में थोड़ी बहुत मात्रा में स्थायित्व भी पाया जाता है। हालांकि कुछ समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के बाद ही समाप्त हो जाते हैं, बावजूद इसके वे इतने अस्थिर नहीं होते कि वे सदा कल के लिए बने या अगले दिन ही समाप्त हो जाएं। इसलिए समूह में स्थायित्व पाया जाता है।
- **समझौता** : किसी भी समूह की स्थापना तभी संभव है, जब उसके सदस्यों में समूह के उद्देश्यों, कार्य प्रणाली, स्वार्थ पूर्ति, नियमों आदि को लेकर आपस में समझौता हो।
- **ढांचा** : प्रत्येक समूह की एक संरचना या ढांचा होता है अर्थात उसके नियम, कार्यप्रणाली, अधिकार, कर्तव्य, पद एवं भूमिकाएं आदि तय होते हैं और सदस्य उन्हीं के अनुसार आचरण करते हैं।

टिप्पणी

- **अंतर्वैयक्तिक संबंध** : एक समूह में परस्पर अन्तःक्रिया का होना अत्यंत ही आवश्यक होता है। जब तक वह किसी अन्य व्यक्ति के साथ अन्तः क्रिया नहीं करेगा तब तक वह समूह का सदस्य नहीं कला सकता।
- **आदान–प्रदान** : एक समूह के सदस्य अपने विचारों का ही आदान–प्रदान नहीं करते बल्कि एक–दूसरे के कष्ट में सहयोग एवं सहायता भी करते हैं। सहयोग एवं आदान–प्रदान से ही समूह के सदस्य अपने सामान्य हितों की पूर्ति कर पाते हैं।
- **स्पष्ट संख्या** : एक सामाजिक समूह में सदस्यों की संख्या स्पष्ट होनी चाहिए, जिससे उसके आकार एवं प्रकार को स्पष्ट रूप से समझा जा सके।

3.4.2 समूह प्रक्रिया का नेतृत्व

नेतृत्व (Leadership) से आशय है किसी व्यक्ति या किसी समूह का निर्देशन करना अर्थात किसी कार्य के सम्पूर्ण करने में अपनी अहम भूमिका का निर्वहन करना और सभी का मार्ग प्रशस्त करना। इसके द्वारा व्यक्ति अपनी क्षमताओं एवं अपने बौद्धिक स्तर के आधार पर किसी को राह दिखाने का कार्य करता है।

समूह के निर्माण तथा विकास के लिए नेतृत्व की उत्पत्ति होती है। जब किसी भी समूह का निर्माण होता है तो प्रारंभ में कुछ सदस्य अन्य सदस्यों की अपेक्षा ज्यादा सक्रिय रहते हैं और समूह पर सक्रियता के कारण उनका आधिपत्य भी उस समूह पर रहता है। और अधिपत्य रखने वाला व्यक्ति उस समूह का नेता होता है और नेतृत्व का श्री गणेश वही करता है। वह नेता के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नीति निर्धारण एवं योजना का निर्माण करता है।

वहीं, जब समूह की बनावट अस्थिर रहती है तो उसके सदस्यगण एक ऐसे नेता की खोज करते हैं जो समूह को स्थिर एवं स्थायी बना सके। इस परिस्थिति में योग्य व्यक्ति उस समूह का नेता अपनी योग्यता के आधार पर बन जाता है एवं समूह की आवश्यकताओं को पूरा करता है। अशांत वातावरण में समूह के अन्दर ऐसे नेता दृढ़ता के साथ कार्य को संपादित करते हैं और अपने उपसमूहों को भी सुव्यवस्थित करते हैं। जिन व्यक्तियों में क्षमता होती है कि वे अपने विचारों से दूसरों को प्रभावित कर सकें एवं ऐसे लोग जो अपने विचारों से दूसरों के मनोबल में वृद्धि करने का कार्य करते हैं, ऐसे लोगों के अंदर नेतृत्व करने की कला होती है और ऐसे व्यक्तियों में समूह का निर्देशन करने की भी कला होती है।

मार्गदर्शन करने वाले व्यक्ति को ही समाज के नेता के रूप में घोषित किया जाता है। उसके अंदर वह क्षमता होती है कि वह हर परिस्थिति में समाज या समूह का मार्गदर्शन कर सकता है। नेतृत्व क्षमता वह गुण है जो अन्य व्यक्ति की क्रियाओं को निर्देशित करता है। यह व्यक्तित्व का एक शील गुण है। यह समूह के व्यक्तियों के व्यवहारों को प्रभावित करने की योग्यता है। नेतृत्व नवीन दिशा में परिवर्तन लाने का कारण है। प्रारम्भ में माना जाता रहा है कि किसी नेता में कुछ विशेष गुण होते हैं जिनके कारण वह नेतृत्व कर पाता है। प्रारम्भ में आम धारणा थी कि बुद्धिमानी, प्रखर कल्पना, काम के प्रति लगातार आग्रह, सन्तुलित मन आदि कुछ गुण नेता में

होने आवश्यक हैं। जिस व्यक्ति में यह गुण पाए जाते हैं वह नेतृत्व कर सकता है और यदि उसे प्रशिक्षित कर दिया जाए तो वह व्यक्ति और भी प्रभावी नेतृत्व दे सकता है।

टिप्पणी

नेतृत्व के साथ निम्न गुणों का धनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है–

- अगुवाई करना
- सामाजिक कार्य में लगे रहना
- परिस्थितियों के अनुरूप ढलना
- ख्याति
- निर्णय शक्ति
- लोकप्रियता
- आत्मविश्वास
- सहयोग करना
- दूरदृष्टि
- दायित्व निर्वाह

नेतृत्व की परिभाषा

काटज के मुताबिक, नेतृत्व एक प्रभाव है जिसमें जो भी व्यक्ति नेता की स्थिति में होता है वह दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करता है।

डोनेल के अनुसार, किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संदेश द्वारा लोगों को प्रभावित कर सकने की कला है।

बेरन और बारने के अनुसार, यह वह क्रिया है जिसमें एक नेता लोगों पर अपना प्रभाव डालता है और वह उद्देश्य प्राप्ति हेतु व्यक्तियों का मार्गदर्शन करता है।

जॉर्ज आर. टेरी ने नेतृत्व को उस योग्यता के रूप में परिभाषित किया है जो उद्देश्यों के लिए स्वेच्छा से कार्य करने हेतु प्रभावित करता है।

लिंविग्स्टन के अनुसार, नेतृत्व से आशय उस योग्यता से है जो अन्य लोगों में एक सामाजिक उद्देश्य का अनुसरण करने की इच्छा जाग्रत करती है।

मूरे नेतृत्व को एक ऐसी योग्यता मानते हैं जो व्यक्तियों को नेता द्वारा अपेक्षित विधि के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

जॉन जी. ग्लोवर नेतृत्व को प्रबन्ध का वह महत्वपूर्ण पक्ष मानते हैं जो उस योग्यता, सृजनशीलता, पहल शक्ति तथा सहानुभूति को व्यक्त करता है जिसकी सहायता से संगठन प्रक्रिया में मनोबल का निर्माण करके लोगों का विश्वास, सहयोग एवं कार्य करने की तत्परता प्राप्त की जाती है।

ऑर्डवे टीड के अनुसार, नेतृत्व उन गुणों के संयोग का नाम है जिनको रखने पर कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से काम लेने के योग्य होता है, विशेषकर उसके प्रभाव द्वारा अन्य लोग स्वेच्छा से कार्य करने के लिए तैयार हो जाते हैं।

टिप्पणी

जार्ज आर. टैरी के अनुसार, नेतृत्व शक्तियों को पारस्परिक उद्देश्यों के लिए स्वैच्छिक प्रयत्न करने हेतु प्रभावित करने की योग्यता है। नेतृत्व का अर्थ है कि अधीनस्थ को निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में सार्थक ढंग से प्रेरित करना. नेतृत्व प्रबन्ध का एक भाग है। अच्छा नेतृत्व एक ऐसी शक्ति है जो संस्था तथा कर्मचारियों की सुप्त क्षमताओं को जाग्रत कर देता है और उन्हें एक दिशा में समन्वित तथा प्रशस्त करके चामत्कारिक परिणामों को प्राप्त करने में मदद करता है। सामान्यतया नेतृत्व की यह अभिव्यक्ति चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में अधिक दृष्टिगोचर होती है।

नेतृत्व के प्रकार

नेतृत्व को उसकी प्रकृति के अनुसार निम्नलिखित भागों में विभक्त किया जा सकता है–

- **जनतंत्रीय नेता** : जनतंत्रीय नेता वह है जो अपने समूह से परामर्श तथा नीतियों एवं विधियों के निर्धारण में उनके सहयोग से कार्य करता है। यह वही करता है जो उसका समूह चाहता है।
- **निरंकुश नेता** : ऐसा नेता समस्त अधिकार एवं निर्णयों को स्वयं अपने में केन्द्रित कर लेता है।
- **निर्बाधवादी नेता** : यह वह नेता होता है, जो अपने समूह को अधिकतर अपने भरोसे छोड़ देता है। समूह के सदस्य स्वयं अपने लक्ष्य निर्धारित करते हैं और अपनी समस्याओं को सुलझाते हैं। वे स्वयं को प्रशिक्षित करते हैं और स्वयं ही अपने को अभिप्रेरित करते हैं। नेता का कार्य तो एक सम्पर्क कड़ी का रहता है। वह उन्हें कार्य करने के लिए केवल आवश्यक सूचना और साधन प्रदान करता है। अधिक कुछ नहीं करता।
- **संस्थात्मक नेता** : यह वह नेता होता है जिसे अपने पद के प्रभाव से उच्च स्थिति प्राप्त होती है तथा वे अपने अनुयायियों को हर सम्भव तरीकों से सहयोग प्रदान करते हैं।
- **व्यक्तिगत नेता** : व्यक्तिगत नेतृत्व की स्थापना व्यक्तिगत सम्बन्धों के आधार पर होती है। ऐसा नेता किसी कार्य के निष्पादन के सम्बन्ध में निर्देश एवं अभिप्रेरणा स्वयं अपने मुख द्वारा अथवा व्यक्तिगत रूप से देता है। इस प्रकार का नेता अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी होता है क्योंकि अपने अनुयायियों से इनका निजी एवं सीधा सम्बन्ध रहता है। इसमें नेता के बौद्धिक ज्ञान का विशेष महत्व होता है।
- **अव्यक्तिगत नेता** : अव्यक्तिगत नेतृत्व की स्थापना प्रत्यक्ष रूप से नेताओं तथा उप–नेताओं के अधीन कर्मचारियों के माध्यम से होती है। इसमें मौखिक बातों के स्थान पर लिखित बातें होती हैं। आजकल इस प्रकार का नेतृत्व प्रायः सभी उपक्रमों में विद्यमान है।
- **क्रियात्मक नेता** : यह वह नेता होता है जो अपनी योग्यता, कुशलता, अनुभव एवं ज्ञान के आधार पर अपने अनुयायियों का विश्वास प्राप्त करता है एवं उनका मार्गदर्शन करता है। अनुयायी नेता के निर्देशन एवं सलाह के आधार पर ही क्रियाओं का निर्धारण एवं निष्पादन करते हैं।

टिप्पणी

नेतृत्व के गुण

किसी कार्य की सफलता या असफलता नेतृत्व की किस्म पर निर्भर करती है। इसलिए एक नेता में निम्न गुणों का होना आवश्यक है–

1. निर्णायकता
2. स्फूर्ति एवं सहिष्णुता
3. आत्मविश्वास
4. अनुभूति
5. उत्तरदायित्व
6. मानसिक क्षमता
7. योग्यता एवं तकनीकी सामर्थ्य
8. साहस
9. प्रेरित करने की योग्यता

एक सफल नेता के गुण

1. सम्मान
2. अन्य लोगों के लिए स्नेह
3. हास्य
4. प्रभावशीलता
5. लोगों को समझने की शक्ति
6. सिखाने की योग्यता
7. शुभचिन्ता
8. रूचि
9. वैयक्तिक चाल–चलन
10. तनाव प्रबंधन
11. भावनात्मक आत्म–नियंत्रण (प्रेरक कौशल, सहानुभूति, अनुनय)
12. घोषित मूल्यों के साथ अखंडता
13. आत्मविश्वास
14. व्यावहारिक कौशल
15. वैचारिक कौशल (विश्लेषण करें, समस्याओं को हल करें, निर्णय लें)
16. प्रबंधन कौशल (योजना, प्रतिनिधि, पर्यवेक्षण)

एक अच्छा नेता समय–समय पर अपने आचरण की परीक्षा करता रहता है।

टिप्पणी

नेतृत्व की विशेषताएं

नेतृत्व की विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. **अनुयायियों को एकत्रित करना** : बिना अनुयायियों के नेतृत्व की कल्पना करना कठिन है। वास्तव में, बिना समूह के नेतृत्व का कोई अस्तित्व ही नहीं है, क्योंकि नेता या नायक केवल अनुयायियों अथवा समूह पर ही अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता है। नेतृत्व का उद्देश्य अपने चारों ओर अपने अनुयायियों अथवा व्यक्तियों के समूह को एकत्र करना तथा उन्हें किसी निर्धारित सामूहिक उद्देश्य के प्रति निष्ठावान बनाए रखना है।
2. **आचरण एवं व्यवहार को प्रभावित करना** : नेतृत्व, प्रभाव के विचार की अपेक्षा करता है, क्योंकि बिना प्रभाव के नेतृत्व की कल्पना नहीं की जा सकती। नेतृत्व की सम्पूर्ण अवधारणा अब व्यक्तियों के एक–दूसरे के प्रभाव पर केन्द्रित है। लोक प्रशासन में नेतृत्व की भूमिका का सार ही यह है कि कोई अधिशासी किस सीमा तक अपने सहयोगी अधिशासियों के आचरण या व्यवहार को अपेक्षित दिशा में प्रभावित कर सकता है। परन्तु इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि अन्य व्यक्तियों के आचरण को प्रभावित करने से आशय उनसे अनुचित रूप से कार्य लेने से नहीं है। उसका कार्य अपने अधीनस्थ व्यक्तियों को निर्देशन देना तथा उन्हें एक ऐसे ढंग से कार्य करने के लिए प्रेरित करना है ताकि उनमें समझदार स्वहित वाली प्रतिक्रिया स्वतः जाग्रत हो सके।
3. **पारम्परिक सम्बन्ध** : मेरी पार्कर फौले ने नेता तथा अनुयायियों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध को नेतृत्व की प्रमुख विशेषता माना है। नेता वह नहीं है जो दूसरों की इच्छा को निर्धारित करता है, बल्कि वह है जो यह जानता है कि दूसरों की इच्छाओं को किस प्रकार अन्तर–सम्बन्धित किया जाए कि उनमें एक साथ मिलकर कार्य करने की प्रेरणा स्वतः जाग्रत हो सके। इस प्रकार एक नेता न केवल अपने समूह को प्रभावित करता है वरन् वह स्वयं भी अपने समूह द्वारा प्रभावित होता है।

नेतृत्व की विशेषता निम्न भी हैं–

- नेतृत्वकर्ता का व्यक्तित्व प्रभावशाली एवं आकर्षित होना चाहिए।
- उसके अंदर दूसरे व्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करने की कला होनी चाहिए।
- किसी भी परिस्थिति में सामान्य स्वभाव रखने वाला व्यक्ति होना चाहिए।
- संवेगात्मक भावों में उस व्यक्ति का पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए। जिससे उसे किसी भी परिस्थिति को संभालने में सहायता मिल सकें।
- समाज के साथ समायोजन रखने वाले व्यक्ति के अंदर यह योग्यता विद्यमान रहती है।

टिप्पणी

नेतृत्व (Leadership) के प्रकार

नेतृत्व सामान्यतः तीन प्रकार के होते हैं जो इस प्रकार हैं–

1. **व्यक्तित्व केंद्रित** : ऐसे व्यक्ति जो समाज में बिना किसी पद पर आसीन हुए अपने व्यक्तित्व के आधार पर मार्गदर्शन करने की क्षमता रखते हैं। ऐसे व्यक्तियों के अंदर जन्मजात संचालन करने की क्षमता विद्यमान रहती है और ऐसे व्यक्ति सदैव दूसरों का मार्गदर्शन करने में अपनी रुचि रखते हैं।
2. **पद केंद्रित** : ऐसे व्यक्ति जो किसी जिम्मेदाराना पद पर आसीन होते हैं और वे जिस समूह या जिस पार्टी से जुड़े होते हैं उनके उद्देश्यों की प्राप्ति करने में अपना बहुमूल्य योगदान देते हैं। ऐसे व्यक्ति में हर परिस्थिति में सामंजस्य बैठाने की कला विद्यमान होती है और ऐसे व्यक्तियों का अपने संवेगों पर नियंत्रण होता है। जैसे कोई नेता हजारों समर्थनकर्ता का मार्गदर्शन करता हैं।
3. **कार्य केंद्रित** : इसमें सामान्यतः ऐसे व्यक्ति आते हैं जो अपने कार्यों के माध्यम से दूसरों को प्रभावित करते हैं अर्थात जिन व्यक्तियों में जन्म से ही किसी कार्य को करने में महारत हासिल होती है। ऐसे व्यक्ति किसी कार्य को सम्पन्न कराने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं और उस कार्य को सफलतापूर्वक संपन्न करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को प्रायः एक मैनेजर के रूप में देखा व रखा जाता है।

3.4.3 परिवर्तन प्रतिनिधि के रूप में समूह

समूह स्वयं में परिवर्तन को सरल भी बनाता है और कठिन भी। वैसे परिवर्तन प्रणाली समूह के द्वारा विभिन्न प्रकार से प्रभावित होती है। इनमें से तीन रूप हैं जिनमें समूह की क्रियाएं सम्प्रेषण के द्वारा सदस्यों की अभिवृत्तियों को सुलभ बनाती हैं–

- अप्रत्यक्ष रूप से अर्थात समर्थन को हटाकर या वापस लेकर।
- विवेचना द्वारा अभिवृत्ति परिवर्तन करके।
- समूह निर्माण प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन करके।

समर्थन वापस लेकर (Removal of Support) : समूह अभिवृति परिवर्तन को अप्रत्यक्ष रूप से सुलभ बनाती है। यदि बाह्य या आतंरिक तनाव से समूह कमजोर होता है तो वह अपना अभिवृत समर्थन वापस ले लेता है और नई अभिवृतियों का निर्माण कर लेता है। यदि समूह में ऐसी कोई बात नहीं पाई जाती है, तो उनमें इन परिवर्तनों के प्रति प्रतिरोध पाया जाता है।

विवेचना द्वारा अभिवृति परिवर्तन (Discussion) : क्लेपर ने अपने प्रयोग में समूह के सदस्यों में अभिवृति परिवर्तन के अध्ययन हेतु एक सम्प्रेषण प्रस्तुत किया और यह परिणाम प्राप्त किया कि समूह की अनेक समस्याएं समूह के घोर विवेचन को उद्दीप्त करती हैं। समूह अभिवृतियों का मिथ्या प्रदर्शन करने वाले व्यक्ति सहमत नहीं होते हैं और उन अभिवृतियों का समर्थन नहीं करते हैं। ऐसी दशा में परिवर्तन की सम्भावना बन जाती है।

टिप्पणी

समूह निर्णय प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन (Change through group decision-process) : समूह निर्णय अभिवृति परिवर्तन का एक प्रमुख कारक है। लेविन एवं उनके सहयोगियों ने द्वितीय विश्वयुद्ध के समय किए गए अपने अध्ययन के आधार पर समूह निर्णय द्वारा परिवर्तन की प्रक्रिया में सात चरणों का घटित होना बताया है, जिनसे समूह निर्णय परिवर्तन को सुलभ बनाते हैं–

- समूह नेता किसी समस्या को श्रोता के समक्ष प्रस्तुत करता है, जो उनकी अभिप्रेरणा से संबंधित होती है। इस प्रस्तुतीकरण में क्रिया विधि सम्मलित होती है।
- नेता श्रोता सदस्यों से क्रिया के सन्दर्भ में अपनी भावनाओं के प्रस्तुतीकरण और विवेचना के लिए कहता है, जिसमें सदस्य अपनी आपत्तियों को भी प्रकट कर सकता है।
- नेता श्रोता सदस्यों की आपत्तियों को बिना अस्वीकार किए ही सुनता है और उन्हें महत्त्व देता है। वह आपत्ति करने पर श्रोता सदस्यों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है।
- सूचनाएं मांगने पर अतिरिक्त संरचनाएं प्रदान करता है।
- सदस्यों में विवेचना को प्रोत्साहित करता है एवं उन आपत्तियों का उत्तर देता है।
- विवेचना के अंत में नेता श्रोता सदस्यों से वांछित क्रिया सम्पादित करने के बारे में उनके निर्णय को जानने के लिए उनसे कहता है।

3.4.4 समूह निर्णय निर्माण

समूह निर्णय निर्माण को ही सहयोगात्मक निर्णय निर्माण कहते हैं और यह समूह के सदस्यों द्वारा सामूहिक निर्णय लेने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है। निर्णय समूह के सभी सदस्यों द्वारा लिए और स्वीकार किए जाते हैं। मूल रूप से समूह निर्णय निर्माण में दो प्रक्रियाएं शामिल हो सकती हैं–

समूह ध्रुवीकरण

सामान्यतः माना जाता है कि समूहों द्वारा किए गए निर्णय व्यक्तियों द्वारा लिए गए निर्णय से बेहतर होते हैं, लेकिन यह हमेशा सच नहीं होता। कभी–कभी समहों द्वारा लिए गए निर्णय व्यक्तियों द्वारा लिए गए लोगों की तुलना में अधिक चरम होते हैं। समूह की इसके सदस्यों द्वारा शुरू में लिए गए निर्णयों की तुलना में अधिक चरम निर्णयों की ओर स्थानांतरित होने की यह प्रवृति समूह ध्रुवीकरण के रूप में जानी जाती है। अधिक सटीक रूप से, समूह के सदस्यों के बीच चर्चा के दौरान समूह की प्रारंभिक वरीयता को मजबूत किया जाता है जिससे अंतिम परिणाम एक अधिक चरम निर्णय होता है।

समूह ध्रुवीकरण की घटना में दो कारक योगदान करते हैं। पहला, खुद को एक योग्य और वफादार साबित करने के लिए, समूह के सदस्य एक दृष्टिकोण रखते हैं जो समूह की समग्र छवि के अनुरूप हो और साथ ही साथ दूसरों की तुलना में

टिप्पणी

चरम पर हो। उदाहरण के लिए, एक असामाजिक समूह में अराजकता फैलाने के लिए चरम विचारों को अधिक योग्य माना जाता है। इसलिए सदस्य उन विचारों को रखने की कोशिश करेंगे जो दूसरों की तुलना में अधिक चरम है। दूसरे, अनुनयन के कारण, एक समूह की प्रारंभिक प्राथमिकता को मजबूत करने के लिए चरम निर्णय की ओर चले जाते हैं।

समूह सोच

समूह सोच, अत्यधिक सामंजस्यपूर्ण समूहों में देखी जाती है। इस समूह के सदस्यों का विचार होता है कि उनके निर्णय गलत नहीं हो सकते और सभी सदस्यों को समूह द्वारा लिए गए निर्णय का समर्थन करना चाहिए। वे किसी भी सूचना या जानकारी, जो समूह के निर्णय के विपरीत हो, उसको अस्वीकार करने के दबाव में होते हैं। एक बार जब यह प्रवृति विकसित हो जाती है, तो समूह अपने निर्णय को बदलने के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी हो जाता है। यह समूह के सदस्यों के बीच उच्च सामंजस्य है जो उनके बीच इस तरह की प्रवृति को विकसित करने के लिए जिम्मेदार है। सदस्य एक–दूसरे से इतनी अच्छी तरह से जुड़े होते हैं कि उन्हें लगता है कि समूह का कोई भी सदस्य गलत नहीं हो सकता है और भले ही समूह का कोई भी सदस्य गलत हो, यह उसकी नैतिक जिम्मेदारी है कि वह उसका समर्थन करे। दूसरे, अत्यधिक सामंजस्यपूर्ण समूह के मानक सुझाते हैं कि समूह श्रेष्ठ और अचूक है। समूह कभी–कभी अपने सदस्यों द्वारा रखे गए मुद्दे से संबंधित जानकारी साझा करने में विफल भी हो सकता है। यह समूह द्वारा लिए गए निर्णयों की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है। यह और भी अधिक समस्याग्रस्त है यदि गैर–साझा की गई जानकारी निर्णय के लिए महत्वपूर्ण हो।

3.4.5 सन्दर्भ समूह

सन्दर्भ समूह वह समूह है जिसका व्यक्ति तुलना के लिए एक प्रामाणिक समूह के रूप में प्रयोग करता है। यानी एक ऐसा समूह जिससे व्यक्ति अपने मूल्य को प्राप्त करता है।

सन्दर्भ समूह वह समूह होता है जिसके नियमों, व्यवहार–प्रतिमानों, मनोवृतियों, आदर्शों एवं मूल्यों को व्यक्ति आदर्श मानकर अपने आचरण या व्यवहार में ढालने का प्रयत्न करता है। यह वह समूह है जिसका अस्तित्व प्रायः व्यक्ति के मस्तिष्क में होता है।

वर्तमान समय में मनुष्य को कई समस्याओं एवं परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। आज व्यक्ति यह चाहता है कि वह अपने को किसी ऐसे समूह से संबंधित कर ले जिसकी समाज में प्रतिष्ठा हो। इसी प्रकार व्यक्ति के व्यवहार पर उसके सन्दर्भ समूह का भी काफी प्रभाव पड़ता है। अलग–अलग व्यक्तियों के सन्दर्भ समूह भिन्न–भिन्न होते हैं। यह भी संभव है कि कई व्यक्तियों का एक सन्दर्भ–समूह हो। इतना निश्चित है कि वह सन्दर्भ समूह जिससे व्यक्ति अपने को संबंधित मानता है अर्थात जिसका वह सदस्य नहीं है लेकिन जिसका सदस्य बनने की वह आकांक्षा या अभिलाषा रखता है, उसके सम्मुख एक व्यवहार प्रतिमान प्रस्तुत करता है।

टिप्पणी

सन्दर्भ समूह का महत्व

सन्दर्भ समूहों का मानव जीवन में अत्यंत ही महत्व है। सन्दर्भ समूह को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

- **व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को ऊंचा उठाने में सहायक** : सन्दर्भ समूह व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को ऊंचा उठाने में अधिक सहायक होता है। समाज में व्यक्ति किसी न किसी समूह का सदस्य अवश्य ही रहता है इसलिए वह अपने लिए किसी सन्दर्भ समूह को चुन लेता है और उसके मूल्यों–आदर्शों एवं आचरणों को अपने व्यक्तित्व में ढालने का प्रयत्न करता है तो इस बात की सम्भावना रहती है कि कालांतर में उसकी सामाजिक स्थिति ऊंची उठ जाए। अतः इस प्रकार सन्दर्भ समूह के माध्यम से वह अपनी सामाजिक स्थिति को ऊंचा उठा सकता है।
- **समाजीकरण के लिए** : समाजीकरण प्रक्रिया मनुष्य के जन्म के साथ आरम्भ हो जाती है। वह जन्म से ही ऐसा व्यवहार करना प्रारंभ कर देता है जैसा व्यवहार उसका समूह कर रहा होता है। व्यक्ति अपने सन्दर्भ समूह की अभिवृतियों, मूल्यों, आदर्शों, आचरणों एवं व्यवहारों तथा प्रतिमानों को अपना लेता है। वह उसी प्रकार का व्यवहार करने लगता है जिस प्रकार के व्यवहार की उसके सन्दर्भ समूह के सदस्यों से अपेक्षा की जाती है।
- **सामाजिक गतिशीलता** : समाज को गतिशीलता प्रदान करने में सन्दर्भ समूह का अत्यंत ही महत्व होता है। एक समाज विशेष में सामाजिक गतिशीलता को बढ़ाने में सन्दर्भ समूह सिद्धांत सहायक सिद्ध हुआ है। इस सिद्धांत का महत्व इस तथ्य में है कि यह हमें समाज के समूह–व्यवहार तथा उस दिशा, जिसमें किसी विशेष सामाजिक पर्यावरण में व्यक्ति का व्यवहार बदल सकता है के विषय में ज्ञान कराता है। यह वर्तमान औद्योगीकृत एवं जटिल समाज में वर्तमान खिंचावों एवं दबावों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या में सहायक हो सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. "नेतृत्व एक प्रभाव है जिसमें जो भी व्यक्ति नेता की स्थिति में होता है, वह दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करता है।" यह किसका कथन है?

   (क) डोनेल (ख) मूरे

   (ग) काटज (घ) जार्ज आर. टैरी

6. समूह की कौन सी क्रिया संप्रेषण के द्वारा सदस्यों की अभिवृत्तियों को सुलभ बनाती है?

   (क) समर्थन वापस लेकर

   (ख) विवेचना द्वारा अभिवृत्ति परिवर्तन

   (ग) समूह निर्णय प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन

   (घ) ये सभी

टिप्पणी

3.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (ग)
4. (ख)
5. (ग)
6. (घ)

3.6 सारांश

समन्वय के सामान्य रूप से अर्थ होता है एक सामान्य उद्देश्य के लिए मिलकर काम करना। सामाजिक प्रक्रियाओं में समन्वय सबसे अधिक व्यापक तथा अबाध प्रक्रिया है।

समन्वय व्यक्ति की मौलिक आवश्यकता है क्योंकि इससे उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा उद्देश्यों की पूर्ति होती है। व्यक्ति चेतन रूप से सहयोगिक क्रिया में भाग लेता है। समन्वय चेतन अवस्था है जिसमें संगठित एवं सामूहिक प्रयत्न किये जाते हैं, क्योंकि समान उद्देश्य होता है।

संसाधनों की कमी से समाज में संघर्ष उत्पन्न होता है क्योंकि इन संसाधनों को पाने और उस पर कब्जा करने के लिए प्रत्येक समूह संघर्ष करता है। संघर्ष में दूसरे लोगों की इच्छा के विरुद्ध जानबूझकर विरोध, आग्रह अथवा जबरदस्ती करने की कोशिश होती है। दो व्यक्तियों के बीच स्वभाव, दृष्टिकोण, विचारों तथा मूल्यों आदि का अंतर संघर्ष का कारण बनता है।

मैकाइवर और पेज ने समूह निर्माण की कुछ विशेषताओं को बताते हुए कहा कि सामान्य हित की सामूहिकता की भावना को जन्म देता है। इसका स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने तीन बातों को मुख्य रूप से कहा कि सर्वप्रथम मनुष्य स्वयं ही आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है, पर वह व्यावहारिक नहीं है। दूसरा, व्यक्ति समाज के अन्य सदस्यों से संघर्ष करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है, पर वह समान समाज एक लिए विघटनकारी है। तीसरा, व्यक्ति कुछ लोगों से सहयोग करके अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है।

नेतृत्व (Leadership) से आशय है किसी व्यक्ति या किसी समूह का निर्देशन करना अर्थात किसी कार्य के सम्पूर्ण करने में अपनी अहम भूमिका का निर्वहन करना और सभी का मार्ग प्रशस्त करना। इसके द्वारा व्यक्ति अपनी क्षमताओं एवं अपने बौद्धि क स्तर के आधार पर किसी को राह दिखाने का कार्य करता हैं।

बिना अनुयायियों के नेतृत्व की कल्पना करना कठिन है। वास्तव में, बिना समूह के नेतृत्व का कोई अस्तित्व ही नहीं है, क्योंकि नेता या नायक केवल अनुयायियों अथवा समूह पर ही अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता है। नेतृत्व का उद्देश्य अपने

टिप्पणी

चारों ओर अपने अनुयायियों अथवा व्यक्तियों के समूह को एकत्र करना तथा उन्हें किसी हुई निर्धारित सामूहिक उद्देश्य के प्रति निष्ठावान बनाए रखता है।

समूह परिवर्तन के तीन रूप हैं जिनमें समूह की क्रियाएं सम्प्रेषण के द्वारा सदस्यों की अभिवृत्तियों को सुलभ बनाती हैं, वे हैं– अप्रत्यक्ष रूप से अर्थात समर्थन को हटाकर या वापस लेकर, विवेचना द्वारा अभिवृत्ति परिवर्तन करके और समूह निर्माण प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन करके।

समूह निर्णय निर्माण को ही सहयोगात्मक निर्णय निर्माण कहते हैं और यह समूह के सदस्यों द्वारा सामूहिक निर्णय लेने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है। निर्णय समूह के सभी सदस्यों द्वारा लिए और स्वीकार किए जाते हैं। मूल रूप से समूह निर्णय निर्माण में दो प्रक्रियाएं शामिल हो सकती हैं।

सन्दर्भ समूह, वह समूह है जिसका व्यक्ति तुलना के लिए एक प्रामाणिक समूह के रूप में प्रयोग करता है। यानी एक ऐसा समूह जिससे व्यक्ति अपने मूल्य को प्राप्त करता है।

सन्दर्भ समूह, वह समूह होता है जिसके नियमों, व्यवहार–प्रतिमानों, मनोवृतियों, आदर्शों एवं मूल्यों को व्यक्ति आदर्श मानकर अपने आचरण या व्यवहार में ढालने का प्रयत्न करता है। यह वह समूह है जिसका अस्तित्व प्रायः व्यक्ति के मस्तिष्क में होता है।

3.7 मुख्य शब्दावली

- **समन्वय** – तालमेल, सहयोग
- **प्रयत्न** – कोशिश
- **प्रत्यक्ष** – सामने
- **ढांचा** – संरचना, प्रारूप
- **स्फूर्ति** – तेजी, चुस्ती
- **आचरण** – व्यवहार
- **श्रोता** – सुनने वाला
- **अचूक** – बेजोड़, अनोखा

3.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. समन्वय से क्या तात्पर्य है? उल्लेख कीजिए।
2. संघर्ष किसे कहते हैं? परिभाषित कीजिए।
3. नेतृत्व को परिभाषित कीजिए।

टिप्पणी

4. एक नेता में क्या–क्या गुण होने चाहिए?
5. सन्दर्भ समूह किसे कहते हैं?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. समन्वय के महत्व का वर्णन कीजिए।
2. संघर्ष के कारणों को स्पष्ट कीजिए।
3. समूह की प्रकृति का वर्णन कीजिए और समूह किस तरह परिवर्तन का प्रतिनिधि है, चर्चा कीजिए।
4. नेतृत्व के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
5. समूह निर्णय निर्माण की प्रक्रिया क्या है? स्पष्ट कीजिए।
6. सन्दर्भ समूह पर टिप्पणी कीजिए।

3.9 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2000), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
2. सुलेमान, डॉ. मुहम्मद, (2005), उच्चतर समाज मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
3. बैरन, आर, ए., एवं ब्रेन्स्कोम्ब, एन. आर. (2016). सोशल साइकोलॉजी, बोस्टनः पियर्सन/अलीन एवं बेकन
4. कसिन, एस.,फैन, एस., एवं मार्कस, एच. आर (2017). सोशल साइकोलॉजी, सेनगेज लर्निंग
5. एस. आर. जयसवाल : एजुकेशनल साइकोलॉजी (एलायड पब्लिशर्स–हिंदी वर्जन)।
6. एस. एस. माथुर : एजुकेशनल साइकोलॉजी (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–हिंदी वर्जन)।
7. शिक्षा मनोविज्ञान : पी.डी. पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
8. शिक्षा मनोविज्ञान : अरुण कुमार सिंह, (भारती भवन)।
9. एस.पी. गुप्ता,उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

इकाई 4 सामूहिक व्यवहार

टिप्पणी

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 सामूहिक व्यवहार : जनता, सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत व प्रकृति
  4.2.1 जनता
  4.2.2 सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत
  4.2.3 सामूहिक व्यवहार की प्रकृति
4.3 भीड़ व्यवहार : समाज और श्रोताओं का मनोविज्ञान
  4.3.1 समाज और भीड़ व्यवहार
  4.3.2 श्रोताओं का मनोविज्ञान
4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.5 सारांश
4.6 मुख्य शब्दावली
4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

सामान्य रूप से व्यक्तित्व का विकास गर्भधारण से शुरू हो जाता है। बालक जब किशोरावस्था में प्रवेश करता है तो वह कुछ–कुछ परिपक्व होने लगता है। यह समय उसके व्यक्तित्व के विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। सामूहिक व्यवहार की नींव परिवार से ही पड़नी शुरू हो जाती है।

सामूहिक परिस्थिति में व्यक्तियों के 'एक साथ' सम्मिलित आचरण या क्रिया को सामूहिक व्यवहार कहते हैं। विस्तृत अर्थ में जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए क्रिया करते हैं तो उसे सामूहिक क्रिया या व्यवहार कहते हैं। वास्तव में समूह के लिए दो या दो से अधिक ऐसे व्यक्तियों का होना अनिवार्य है जो समूह के प्रति सचेत हैं। इसी दृष्टि से सामूहिक व्यवहार सामूहिक परिस्थिति में उन एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार है जिनमें कि एक सामान्य समूह का सदस्य होने की चेतना पाई जाती है। इस अर्थ में हमारा अधिकांश व्यवहार सामूहिक व्यवहार ही है क्योंकि यह समाज के अन्य सदस्यों, चाहे उनके साथ हमारे प्रत्यक्ष संबंध हैं चाहे अप्रत्यक्ष, द्वारा काफी सीमा तक प्रभावित होता है।

प्रस्तुत इकाई में सामूहिक व्यवहार की प्रकृति, सिद्धांत, समाज और भीड़ व्यवहार तथा श्रोताओं का मनोविज्ञान आदि तथ्यों का अध्ययन किया गया है।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- सामूहिक व्यवहार का अर्थ, प्रकृति एवं सिद्धांतों से अवगत हो पाएंगे;

टिप्पणी

- सामूहिक व्यवहार की प्रमुख विशेषताओं को समझ पाएंगे;
- भीड़ व्यवहार के बारे में जान पाएंगे;
- समाज और भीड़ व्यवहार की समीक्षा कर पाएंगे;
- श्रोताओं के मनोविज्ञान को समझ पाएंगे।

4.2 सामूहिक व्यवहार : जनता, सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत व प्रकृति

किसी घटना या दुर्घटना के मौके पर लोगों के क्रिया–कलापों और व्यवहार को सामूहिक व्यवहार कहा जाता है। इस प्रकार का व्यवहार अधिकांशतः अनायास, अननुमेय या स्वतः होता है। यह हमारे अपेक्षाकृत स्थाई और संरचित व्यवहार से भिन्न होता है। समाजशास्त्री सामूहिक व्यवहार का अध्ययन इसलिए करते हैं क्योंकि इससे सामजिक व्यवहार के बारे में नवीन अंतर्दृष्टि प्राप्त होती है।

सामान्यतः सामूहिक व्यवहार स्थापित प्रतिमानों के टूट जाने की स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया है। जब लोगों के सामने प्रत्याशित संकट या विपत्ति पैदा हो जाती है तो उनके पास व्यवहार करने हेतु (अर्थात उस संकट या विपत्ति के प्रति प्रतिक्रिया करने हेतु) स्थापित नियम या आदर्श नहीं होते, तो ऐसी स्थिति में वे इससे निपटने हेतु स्वयं तरीका निकाल लेते हैं। ये आकस्मिक तरीके ही कई बार हमारा सामान्य व्यवहार बन जाते हैं।

ब्राउन ने इस सन्दर्भ में कहा है कि सामूहिक व्यवहार में वह अन्तःक्रिया निहित होती है, जो संस्थागत नहीं होती। अन्य शब्दों में, सामूहिक व्यवहार की स्थिति में औपचारिक रूप से परिभाषित नियमों का अभाव पाया जाता है, सदस्यता का कोई निश्चित आधार नहीं होता, प्रायः इससे संबंधित घटना अस्थायी प्रकृति की होती है तथा यह भी अप्रत्याशित रूप ले सकता है। दंगों को सामूहिक व्यवहार का उदाहरण माना जाता है। अमेरिका में दंगों के बारे में जो अध्ययन किए गए हैं, उनसे पता चलता है कि वे अनियोजित और असंगठित होते हैं तथा उनका उद्देश्य किसी विशेष लक्ष्य को प्राप्त करना नहीं होता है।

सामूहिक व्यवहार का प्रयोग समाजशास्त्रियों ने एक ऐसे समूह के व्यवहार को बताने के लिए किया है जो व्यवहार के सामान्य नियमों द्वारा निर्देशित नहीं होते। अधिकांशतः समूह के लिए एक निर्धारित नियमावली के अनुसार व्यवहार करते हैं परंतु कभी–कभी वे नियमों की अवहेलना करके अपनी इच्छानुसार भी व्यवहार करते हैं। सामूहिक व्यवहार ऐसे ही व्यवहार की ओर संकेत करता है।

सामूहिक व्यवहार की सर्वप्रथम व्याख्या ली बॉन (Le Bon) के 'क्राउड माइंड' सिद्धांत में मिलती है।

ब्लूमर ने आम सामाजिक जीवन में प्रतीकात्मक अंतःक्रिया और सामूहिक व्यवहार में चक्रीय प्रतिक्रिया के बीच अंतर किया है। उनका कहना था कि भीड़ व्यक्तियों की तार्किक क्षमता पर नियंत्रण करके उनके व्यवहार पर नियंत्रण करती है और व्यक्ति

अपनी सोच को भेद के अनुसार मोड़ लेता है और वैसा ही व्यवहार करने लगता है। यही सामूहिक व्यवहार है।

टिप्पणी

इआन रॉबट्र्सन के अनुसार, सामूहिक व्यवहार ऐसे व्यवहार की ओर संकेत करता है जो सापेक्षिक रूप से स्वाभाविक और असंरचित सोच, भावना और व्यवहार को प्रदर्शित करता है और यह व्यक्तियों के विशाल समूह का एक भाग होता है।

जब मनुष्य सामूहिक जीवन से संबंधित व्यवहारों को अन्य लोगों के साथ मिलकर करता है तथा जिन व्यक्तियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से केवल समूह की इच्छाओं को पूरा करने के लिए जुड़ता है, उनकी सहभागिता अपेक्षाकृत असंगठित, अनिश्चित, अनियोजित और नियोजनविहीन होती है। इस समूह के द्वारा किए गए व्यवहार सामूहिक व्यवहार कहलाते हैं, जो अस्थाई होते हैं। ऐसे सामूहिक व्यवहारों को हम भीड़, जनविद्रोह, धार्मिक व्यवहार, सुधार आन्दोलन, क्रांतिकारी आन्दोलन, सामाजिक असंतोष आदि कहते हैं जो सामूहिक व्यवहार के विभिन्न रूप हैं। सामूहिक व्यवहार सामाजिक आंदोलन की एक विशेषता है तथा यह समूह व्यवहार से भिन्न होता है। आजकल समाजशास्त्र में सामूहिक व्यवहार का अर्थ एक विशाल जनसमूह की ऐसी क्रियाओं से लिया जाता है जो किसी समाज के सामान्य ढांचे को बदलने के लिए की जाती है तथा जिसमें जनसमूह का हित पाया जाता है। इस प्रकार सामूहिक व्यवहार सामूहिक परिस्थिति में उन एक से अधिक व्यक्तियों का व्यवहार है जिनमें कि एक सामान्य समूह का सदस्य होने की चेतना पाई जाती है चाहे उनका पारस्परिक संबंध प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष।

एन.टी. स्मेलसर के अनुसार, सामूहिक व्यवहार को सापेक्षिक रूप से मानव समूह की असंगठित सामाजिक अंतःक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

स्मेलसर ने सामूहिक व्यवहार के न्यूनतम सिद्धांत को अपने लेख 'थ्योरी ऑफ कलेक्टिव बिहेवियर' में प्रस्तुत किया है। उन्होंने कहा कि समाज में तीव्र परिवर्तन और राजनीतिक उथल–पुथल की अवधि में सामाजिक आन्दोलनों को प्रेरित करने में सामान्यीकृत विश्वासों और मूल्यों की अहम् भूमिका होती है। स्मेलसर ने सामूहिक व्यवहार के कुछ निर्धारित तत्वों की ओर संकेत किया है, जो निम्नलिखित हैं–

1. संरचनात्मक प्रेरक स्थिति अर्थात ऐसी अनुमति बोधक दशाएं (जिनके अंतर्गत सामूहिक व्यवहार को वैध माना जाता है)।
2. संरचनात्मक तनाव (जैसे आर्थिक वंचन)।
3. सामान्यीकृत विश्वास का विकास एवं प्रसार (जैसे जनउन्माद)।
4. कार्यवाही के लिए सहभागियों को तैयार करना (किसी सामाजिक आन्दोलन में प्रभावशाली नेतृत्व के माध्यम से)।
5. सामाजिक नियंत्रण का क्रियान्वन।

स्मेलसर ने अंतिम निर्धारक तत्व यानी सामाजिक नियंत्रण को महत्त्व दिया है। एक बार सामूहिक व्यवहार की कोई घटना घट जाती है तब इसकी अवधि एवं तीव्रता का निर्धारण सामाजिक नियंत्रण के अभिकरणों की प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है।

टिप्पणी

सामूहिक व्यवहार के प्रकार

सामूहिक व्यवहार सामूहिक परिस्थिति में उन एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार है जिनमें कि एक सामान्य समूह का सदस्य होने की चेतना पाई जाती है। सामूहिक व्यवहार को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इनमें से कुछ प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. **संगठित और असंगठित सामूहिक व्यवहार** : संगठन के आधार पर सामूहिक व्यवहार संगठित और असंगठित सामूहिक व्यवहार में विभाजित किया जा सकता है। असंगठित सामूहिक व्यवहार सामान्यतः अपने सदस्यों को अधिक समय तक एक सूत्र में बांधकर रखने तथा अपने समूह की संरचना बनाए रखने में असमर्थ होता है। संगठित सामूहिक व्यवहार कुछ निश्चित सामाजिक नियमों द्वारा संचालित एवं नियंत्रित होता है। इसलिए इसमें अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व पाया जाता है। मैक्डूगल के अनुसार, संगठित सामूहिक व्यवहार की चार विशेषताएं होती हैं–प्रथम, निरंतरता (मुख्यतः भौतिक अथवा स्वरूपात्मक) की कुछ मात्रा का उसमें होना। द्वितीय, समूह के सदस्यों के मस्तिष्क में समूह के स्वरूप, कार्य, उद्देश्य तथा क्षमताओं के संबंध में निश्चित और स्पष्ट विचार होना, तृतीय, कुछ निश्चित नियमों, आदर्शों मूल्यों आदि समूह का व्यवहार नियंत्रित होना तथा चतुर्थ, सदस्यों के कार्यों में श्रम–विभाजन एवं विशेषीकरण का होना।
2. **प्राकृतिक और कृत्रिम सामूहिक व्यवहार** : प्रकृति के आधार पर सामूहिक व्यवहार को प्राकृतिक एवं कृत्रिम व्यवहार में बांटा जा सकता है। प्राकृतिक व्यवहार से तात्पर्य उन समूहों के व्यवहार से है जिनकी सदस्यता जन्मजात ही मिल जाती है (जैसे परिवार, जाति, वंश आदि)। इसके विपरीत, कृत्रिम सामूहिक व्यवहार से तात्पर्य उन समूहों के व्यवहार से है जिनके सदस्यों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए औपचारिक एवं निश्चित नियमों के अंतर्गत कार्य करना पड़ता है (जैसे चर्च, मंदिर या दफ्तर में व्यक्तियों का व्यवहार)।
3. **आकस्मिक और इच्छाजन्य सामूहिक व्यवहार** : उत्पत्ति के आधार पर सामूहिक व्यवहार को आकस्मिक परिस्थितिजन्य तथा इच्छाजन्य व्यवहार में विभाजित किया जा सकता है। जब कोई समूह या उसमें होने वाला व्यवहार किसी आकस्मिक घटना के घटित हो जाने के कारण जन्म लेता है तो उसके सदस्यों के व्यवहार को आकस्मिक सामूहिक व्यवहार कहते हैं (यथा भीड़–व्यवहार)। इसके विपरीत, इच्छाजन्य सामूहिक व्यवहार उस व्यवहार को कहते हैं जिसमें व्यक्ति अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपनी इच्छा से समूह के जीवन में भाग लेता है और व्यवहार करता है। उदाहरणार्थ, अपनी इच्छानुसार पूर्ति हेतु सामूहिक प्रार्थना में भाग लेना।
4. **नेताओं द्वारा संचालित तथा नेताविहीन सामूहिक व्यवहार** : सामाजिक जीवन में ऐसे अनेक सामूहिक व्यवहार होते हैं जो नेताविहीन सामूहिक व्यवहार होते हैं अर्थात इसमें नेता की कोई भी स्थिति नहीं होती है। परन्तु अनेक सामूहिक व्यवहार द्वारा संचालित, निर्देशित एवं नियंत्रित होते हैं। उदाहरणार्थ,

टिप्पणी

जब युद्ध क्षेत्र में सैनिक्गन अपने कमांडर के आदेशानुसार शत्रु–पक्ष पर हमला करते हैं या किसी राजनीतिक दल के कार्यकर्ता अपने नेता के आदेशानुसार किसी विशिष्ट प्रकार का व्यवहार करते हैं तो उसे नेता द्वारा संचालित सामूहिक व्यवहार कहते हैं।

फ्रायड के अनुसार, सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना अनिवार्य है कि व्यवहार नेता द्वारा संचालित है अथवा यह नेताविहीन है। उनका कथन है कि सामूहिकता में नेता आकर्षण का केंद्र बन जाता है। साथ ही, नेता द्वारा संचालित सामूहिक व्यवहार में व्यवस्था और निश्चितता अधिक पाई जाती है।

सामूहिक व्यवहार की विशेषताएं

सामूहिक व्यवहार की प्रकृति क्षणिक होती है और यह पूर्णतः अनियोजित होती है। इस प्रकार के व्यवहार किसी भी प्रकार के नियमों या प्रक्रियाओं से नियमित नहीं होते क्योंकि ये व्यवहार किन्हीं नियमों से बंधे नहीं होते। इसलिए इनकी भविष्यवाणी भी नहीं की जा सकती।

जब व्यक्ति किसी दुर्घटना, आग, झगड़ा या दंगे के समय एक स्थान पर एकत्रित होते हैं जो कि पहले से नियोजित नहीं होते, न ही वे एक–दूसरे को जानते हैं तब वह आक्रोश में आकर गैर–जिम्मेदाराना व्यवहार कर देते हैं। ऐसी घटना जिसमें व्यक्ति इकट्ठे होते हैं, वह प्रायः कोई असामान्य घटना होती है, जैसे दंगा, दुर्घटना, आग लगना आदि।

अफवाहें या गलत सूचनाएं इस प्रकार के सामूहिक व्यवहार को अधिक उग्र बना देती हैं जबकि कोई भी असल कारण नहीं जानता जिसने इस घटना को जन्म दिया है।

ऐसा व्यवहार केवल अफवाहों से ही नहीं बल्कि विश्वास, उम्मीद, भय, दुश्मनी, ईर्ष्या से भी निर्देशित होता है।

सामूहिक व्यवहार का गहरा संबंध समुदाय के सांस्कृतिक प्रतिमानों से होता है। जैसे मुस्लिम, धार्मिक मामलों में या हिन्दू जाति के मामले में तेज प्रतिक्रिया देते हैं।

सामूहिक व्यवहार की प्रकृति को निम्न विशेषताओं के द्वारा समझा जा सकता है–

1. **एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार** : सामूहिक व्यवहार सदैव ही एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार होता है अर्थात इसमें व्यवहार करने वाले व्यक्तियों की संख्या एक से अधिक होती है। यह समूह छोटे अथवा बड़े आकार का हो सकता है। उदाहरणार्थ, परिवार गोष्ठी, क्लब आदि छोटे समूह हैं, जबकि भीड़ आदि बड़े आकार के समूह हैं। पार्क तथा बगेंस के मतानुसार, एक छोटे समूह और भीड़ में केवल आकार और संख्या का ही अंतर नहीं है। उदाहरणार्थ, परिवार के सदस्यों का सामूहिक व्यवहार भीड़ के सामाजिक व्यवहार से इस कारण भिन्न नहीं है कि दोनों के आकार में भेद है बल्कि इस कारण भी भिन्न है कि उनमें मानसिकता अर्थात मानसिक धरातल पर भी स्पष्ट अंतर पाया जाता है। परन्तु आल्पोर्ट, यंग, मिलर आदि विद्वानों का मत है कि समूह की संख्या का सामूहिक व्यवहार पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

टिप्पणी

2. **संकलन या एकत्रीकरण** : सामान्यतः जब सामूहिक व्यवहार हेतु एकाधिक व्यक्ति एक स्थान पर एकत्रित होते हैं तो उसे हम संकलन या एकत्रीकरण कहते हैं। यह एकत्रीकरण आकस्मिक और औपचारिक दोनों रूपों में हो सकता है। फ्रीमेन, बार्कर, ब्लूमर आदि विद्वानों के अनुसार, आकस्मिक या औपचारिक एकत्रीकरण का भी प्रभाव सामूहिक व्यवहार पर पड़ता है। भीड़ और श्रोतागण के व्यवहार में पर्याप्त अंतर इसी कारणवश पाया जाता है। साथ ही, एकत्रीकरण की दृष्टि से सामूहिक व्यवहार को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, प्रथम, वह सामूहिक व्यवहार जिसमें समूह के सदस्य शारीरिक रूप से कभी भी एक स्थान पर एकत्रित नहीं होते हैं (जैसे जनसमूह, जनता, जाति आदि), द्वितीय, वह सामूहिक व्यवहार जिसमें समूह के सदस्य अनियमित और अस्थायी तौर पर एक स्थान पर शारीरिक रूप से इकट्ठा हो जाते हैं (जैसे भीड़ आदि) तथा तृतीय, वह सामूहिक व्यवहार जिसमें सदस्य समय–समय पर औपचारिक ढंग से एक स्थान पर एकत्रित होते हैं (जैसे चर्च आदि)। इन तीनों प्रकार के सामूहिक व्यवहारों में कुछ आधारभूत अंतर देखने को मिलता है।

3. **ध्रुवण या आकर्षण–शक्ति** : आकर्षण शक्ति सामूहिक व्यवहार की एक और उल्लेखनीय मनोवैज्ञानिक विशेषता है। इस विशेषता के आधार पर भी सामूहिक व्यवहार करने वाला समूह अपने सदस्यों का ध्यान किसी एक उत्तेजनात्मक वस्तु अथवा घटना के चरों पर केन्द्रित करता है। वूलबर्ट ने इसी आकर्षण–शक्ति का प्रयोग सभी श्रोताओं के बीच नेता के प्रति आदान–प्रदान की विशेषता के लिए किया है। इसी प्रकार, आलपोर्ट के अनुसार, भीड़ के सदस्य किसी एक सामान्य उत्तेजना की ओर ध्यान देते हैं और तदनुसार ही क्रिया करते हैं।

4. **एकात्मीकरण या तादात्म्य** : एकात्मीकरण या तादात्म्य सामूहिक व्यवहार की एक और उल्लेखनीय विशेषता है। इसका तात्पर्य दूसरे व्यक्तियों की क्रियाओं, विचारों, भावनाओं आदि के साथ तादात्म्य कर उन्हें ग्रहण करना और स्थायी अथवा अस्थायी रूप से उसका एकात्मीकरण कर लेना अर्थात अपना बना लेना है। इस सन्दर्भ में बेंटले ने ठीक ही लिखा है कि केवल कुछ व्यक्तियों के एक स्थान पर एकत्रित हो जाने से ही सामूहिक व्यवहार घटित नहीं होता है, अपितु इसके लिए यह आवश्यक है कि उन लोगों में समूह के प्रति अपनत्व करने में सफल हों। एकात्मीकरण या तादात्म्य के आधार पर सभी समूहों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है–प्रथम, वे समूह जिनके सदस्यों में पारस्परिक तादात्म्य कम होता है (जैसे श्रोतागण)। द्वितीय, ऐसे समूह जिनके सदस्यों में तादात्म्य होता तो है, पर उसकी प्रकृति अस्थायी होती है (यथा भीड़) तथा तृतीय, वह सामूहिक व्यवहार जिसमें समूह के बीच तादात्म्य स्थायी रूप में देखने को मिलता है (यथा परिवार इत्यादि)।

5. **विसरित एवं अस्पष्ट लक्ष्य** : सामान्यतः सामूहिक व्यवहार में लक्ष्य विसरित एवं अस्पष्ट होते हैं। ये लक्ष्य आत्मसम्मान प्राप्त करने तथा वंचना के प्रति नाराजगी से लेकर समाज को पुनः संगठित करने तक हो सकते हैं। सामूहिक व्यवहार में सहभागी लोग सहज रूप में आदर्शों का निर्माण कर लेते हैं और जो लोग इन्हें तोड़ते हैं उन्हें दण्डित करते हैं। लक्ष्य अस्पष्ट भी होते हैं। कई

बार कुछ व्यक्ति आग में फंसे अन्य व्यक्तियों को बचाने के लिए अपनी जान जोखिम में डाल देते हैं। इसी प्रकार, किसी ऊंची इमारत में आग लग जाने पर मची भगदड़ के समय अनेक व्यक्ति अपने बचाव के लिए ऊपर से कूद जाते हैं।

टिप्पणी

6. **अस्थायी प्रकृति** : सामूहिक व्यवहार सदैव अस्थायी प्रकृति का होता है। परन्तु इसके कुछ स्वरूप जैसे धुन अथवा सनक कुछ महीनों या वर्षों तक चल सकते हैं क्योंकि सामूहिक व्यवहार में अधिकांश लक्ष्य अनियोजित एवं सहज रूप में विकसित होते हैं, इसलिए सामूहिक व्यवहार कभी भी अप्रत्याशित रूप ले सकता है।

सामूहिक व्यवहार और सामाजिक आन्दोलन

सामाजिक आन्दोलन भी एक प्रकार का सामाजिक व्यवहार है जो सामूहिक क्रिया से मिलता–जुलता है। अर्थात यह भी एक प्रकार का सामूहिक व्यवहार ही है। इआन रॉबर्ट्स के अनुसार, एक सामाजिक आन्दोलन में व्यक्तियों का एक विशाल समूह सामाजिक या सांस्कृतिक परिवर्तन लाने के लिए एक साथ मिलकर प्रयास करता है। जैसे नारी मुक्ति आन्दोलन, अयोध्या आन्दोलन, नक्सलवादी आन्दोलन, पर्यावरण बचाओ आन्दोलन, जनजातीय आन्दोलन आदि।

कुछ समाजशास्त्रियों का मानना है कि सामाजिक आन्दोलन सामूहिक व्यवहार का ही एक प्रकार है परन्तु कुछ अन्य का मानना है कि यह अलग लेकिन संबंधित प्रघटना है। कभी–कभी इन दोनों में अंतर करना मुश्किल हो जाता है। 1960 के दशक की हिप्पी संस्कृति सामूहिक व्यवहार की परिभाषा के अनुरूप है। यह आन्दोलन असंरचित और असंगठित था जबकि मानव अधिकार आन्दोलन संगठित आन्दोलन है। पर्यावरण संरक्षण जैसे कुछ आन्दोलन इन दोनों के बीच के होते हैं।

समाजशास्त्री सामूहिक व्यवहार और सामाजिक आन्दोलन दोनों के अध्ययन में रूचि लेता है। वह न केवल इसलिए कि यह एक आकर्षक अध्ययन है बल्कि इसलिए कि यह एक सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण तथ्य है। रॉबर्ट्सन के अनुसार, सामाजिक आन्दोलन न सिर्फ नए मूल्यों, मान्यताओं का स्रोत होते हैं बल्कि यह मानव इतिहास के परिवर्तन का कारण भी बनते हैं। परन्तु अभी हमें इसकी असल प्रकृति और अर्थ को सामाजिक जीवन में समझने में काफी समय लगेगा। सामूहिक व्यवहार और सामूहिक आन्दोलन का यह अध्ययन अभी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है।

4.2.1 जनता

जन शब्द अग्रेंजी के Mass शब्द का हिन्दी पर्याय है। Mass का अर्थ होता है। बहुत अधिक मात्रा, जिसका कोई आकार या ढेर नहीं होता। जन सामान्यतः लोक, लोग, प्रजा, जनता और जनसमुदाय के अर्थ में प्रयुक्त होता है। लोग शब्द का अर्थ होता है किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाले समस्त मनुष्यों का समूह। किसी राष्ट्र के निर्माण, निर्धारण एवं संचालन में जागरूक सदस्यों का समूह, जो उस राष्ट्र में रहता हो, उसे प्रजा कहते हैं। मनुष्यलोक में रहने वाले कुछ निश्चित किए गए नियमों का पालन करने वाले समस्त लोगों के समूह को जनता कहा जाता है। जन शब्द का अभिप्राय

जनता है अर्थात जनता के बारे में, जनता की बातों को, जनता तक पहुंचाना है। विशेषण रूप में जन का अर्थ अत्यधिक मात्रा में लोगों को प्रभावित करना, सम्मलित करना एवं भागीदारी बनाना होता है।

टिप्पणी

जनता को उन व्यक्तियों का एक असंगठित और आकारहीन समुदाय कहा जाता है, जो समान विचारों और इच्छाओं के द्वारा एक साथ बंधे रहते हैं। वे संख्या में काफी अधिक होते हैं कि एक–दूसरे से व्यक्तिगत संबंध कायम नहीं कर सकते। जनता व्यक्तिगत शारीरिक संपर्क पर आधारित नहीं होती, बल्कि वह विचारों के आदान–प्रदान पर आधारित होती है। इसलिए जनता में अशांत भीड़ का शोर–गुल नहीं होता है और इसका नतीजा यह होता है कि व्यक्तिगत संपर्क ज्यादा आसानी से कायम रहता है। जनता में सामाजिक अनुभूतियों का जोर शारीरिक उपस्थिति के कारण पैदा होता है।

जनता स्वयं असंगठित होती है लेकिन वह संगठनों को पैदा करती है और ये संगठन अशांत भीड़ की मनोवृति के खिलाफ तरह–तरह के साधनों का विकास करते हैं, जैसे वाद–विवाद के नियम।

जनता के व्यक्ति इतने निर्देशनीय नहीं होते जितने भीड़ के लोग होते हैं। बावजूद इसके जनता के निर्देश की ताकत भीड़ के निर्देश की अपेक्षा बहुत ही ज्यादा बढ़कर होती है। आधुनिक दौर में जनता बड़ी और जटिल होती है और भीड़ की तुलना में उसका दायरा अधिक होता है। ऐसे व्यक्ति बहुत कम होते हैं जो दूसरों के मत से प्रभावित हुए बिना रह पाते हैं और सर्वत्र स्वीकार किए जाते हैं।

आधुनिक दौर में बातों को बिगाड़ने वाले काफी लोग होते हैं और वे धीरे–धीरे इकट्ठे होकर एक शक्तिशाली प्रभाव बन जाने का फायदा भी उठाते हैं। वे जानबूझकर और इरादे से सामूहिक और बार–बार दिए जाने वाले निर्देश की शक्ति का प्रयोग करते हैं।

सभी दौर में जनता पर एक भारी पैमाने पर सामूहिक निर्देश का प्रयोग किया जाता है। जनता की मनोवृति साधारण समय में ज्यादा विवेकपूर्ण और कम जोशीली होती है। आधुनिक समय में जनता बहुत जटिल होती है और जनमत के स्वभाव को सही तरीके से जानने के लिए जनता के पारस्परिक संबंधों को और उसकी संस्थाओं को समझने की धारणाएं संप्रदाय की एकता को अतिरंजित करती हैं। जनता का समूह स्थिर नहीं रहता बल्कि यह लगातार परिवर्तन से गुजरता है।

4.2.2 सामूहिक व्यवहार का सिद्धांत

सामूहिक व्यवहार के सिद्धांत को हम भीड़ के सिद्धांत के रूप में देखते हैं। इसके सिद्धांत निम्न हैं–

1. समूहन का सिद्धांत (Theory of Grouping)

इस सिद्धांत का प्रतिपादन गुस्ताव लिबॉन (Gustava Le bon, 1986) ने किया है। भीड़ की प्रकृति को देखने से स्पष्ट होता है कि भीड़ में व्यक्ति का व्यवहार सामान्य जीवन में किए गए व्यवहार से सर्वथा भिन्न होता है। जिस व्यवहार को व्यक्ति सामान्य जीवन में करने को सोचने से भी डरता है, वही व्यवहार भीड़ में वह बिना किसी हिचक

टिप्पणी

के कर सकता है। मानव के सामान्य जीवन के व्यवहार और भीड़ व्यवहार में क्यों अंतर होता है? भीड़ व्यवहार में कौन–सी वह शक्ति होती है जिसके अनुसार व्यक्ति कुछ भी कर सकता है। इसी मानव व्यवहार को समझाने के लिए विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने मत प्रस्तुत किए हैं।

फ्रांसीसी समाजशास्त्री एवं मनोवैज्ञानिक गुस्ताव लिबॉन ने सन 1892 में अपनी पुस्तक 'द क्राउड' में भीड़ व्यवहार की विस्तृत विवेचना की है। उन्होंने इसके लिए समूहन (group) के सिद्धांत को प्रस्तुत किया।

गुस्ताव लिबॉन ने बताया कि भीड़ के सदस्यों में सुझाव ग्रहण करने की अपूर्व क्षमता होती है। यानी, अपनी बुद्धि का बिना उपयोग किए हुए वह दूसरों के विचार को ग्रहण कर लेता है। भीड़ में वह अपने चरित्र, आदर्श, मूल्य एवं मान्यता के विपरीत कार्य कर डालता है। इस संबंध में गुस्ताव लिबॉन ने व्यक्ति को बालू कण की उपमा देते हुए बताया कि यह बालू का कण हवा की मर्जी पर निर्भर हो जाता है। वास्तव में ज्यों–ज्यों भीड़ में उद्वेग बढ़ता जाता है और व्यक्ति अचेतावस्था में आता जाता है परिणामतः सुझाव ग्रहण करने की क्षमता भी उतनी ही अधिक बढ़ती जाती है। इसके अलावा, निकटतम शारीरिक संपर्क एवं वातावरण की उत्तेजना से भी सुझाव ग्रहणशीलता में वृद्धि होती है। इसलिए जब व्यक्ति भीड़ का सदस्य बनता है तो उसका व्यवहार भी बदल जाता है।

गुस्ताव लिबॉन के अनुसार, भीड़ की उपस्थिति में व्यक्ति के अन्दर एक अवचेतन प्रकृति जागृत होती है जो व्यक्तिगत भिन्नताओं को एक प्रकार की समानता में परिणत कर देती है। इसी समानता के कारण भीड़ अपने को सर्वशक्तिमान समझती है। इसी कारण समय आने पर सशस्त्र पुलिस बल पर भी हमला करने पर उतारू हो जाती है। साथ ही, सदस्य अपने उत्तरदायित्व को भी भूल जाते हैं, क्योंकि भीड़ का उत्तरदायित्व बंट जाता है। इसलिए अपनी अचेतन प्रवृति को कार्य रूप देने का भरपूर अवसर मिलता है।

इस प्रकार गुस्ताव लिबॉन ने भीड़–व्यवहार को बड़े ही स्पष्ट एवं व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया। तथापि कुछ आधुनिक सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने अपनी असहमति व्यक्त की।

गुस्ताव लिबॉन, भीड़ के सदस्यों के बीच उत्पन्न मानसिक एकता की उत्पत्ति को वैज्ञानिक ढंग से समझने में असफल रहे हैं। इनके अनुसार भीड़ में व्यक्ति सम्मोहित होकर अवचेतन रूप में कार्य करते हैं। लेकिन यह सम्मोहन क्यों और कैसे होता है, इसकी व्याख्या में वे सर्वथा असफल रहे हैं।

समूहन के सिद्धांत की आलोचना करते हुए आलपोर्ट ने कहा कि भीड़ को व्यक्तिगत व्यवहारों से अलग नहीं किया जा सकता है। क्योंकि भीड़ की उत्पत्ति व्यक्तियों से होती है। इन्होंने भीड़–व्यवहार के लिए सामाजिक प्रोत्साहन और उत्तेजना को प्रधान कारण माना है।

गुस्ताव लिबॉन ने भीड़ व्यवहार को समझने के लिए 'समूहन' को क्रिया तंत्र माना है जबकि फ्राइड ने भीड़ व्यवहार के लिए अचेतन इच्छाओं का प्रकाशन माना है।

टिप्पणी

मैकाइवर ने इस सिद्धांत को एक साहित्यिक उक्ति माना है। उनके अनुसार, इस सिद्धांत से भीड़ में पाए जाने वाले उद्दीपन को ही स्पष्ट किया जा सकता है, न कि व्यक्तियों के व्यवहारों को।

इन विरोधाभासों के बावजूद समूहन के सिद्धांत के महत्व से इनकार नहीं किया जा सकता है। वास्तव में लिबॉन ने न केवल भीड़–व्यवहार को समझने में सफलता प्राप्त की है बल्कि इसका सामाजिक मनोविज्ञान में एक महत्वपूर्ण स्थान है।

2. दमित इच्छाओं का सिद्धांत (Theory of repressed desire)

इस सिद्धांत का प्रतिपादन फ्रायड तथा उनके सहयोगियों ने मिलकर किया। वास्तव में इस सिद्धांत के प्रतिपादन में लिबॉन का सिद्धांत प्रमुख प्रेरणास्रोतों में से एक रहा है।

फ्रायड के अनुसार, मन के तीन प्रमुख स्तर होते हैं– चेतन, अर्धचेतन तथा अचेतन। चेतन का सम्बन्ध हमारी वर्तमान इच्छाओं से होता है। अर्धचेतन में वैसी इच्छाएं होती हैं जिन्हें हम थोड़ी कोशिश करने के बाद चेतन में ला पाते हैं। अचेतन में पड़ी इच्छाओं से हम सामान्यतः अवगत नहीं हो पाते हैं। विशेष मनोवैज्ञानिक प्रविधियों जैसे स्वप्न, सम्मोहन आदि के सहारे इन इच्छाओं को जाना जा सकता है। फ्रायड का विचार था कि जिन इच्छाओं की संतुष्टि चेतन स्तर पर सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों से नहीं हो पाती है, उनका अचेतन में दमन हो जाता है। अचेतन में दमित होने वाली इच्छाएं अनैतिक, विवेकहीन तथा असामयिक होती हैं। ऐसी इच्छाएं अचेतन में पहुंचकर दम नहीं तोड़ देती हैं बल्कि व्यक्ति के व्यवहार को परोक्ष रूप से नियंत्रित करती हैं और हमेशा सामान्य परिस्थिति में अभिव्यक्ति चाहती है। परन्तु सामाजिक नियंत्रणों के कारण उनकी अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है। व्यक्ति जब भीड़ में होता है तो उस पर सामाजिक नियंत्रण थोड़ा ढीला पड़ जाता है। फलस्वरूप, उसका वैयक्तिक उत्तरदायित्व समाप्त हो जाता है और दमित इच्छाओं को उभरने का अवसर मिल जाता है। अतः इस परिस्थिति में व्यक्ति, अपनी इच्छाओं की संतुष्टि करने में लग जाता है। यही कारण है कि भीड़ व्यवहार व्यक्ति व्यवहार से सर्वथा भिन्न होता है।

3. सामाजिक प्रोत्साहन का सिद्धांत (Theory of Social facilitation)

इस सिद्धांत का प्रतिपादन आलपोर्ट ने सन 1957 में किया। इस सिद्धांत के अनुसार भीड़ व्यवहार तथा वैयक्तिक व्यवहार में कोई मौलिक अंतर नहीं होता है। व्यक्ति भीड़ में भी वैसा ही व्यवहार करता है जैसा कि वह अकेले में करता है। अंतर सिर्फ इतना ही है कि भीड़ में व्यक्ति के व्यवहार की उत्तेजनशीलता थोड़ी अधिक होती है। भीड़ में तथा अकेले में होने वाले व्यवहारों में सिर्फ मात्रा का अंतर होता है गुण का नहीं। आलपोर्ट के अनुसार भीड़ में व्यक्ति अपनी वैयक्तिकता खोता नहीं है, बल्कि उसे बनाए रखते हुए भीड़ की सामाजिक परिस्थिति के अनुसार एक–दूसरे के व्यवहारों का अनुकरण करता है। भीड़ में सदस्यों के व्यवहारों में समानता के कारण सामाजिक प्रोत्साहन या सुगमता होती है।

टिप्पणी

4. मैकडूगल का मानसिक समरूपता सिद्धांत (Mc Dougall Mental Homogeneity theory)

मैकडूगल का मानसिक समरूपता सिद्धांत गुस्ताव लिबॉन के समूहन सिद्धांत से काफी मिलता–जुलता है क्योंकि उन्होंने भी समूहन के संप्रत्यय को भीड़ व्यवहार की व्याख्या में परिमार्जित रूप से स्वीकार किया है। भीड़ में व्यक्ति का व्यवहार इसी समूह चेतना के कारण अकेले में किए गए व्यवहार से भिन्न होता है।

5. संसर्ग सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन लिबॉन ने किया है। इस सिद्धांत में भीड़ के व्यवहार की व्याख्या करने के लिए उद्दीपक–अनुक्रिया तथा सांवेगिक संसर्ग जैसे संप्रत्ययों का प्रयोग किया गया है। इस सिद्धांत के अनुसार, भीड़ में जैसे–जैसे अनुक्रियाएं बढ़ती जाती हैं, वैसे–वैसे भीड़ में उत्पन्न संवेग एक सदस्य से दूसरे सदस्य तक छुआछूत के रोग के समान तीव्रता से फैलने लगता है। प्रत्येक सदस्य समूह या भीड़ के इस सांवेगिक प्रभाव से इतना अधिक प्रभावित हो जाता है कि उसका व्यवहार भीड़ में पूर्णतः परिवर्तित हो जाता है और अकेले में किए गए व्यवहार से भिन्न होता है।

6. अभिसरण सिद्धांत

इस सिद्धांत द्वारा भीड़ व्यवहार की व्याख्या इन सिद्धांतों से अलग हटकर की गई है। इसके अनुसार भीड़ विशेषकर क्रियाशील भीड़ के सदस्य पहले से ही उत्तेजनाशील कार्य के लिए तत्पर रहते हैं। भीड़ उन्हें अपने इस कार्य को पूरा करने का मात्र एक अवसर प्रदान करती है। ऐसे व्यक्ति जब अपने आप को भीड़ के सदस्य के रूप में प्रत्यक्षण करते हैं तो उनमें पहले से मौजूद भावनाएं और भी तीव्र हो जाती हैं और वह एक शक्तिशाली एवं संयुक्त कार्य करने के लिए अग्रसर हो जाता है। इस तरह से इस सिद्धांत के अनुसार भीड़ की व्याख्या भीड़ के सभी सदस्यों जिनकी पूर्ववृति या विश्वास एक समान होते हैं, की समकालिक उपस्थिति के रूप में की जाती है।

7. निर्गत मानक सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन टर्नर तथा किलियन ने किया। इसके द्वारा मुख्य बल इस बात पर डाला जाता है कि जिस तरह से मनुष्य से अधिक्तात व्यवहार एक सामाजिक मानक द्वारा निर्देशित एवं नियंत्रित होता है, उसी तरह से भीड़ व्यवहार भी एक सामाजिक मानक द्वारा ही नियंत्रित होता है। अंतर केवल इतना ही है कि इस तरह का सामाजिक मानक का जन्म तुरंत भीड़ में ही हो जाता है जबकि पहले के सामाजिक मानक का जन्म भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में की गई अंतःक्रियाओं के कारण होता है।

8. स्मेलसर का मूल्य–योगित सिद्धांत

इस सिद्धांत का प्रतिपादन नील स्मेलसर द्वारा सन 1963 में किया गया। उनके अनुसार, भीड़ चाहे सक्रिय हो या निष्क्रिय, इसमें खास प्रक्रिया सम्मिलित होती है, जिसमें छह चरण होते हैं। प्रत्येक चरण द्वारा भीड़ का अंतिम रूप प्रदान करने में अपना एक

विशेष योगदान किया जाता है। भीड़ व्यवहार की उत्पत्ति प्रत्येक चरण द्वारा किए गए योगदान या उनके द्वारा दिए गए मूल्यों को एक साथ जोड़ने पर होती है।

टिप्पणी

4.2.3 सामूहिक व्यवहार की प्रकृति

सजातीय की अनुभूति सामूहिक व्यवहार को जन्म देती है। इससे समान मनस्कता उत्पन्न होती है। समान मनस्कता का अर्थ होता है सब लोग मिल–जुलकर एक मन से रहें। इससे लोग एक–दूसरे के समान अनुभव करते हैं और सहज भाव से समान प्रतिक्रिया करते हैं। समान भाषा समान मनस्कता को बढ़ाती है क्योंकि उससे विचारों का आदान–प्रदान करने में सहायता मिलती है। इसी प्रकार संचार के साधन, भ्रमण और आवागमन से भी समान मनस्कता बढ़ती है। यह एक–दूसरे के अनुकरण से भी पुष्ट होती है किन्तु मनुष्यों में एकता के साथ–साथ भिन्नता भी होती है। जहां समान मनस्कता से मानव व्यवहार परिचालित होता है वहां भिन्न मनस्कता का भी प्रभाव पड़ता है। यदि मानुष में प्रेम और सहानुभूति है तो द्वेष और घृणा भी है। यह व्यक्तिगत प्रेम और घृणा सामूहिक व्यवहार में भी प्रकट होते हैं। अपने समान व्यवहार करने वाले लोगों को हम अपने समूह का और अपने से भिन्न व्यवहार करने वाले लोगों को भिन्न समूह का मानने लगते हैं। समान समाज में ये दोनों ही प्रक्रियाएं चलती हैं।

गिडिंस के मुताबिक, सामूहिक व्यवहार का परिणाम सहिष्णुता के संतुलन में होता है। सामूहिक व्यवहार में व्यक्ति भिन्न–भिन्न प्रतिक्रिया करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी प्रकृति के अनुसार व्यवहार करता है। कुछ व्यवहार दूसरों जैसे होते हैं तो भिन्न व्यवहार वालों से संघर्ष होता है। विविध व्यवहार या भिन्न व्यावहारिकता से समाज में संघर्ष होता है किन्तु इसकी भी एक सीमा है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति सुरक्षा चाहता है। जब हम दूसरे से भिन्न व्यवहार करेंगे तो वह भी हमसे वैसा ही करेगा और इससे दोनों को कष्ट होगा।

व्यक्तियों के समान समूहों में भी भिन्न व्यावहारिकता के कारण संघर्ष होते हैं किन्तु जब वे भी जियो और जीने दो के सिद्धांत को जान जाते हैं तो उन्हें भी सहिष्णुता का सिद्धांत अपनाना पड़ता है। इस प्रकार बलशाली और बलहीन समाजों में संघर्ष भी कभी–कभी समान शत्रु की तुलना में सहयोग में बदल जाता है।

मनुष्यों को समूह के रूप में एक साथ रहने की प्रवृति उन्हें एक दूसरे के नजदीक लाती है। वे समुदाय, संघ, वर्ग, जातीय समूह आदि जैसे अपेक्षाकृत स्थायी समूहों का निर्माण करते हैं। साथ ही, जीवन की इन संस्थागत पद्धतियों के जरिये मानव अपनी–अपनी अनुभूतियों और व्यवहार प्रणालियों को भी अभिव्यक्त करते हैं, जो अस्थायी चरित्रवाले होते हैं। सार्वजानिक सम्मेलन, भीड़ और श्रोता समूह इन अस्थायी समूहों के उदाहरण हैं। मुख्यतः इन अस्थायी अभिव्यक्तियों को ही सामूहिक व्यवहार की संज्ञा दी जाती है।

सामूहिक व्यवहार की प्रकृति निम्न है–

1. सामान्यतः सामूहिक व्यवहार एक ऐसी घटना के इर्द–गिर्द केन्द्रित होता है जो अपनी मूल प्रवृति में अस्थायी होती है। उदाहरण के लिए यदि कोई सड़क

टिप्पणी

पर दुर्घटना होती है तो बड़ी तादाद में लोग जमा हो जाते हैं। इस मौके पर उनके व्यवहार की प्रणालियों में विविधता दिखाई देती है। कुछ लोग दुर्घटना के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों को मारपीट कर इसका बदला लेते हैं तो कुछ अन्य केवल मूकदर्शक बने रहते हैं। अर्थात सामान्य स्थितियों में वे जिस तरह का आचरण करते होंगे उससे भिन्न प्रकार का व्यवहार करते हैं।

2. सामूहिक व्यवहार अप्रत्याशित होता है और लोग एक समान या एक तरह की चीजों पर अलग–अलग ढंग से व्यवहार करते हैं।
3. सामूहिक व्यवहार में जो लोग किसी घटना के प्रति आकर्षित होते हैं, वे पहले से सोच समझकर या पूर्व नियोजित तरीके से प्रतिक्रिया नहीं जताते और न ही वे एक दूसरे को जानते हैं बल्कि स्थितियां ही उन्हें मनमानी और गैर–जिम्मेदाराना व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती हैं।
4. सामूहिक व्यवहार अस्थायी होता है क्योंकि लोगों के आकर्षण का केंद्र समाप्त होते ही लोग तितर–बितर हो जाते हैं।

सामूहिक व्यवहार उन प्रतिमानों से भिन्न होता है जो समाज के मानदंडों पर आधारित होते हैं और यह भी तथ्य है कि कुछ सामाजिक परिस्थितियां ही व्यक्ति को सामाजिक मानदंडों के विरुद्ध काम करने के लिए प्रेरित करती हैं।

सामाजिक जनजीवन किसी कारणवश अस्त–व्यस्त हो जाता है तो लोग बदली हुई परिस्थितयों का सामना करने में स्वयं को असमर्थ महसूस करने लगते हैं। ऐसे में लोगों की प्रतिक्रिया आवेग तथा आक्रोश से भरी हो सकती है। मसलन, जातीय, सांप्रदायिक जैसी हिंसा भड़कने पर प्रभावित लोग सामान्य व्यवहार नहीं करते। वे डर, क्रोध, आक्रोश आदि से भरे होते हैं और इससे ऐसी मानसिकता जन्म लेती है जो सामाजिक मानदंडों के खिलाफ होती है। लोग ऐसे में अत्यंत अविवेकपूर्ण और गैर–जिम्मेदाराना हरकतें करते हैं तथा कुछ समय के लिए अपने संकोच और लज्जा को तिलांजलि दे देते हैं।

कभी–कभी सामाजिक मानदंड भी लोगों को कुछ खास मौके पर कुछ निश्चित सीमाओं के भीतर सामान्य व्यवहार से विचलित होने की अनुमति देते हैं। कुछ मौके ऐसे आते हैं जब लोगों की सुप्त लिप्साएं और आकांक्षाएं, जिनकी पूर्ति नहीं हुई होती हैं, वे या तो विभिन्न कठिनाइयां पैदा करती हैं या फिर सामाजिक व्यवस्था में बाधा पैदा करती हैं। इसलिए समाज लोगों को अपनी दमित भावनाएं और अनुभूतियां प्रकट करने का अवसर प्रदान करता है। जैसे होली के मौके पर समाज में युवक–युवतियों को नाच–गान और हर्षोल्लास में जमकर मनाने और आचरण करने की छूट होती है।

सामूहिक व्यवहार की अभिव्यक्ति का एक महत्वपूर्ण कारण कानून बनाने वाली संस्थाओं की ईमानदारी में लोगों की आस्था का खत्म होना भी है। ऐसी स्थिति में लोग स्वयं निर्णय लेने एवं कानून विरोधी व्यवहार करने के लिए प्रेरित हो जाते हैं।

यदि सामाजिक व्यवस्था न्याय और निष्पक्षता पर आधारित नहीं है तब भी लोग हताशा के शिकार हो जाते हैं। उनमें असंतोष पैदा होता है और यह असंतोष एक आन्दोलन का रूप ले लेता है।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

1. सामूहिक व्यवहार की प्रकृति को किस विशेषता द्वारा समझा जा सकता है?
   (क) एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार
   (ख) एकात्मीकरण
   (ग) अस्थायी प्रकृति
   (घ) ये सभी
2. सामाजिक प्रोत्साहन का सिद्धांत किसके द्वारा प्रतिपादित किया गया था?
   (क) फ्रायड (ख) आलपोर्ट
   (ग) मैकडूगल (घ) स्मेलसर

4.3 भीड़ व्यवहार : समाज और श्रोताओं का मनोविज्ञान

सामान्य तौर पर जब किसी जगह या स्थान पर अनेक व्यक्ति एकत्रित हो जाते हैं तो उसे हम 'भीड़' कहते हैं। जैसे कॉलेज में विद्यार्थियों की भीड़। समाज मनोविज्ञान में भीड़ शब्द का अर्थ सामान्य अर्थ से कुछ हटकर है। व्यक्तियों के संग्रह को भीड़ कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि उनके बीच एक सामान्य अभिरुचि हो जिसके प्रति वे सब प्रतिक्रिया कर रहे हों।

भीड़ एक ऐसी सामूहिकता है जिसमें एक सीमित स्थान के भीतर अनुक्रिया करते हुए अनिवार्यतः व्यक्तियों की एक पर्याप्त संख्या सम्मिलित होती है।

सर मार्टिन कान्चे के अनुसार, भीड़ का एक पृथक और चेतन अस्तित्व होता है। अशांत भीड़, जन–समूह, जाति, साम्राज्य, राष्ट्र आदि सब समूहों और समुदायों को भीड़ कहा जाता है।

किम्बल यंग (Kimball Young) के अनुसार, मनोवैज्ञानिक अर्थ में केवल व्यक्तियों की संख्या से भीड़ का निर्माण नहीं हो जाता है। यदि लोग फुटपाथ पर इधर–उधर चल रहे हों तो इससे भीड़ का निर्माण तब तक नहीं होता है जब तक कि उनके बीच एक सामान्य अभिरुचि का कोई बिंदु हो जिसके प्रति वे लोग प्रतिक्रिया करना प्रारंभ कर दें।

थाउलेस के अनुसार, भीड़ एक ऐसा अस्थायी निकटस्थ समूह है जो पूर्णतः प्रवेश्य सीमा से संगठित होता है तथा जो किसी सामान्य अभिरुचि के फलस्वरूप स्वतः उत्पन्न होता है।

मैकाइवर के अनुसार, भीड़ ऐसे मनुष्यों का शारीरिक रूप से घनिष्ठ संगठन है जिनमें परस्पर, प्रत्यक्ष, अस्थायी तथा असंगठित संबंध स्थापित हो।

कैंट्रिल के अनुसार, भीड़ एक स्थान पर एकत्रित ऐसे व्यक्तियों का समूह होती है जिन्होंने थोड़े समय के लिए कुछ सामान्य मूल्यों के साथ अपना समीकरण कर लिया हो और जो समाज के संवेगों की अभिव्यक्ति कर रहे हों।

भीड़ का तथ्य

टिप्पणी

भीड़ के तथ्य निम्न प्रकार हैं–

(i) भीड़ में व्यक्तियों का सग्रह होता है जिसमें व्यक्तियों की संख्या अच्छी खासी होती है। किम्बल यंग ने अपनी परिभाषा में इस पक्ष पर बल डाला है।

(ii) भीड़ में व्यक्तियों का संग्रह अस्थायी होता है। यही कारण है कि व्यक्तियों का यह संग्रह स्थायी हो जाता है, तो इसे फिर भीड़ न कहकर संघ या समिति कहा जाएगा।

(iii) भीड़ में शारीरिक समीपता पाई जाती है। भीड़ में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में शारीरिक निकटता पाई जाती है। एक व्यक्ति का अंग दूसरे व्यक्ति के अंग से प्रायः छूता रहता है। भीड़ के इस पक्ष का उल्लेख थाउलेस ने अपनी परिभाषा में किया है।

(iv) भीड़ में मनोवैज्ञानिक निरंतरता भी होती है क्योंकि इसके सदस्यों में तनावपूर्ण, प्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक विशेषताएं पाई जाती हैं। जब तक किसी स्थान विशेष पर एकत्रित व्यक्तियों में एक सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक गुण नहीं विकसित होता है, उसे भीड़ नहीं कहा जा सकता है।

भीड़ की विशेषताएं

भीड़ की कुछ विशेषताएं इस प्रकार हैं–

व्यक्तियों का संग्रहणः भीड़ की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि किस स्थान–विशेष पर काफी लोग शारीरिक रूप से एकत्रित हों। बिना व्यक्तियों के एकत्रित हुए भीड़ का निर्माण संभव नहीं है। इससे स्पष्ट है कि भीड़ में व्यक्तियों की संख्या पर्याप्त होती है, जिनके बीच निकटतम शारीरिक संपर्क होता है।

सामान्य उद्देश्य या अभिरुचिः भीड़ का एक सामान्य उद्देश्य होता है जिसमें भीड़ के सदस्यों की एक समान रुचि होती है। इस समान रूचि के कारण ही भीड़ के सभी सदस्यों का ध्यान एक सामान्य वस्तु पर केन्द्रित हो जाता है तो उस प्रक्रिया को ध्रुवीकरण कहते हैं और यह भीड़ का एक प्रमुख गुण है। जैसे, सड़क पर जब कोई सुरीला एवं आकर्षक ध्वनि में गीत गाना प्रारंभ कर देता है तो धीरे–धीरे उसके चारों ओर भीड़ बढ़ने लगती है। यहां एकत्रित व्यक्तियों का एक ही सामान्य उद्देश्य होता है– गायक का गीत सुनना।

अस्थिर प्रकृतिः भीड़ में अस्थिरता पाई जाती है। प्रायः भीड़ का निर्माण किसी तात्कालिक घटना या परिस्थिति के आधार पर होता है। जैसे ही वह तात्कालिक घटना या परिस्थिति समाप्त हो जाती है, भीड़ तितर–बितर हो जाती है। जैसे, सड़क पर किसी व्यक्ति द्वारा सुरीले साज–आवाज के साथ गाने से भीड़ एकत्रित हो जाती है। परन्तु जैसे ही वह व्यक्ति गीत गाना बंद करके अन्यत्र चला जाता है तो भीड़ तितर–बितर हो जाती है।

सामान्य प्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक स्थितिः चूंकि भीड़ के सदस्यों का एक सामान्य लक्ष्य होता है तथा इनकी सामान्य अभिरुचि भी होती है, इसलिए इनमें सामान्य प्रेरणात्मक एवं संवेगात्मक स्थिति भी पाई जाती है। उदाहरण के लिए, किसी बारात

टिप्पणी

पार्टी में दूल्हे को घायल करके एक व्यक्ति भागने का प्रयास करता है। स्वभावतः उसे पकड़ने के लिए बारात के सभी लोग या अधिकतर लोग उसके पीछे दौड़ेंगे। ऐसे सभी लोग मिलकर मनोवैज्ञानिक अर्थ में भीड़ का निर्माण करते हैं। इन सभी व्यक्तियों की मुख्य प्रेरणा घायल करके भागने वाले व्यक्ति को पकड़ना है।

असंगठितः भीड़ असंगठित होती है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री पेज ने कहा है, भीड़ असंगठित समूहों की श्रेणी में आती है। इससे हमलोगों का अर्थ यह नहीं है की भीड़ का कोई पैटर्न नहीं होता या भीड़ की कोई विशिष्ट अभिव्यक्ति नहीं होती है। इसका अर्थ केवल इतना ही है कि भीड़ की इकाइयां एक–दूसरे से संगठित नहीं होती हैं। अनौपचारिक भीड़ में असंगठित होने का गुण अधिक देखने को मिलता है।

स्थानीय वितरणः भीड़ की इस विशेषता पर किम्बल यंग ने काफी बल दिया है। इनका कहना है कि भीड़ एक सीमित क्षेत्र के अन्दर फैली होती है। पूरे शहर या गांव में फैले व्यक्तियों के समूह को भीड़ नहीं कहा जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि समूह किसी निश्चित स्थान पर इस ढंग से एकत्रित हो कि उनमें शारीरिक निकटता बनी रहे। जितने बड़े स्थान पर भीड़ के सदस्य फैले होते हैं, उसे ही भीड़ का स्थानीय वितरण कहा जाता है।

सामूहिक शक्ति की अनुभूतिः भीड़ के सदस्य एक सामूहिक शक्ति का अनुभव करते हैं। भीड़ के सदस्यों में चूंकि 'कंधे–से–कंधे' का सम्बन्ध होता है, इसलिए उन्हें यह महसूस होता है कि उनके साथ बहुत से लोग हैं। अतः सदस्यों को सामूहिक शक्ति का अनुभव होता है। यही कारण है कि भीड़ में रहने पर जब व्यक्ति अपना पृथक अस्तित्व नहीं बनाए रख पाता है तो वह अपने व्यक्तित्व को सम्पूर्ण समूह के व्यक्तित्व के साथ घुला–मिला पाता है। भीड़ की इस सामूहिक शक्ति का ही परिणाम है कि भीड़ में रहने पर व्यक्ति कभी–कभी इतना साहसी काम कर बैठता है जिसे वह अकेले कभी नहीं कर सकता है। जैसे भीड़ होने पर पुलिसकर्मी की पिटाई हो जाती है, वही कार्य अकेले सभवतः वह कभी नहीं कर सकता है।

अनुकरण तथा प्रभावशीलताः भीड़ के सदस्यों में अनुकरण तथा प्रभावशीलता का गुण पाया जाता है। यदि भीड़ में एक सदस्य चोर या उच्चका या पॉकेटमार को एक चांटा लगाता है तो दूसरा सदस्य भी बिना किसी हिचकिचाहट के उसका अनुकरण करते हुए चांटा लगा देता है। अन्य सदस्य भी प्रायः ऐसा ही करते हैं। इस तरह से भीड़ की स्थिति में एक सदस्य द्वारा किए गए व्यवहारों का अनुकरण अन्य सदस्यों द्वारा आसानी से होता है।

भीड़ व्यवहार का मनोविज्ञान

मनोविज्ञान में भीड़ व्यवहार के अध्ययन पर अधिक बल दिया गया है क्योंकि भीड़ अधिक उत्तेजनाशील एवं संवेगशील होती है। इस तरह की भीड़ में उत्तेजनशीलता एवं संवेगशीलता की चपेट में आम जनता अक्सर आ जाती है और कभी–कभी सरकार को भी परेशानी होती है। भीड़ व्यवहार की कुछ विशेषताएं होती हैं–

(क) अविवेकपूर्ण व्यवहार या निम्नस्तरीय बौद्धिक व्यवहार

अधिकतर समाज मनोवैज्ञानिकों का मत यह है कि क्रियाशील भीड़ अविवेकपूर्ण व्यवहार करती है। इसके सदस्यों के पास न तो कोई तर्क होता है और न ही कोई

टिप्पणी

उचित–अनुचित का मापदंड ही। स्वभावतः तब ऐसी परिस्थिति में भीड़ का व्यवहार बौद्धिक दृष्टिकोण से निम्नकोटि का होता है। मैकडूगल के अनुसार, भीड़ में सदस्यों का व्यवहार अधिक मूर्खतापूर्ण, गलत एवं दोषयुक्त होता है। इस भीड़ का सबसे कम बुद्धि का भी व्यक्ति कहीं अकेले में अधिक विवेकपूर्ण व्यवहार कर सकता है।

- क्रियाशील भीड़ के अधिकतर सदस्य कम बुद्धि के होते हैं।
- क्रियाशील भीड़ के सदस्यों में सुझाव ग्रहण करने की क्षमता अधिक होती है। फलतः वह अविवेक सुझाव को भी सहर्ष करके अविवेकपूर्ण व्यवहार करता है।
- क्रियाशील भीड़ में उत्तेजना या जोश का स्तर अधिक ऊंचा होता है।
- क्रियाशील भीड़ के सदस्यों में अनुकरणशीलता अधिक पाई जाती है।

(ख) संवेग का उत्तेजन

क्रियाशील भीड़ की दूसरी मनोवैज्ञानिक विशेषता उसका संवेगात्मक उत्तेजन है। इस तरह की भीड़ के सदस्यों में क्रोध, हर्ष, भय, घृणा आदि संवेग अपने चरम पर होते हैं। इस संदर्भ में किम्बल यंग ने कहा है कि, क्रियाशील भीड़ वह है जिसमें भय, प्रेम, क्रोध या लड़ाई झगड़ा होता है। इस तरह की भीड़ में किसी सदस्य को यदि कुछ बोलना है तो वह अपना चेहरा, हाथ आदि की विशेष भंगिमा बनाते हुए चिल्ला–चिल्ला कर बोलता है। उसी ढंग से यदि किसी सदस्य को हर्ष तथा खुशी व्यक्त करना होता है तो वह गगनभेदी हर्षध्वनि करते हुए अपनी खुशी व्यक्त करता है।

(ग) उत्तरदायित्व की भावना का अभाव

क्रियाशील भीड़ में सदस्यों में उत्तरदायित्व की भावना की कमी पाई जाती है। इसका कोई भी सदस्य भीड़ के किसी कार्य के लिए अपने आपको उत्तरदायी नहीं समझता है। भीड़ में व्यक्ति अन्य लोगों के साथ अपने आपको पूर्णतः आत्मसात कर देता है। अतः अपने आपको भीड़ से पूर्णतः पृथक नहीं समझता है। भीड़ का कोई भी कार्य सामूहिक रूप से संपूर्ण भीड़ की क्रिया समझी जाती है। इसलिए भीड़ के किसी खास सदस्य पर भीड़ के किसी भी कार्य के लिए कोई उत्तरदायित्व नहीं होता है। कुछ समाज मनोवैज्ञानिकों ने इस तरह के उत्तरदायित्व की भावना की कमी के कारणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि इसके प्रमुख कारण इस प्रकार हैं–

- भीड़ में उत्तरदायित्व सभी लोगों में बंट जाता है जिसके कारण किसी भी कार्य का विशिष्ट उत्तरदायित्व किसी विशेष सदस्य पर नहीं डाला जाता है।
- भीड़ में आत्मचेतना का स्तर काफी कम हो जाता है। फलतः कोई भी सदस्य अपने द्वारा किए जा रहे कार्यों के बारे में कुछ नहीं सोचता है।
- भीड़ में सदस्यों में विवेक तथा बुद्धि का स्तर काफी कम हो जाता है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि सदस्य में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना कम हो जाती है।

(घ) अतिरिक्त शक्ति का आभास

क्रियाशील भीड़ में प्रायः व्यक्तियों की संख्या अधिक होती है और उनकी अभिरुचि एवं लक्ष्य भी एक ही होते हैं। इस कारण इसके सदस्य अपने आप को अधिक शक्तिशाली महसूस करते हैं। इस तरह की भीड़ में व्यक्ति उस कार्य को भी आसानी से कर लेता

टिप्पणी

है जिसे वह सामान्यतः अपनी शक्ति से बाहर समझता है। उसे कभी–कभी अपने आप पर आश्चर्य भी होता है कि वह इस प्रकार का कार्य किस तरह कर बैठा। ग्रिंसवर्ग ने क्रियाशील भीड़ के सदस्यों में उत्पन्न इस अतिरिक्त शक्ति के कारण पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि इस भीड़ में सामूहिकता की मूल–प्रवृति अधिक उत्पन्न हो जाने से सदस्यों में एक प्रकार का तांत्रिक उल्लास उत्पन्न हो जाता है जिससे उनमें अतिरिक्त खुशी, प्रोत्साहन एवं शक्ति का आभास होता है।

(ङ) मानसिक एकरूपता

भीड़ के सदस्यों की बुद्धि, चरित्र, पेशा आदि में विभिन्नता होने के बावजूद भी उनके व्यवहारों एवं विचारों में समानता या एकरूपता होती है। इसी एकरूपता के आधार पर वे भीड़ के सदस्य के रूप में एकजुट होकर डटे रहते हैं। इसकी व्याख्या एक सिद्धांत के रूप में लिबॉन ने समूह–मस्तिष्क के आधार पर, फ्रायड ने अचेतन मन के आधार पर तथा आलपोर्ट ने सामाजिक सरलीकरण के आधार पर की है। चूंकि भीड़ के सभी सदस्यों के विचारों या ध्यान का केंद्र एक सामान्य बिंदु होता है, इसलिए एकरूपता का यह एक प्रधान कारण है।

(च) अनैतिकता की प्रधानता

क्रियाशील भीड़ में अमानवीय गुणों जैसे क्रूरता, पाशविक या अनैतिकता की अधिक प्रधानता होती है। भीड़ के सदस्यों के रूप में व्यक्ति विभिन्न प्रकार की उत्तेजनाओं एवं संवेगों में बहता रहता है, उसे नैतिकता एवं सामाजिकता के बारे में सोचने का मौका नहीं मिलता है। इस तरह की भीड़ में कुछ लोग तो काफी विवेकहीन एवं निम्नकोटि के होते हैं जो व्यवहारों द्वारा भीड़ में अनैतिकता को बढ़ावा देते हैं और अन्य लोग भी अच्छे व्यक्ति होते हैं। उन अनैतिक व्यवहारों का अनुकरण कर वैसा ही करने लगते हैं। इन सबका परिणाम यह होता है कि क्रियाशील भीड़ में अनैतिकता इतनी तेजी से पनपती है कि इस तरह की भीड़ को यदि अनैतिक भीड़ ही कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

(छ) उच्च सुझाव ग्रहणशीलता एवं सहज विश्वास

भीड़ की एक मनोवैज्ञानिक विशेषता यह भी है कि इसके सदस्यों में सुझाव ग्रहणशीलता अधिक होती है अतः वे सहज विश्वासी होते हैं। इस तरह के भीड़ के सदस्य को जो कुछ भी कहा जाता है, बिना किसी तर्क या विचार–विमर्श के ही वे इसे सही मान लेते हैं क्योंकि मन में सुझाव ग्रहणशीलता अधिक हो जाती है। वर्गेसेन के अनुसार, भीड़ में सुझाव ग्रहणशीलता की अधिकता का मूल कारण दैहिक है। इनके अनुसार, जब हाईपौथेलमस पर कार्टेक्स का नियंत्रण कुछ ढीला पड़ जाता है तो सदस्यों में संवेगिकता बढ़ जाती है और उनका बौद्धिक स्तर गिर जाता है। इस कारण, उनमें सुझाव–ग्रहणशीलता बढ़ जाती है। रौस के मुताबिक, क्रियाशील भीड़ के सदस्य के लिए अतीत का कोई अस्तित्व नहीं होता है।

(ज) सामाजिक प्रोत्साहन

किम्बल यंग का मत है कि दूसरे लोगों की उपस्थिति या क्रियाओं के कारण किसी व्यक्ति की अनुक्रियाओं में वृद्धि को सामाजिक प्रोत्साहन की संज्ञा दी जाती है। क्रियाशील भीड़ में सदस्यों के बीच मात्र आमने–सामने का ही नहीं बल्कि कंधे–से–कंधे

का संबंध होता है। फलतः जब भीड़ का कोई सदस्य यह देखता है कि अन्य सदस्यों द्वारा अमुक कार्य किया जा रहा है तो वह सदस्य स्वयं ही उस कार्य को करने के लिए प्रेरित हो जाता है और बिना कुछ सोचे–समझे ही उसे कर बैठता है।

टिप्पणी

(झ) संकल्प शक्ति का अभाव

क्रियाशीलता भीड़ में संकल्प शक्ति की कमी होती है। इनके सदस्यों में संवेगशीलता अधिक होती है। इसके कारण वे कोई भी कार्य सोच–समझ कर नहीं करते हैं। इतना ही नहीं, इस तरह की भीड़ में चूंकि सुझाव ग्रहणशीलता अधिक होती है तथा इसके सदस्य सहज विश्वासी होते हैं, इस कारण इनके सदस्यों में किसी प्रकार का विचार–विमर्श नहीं हो पाता है जिससे इनमें संकल्प शक्ति का सर्वथा अभाव पाया जाता है।

(ञ) नेतृत्व

भीड़ व्यवहार की एक मनोवैज्ञानिक विशेषता यह है कि कभी तो इसका नेता पूर्वनिश्चित रहता है और कभी तत्काल ही कोई सदस्य इसका नेता बन जाता है। जब भीड़ आकस्मिक एवं संगठित होती है तो उसका नेता पूर्वनिश्चित नहीं होता है। उग्रवादी भीड़ पलायनवादी भीड़ या हत्याकारी भीड़ आदि के रहने पर उसका नेता पूर्व निश्चित होता है और वह अपने पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार कार्य करता है। भीड़ में नेता प्रायः उद्दीपक का कार्य करता है और भीड़ के अन्य सदस्यों का वह मार्ग निर्देशन करता है।

4.3.1 समाज और भीड़ व्यवहार

मनुष्य सामाजिक संगठनों, संस्थाओं, समितियों, वर्गों, जातियों और परिवारों को बनाता है और इन्हीं के माध्यम से अपनी सामाजिकता की अभिव्यक्ति भी करता है। मानव समाज का निर्माण सामाजिक संगठन, जनसंख्या, निश्चित स्थान और कुछ उद्देश्यों को लेकर होता है। समाज में व्यक्तियों का जीवन श्रम विभाजन के आधार पर संगठित होता है। समाज में व्यक्तियों के एक जैसे उद्देश्य होते हैं और वे जीवन के विभिन्न पहलुओं में एक–दूसरे पर निर्भर रहते हैं। समाज छोटा भी होता है और बड़ा भी।

ऐसे व्यक्तियों के समुदाय को समाज कहा जाता है, जो कतिपय संबंधों या बर्ताव की विधियों द्वारा परापर एकीभूत हो। जो व्यक्ति इन संबंधों द्वारा संबद्ध नहीं होते या जिनके बर्ताव भिन्न होते हैं, वे समाज से पृथक होते हैं।

डब्ल्यू ग्रीन के मुताबिक, समाज एक बहुत बड़ा समूह है और व्यक्ति उसके सदस्य हैं। समाज के अंतर्गत जनसंख्या, संगठन, समय, स्थान और विभिन्न हेतु होते हैं। जनसंख्या में सभी आयु और लिंगों के व्यक्ति होते हैं। पुरुष, स्त्री, बच्चे और बूढ़े सभी समाज के सदस्य हैं। इन सदस्यों में विभिन्न संगठन–परिवार, वर्ग, जाति, आदि होते हैं। समाज का एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र होता है, और सदस्यों के कुछ सामाजिक स्वार्थ और उद्देश्य होते हैं।

टेलकट पारसन्स के अनुसार, जो उच्च कोटि के सिद्धांतवेत्ता हैं, कहते हैं कि समाज को उन मानव संबंधों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता

है, जो क्रियाओं के करने से उत्पन्न हुए हैं और वह कार्य साधन और साध्य के सम्बन्ध के रूप में किए गए हों, चाहे वह यथार्थ हो या चिह्न मात्र।

टिप्पणी

समाज की विशेषताएं

समाज की विशेषताएं निम्न हैं–

- **एक से अधिक सदस्य** : कोई भी समाज हो, उसके लिए एक से अधिक सदस्यों की आवश्यकता होती है। अकेला व्यक्ति जीवनयापन नहीं कर सकता है और यदि वह किसी तरह जीवन निर्वाह कर भी ले तब भी वह समाज नहीं कहा जा सकता। समाज के लिए यह अनिवार्य है कि उसमें दो या अधिक व्यक्ति हों।
- **वृहद् समाज** : समाज में अगणित समूह होते हैं। इस समूहों को एथनिक समूह कहते हैं। इनकी अपनी एक संस्कृति होती है, एक सामान्य भाषा होती है, खान–पान होता है, जीवन पद्धति होती है। इस तरह की बहुल उपसंस्कृति जब किसी इलाके में मिल जाती है, तब वे वृहद् संस्कृति का निर्माण करती है।
- **क्षेत्रीयता** : क्षेत्रीयता से संस्कृति का जुड़ाव होता है। जिस क्षेत्र में संस्कृति का उद्‌गम या विकास हुआ है, उसी क्षेत्र में समाज के साथ वह पहचाना जाता है। उसकी भाषा, खान–पान, तिथि, त्योहार भी एक होता है।
- **सामाजिक संबंधों का दायरा** : समाज में सदस्यों के सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के होते हैं। समाज जितना जटिल होगा, सम्बन्ध भी उतने ही भिन्न और जटिल होंगे। सम्बन्ध कई तरह के होते हैं, पति–पत्नी, मालिक–मजदूर, व्यापारी–उपभोक्ता आदि। इन विभिन्न संबंधों में कुछ संबंध संघर्षात्मक होते हैं तो कुछ सहयोगात्मक। समाज का चेहरा हमेशा प्रायः प्रेम, सहयोग और ममता से देदीप्यमान नहीं होता, इसके चेहरे का पहलू बदसूरत भी होता है। जैसे मारपीट, झगड़े, दंगे आदि।
- **श्रम विभाजन** : समाज में श्रम विभाजन होता है। कुछ लोग खेतों में काम करते हैं तो कुछ लोग उद्योगों से जुड़े होते हैं। समाज में शक्ति होती है और उसका बंटवारा होता है। हालांकि बंटवारे का सिद्धांत समाज में गैर–बराबरी पैदा करता है। समाज में विकास किसी भी स्तर पर हो, लेकिन श्रम विभाजन का होना अनिवार्य है।
- **काम प्रजनन** : समाज में वृद्धि और विकास के लिए बराबर नए सदस्यों की भारती की आवश्यकता रहती है। समाज में निरंतरता के लिए यह आवश्यक है। यदि समाज के सदस्यों में निरंतरता नहीं रहती है तो समाज का अस्तित्व खतरे में रहता है।
- **समाज सर्वोपरि होता है** : समाज का वर्चस्व सबसे बड़ा होता है। व्यक्ति के ऊपर समाज होता है। राजनीतिक व्यवस्था भी अन्ततोगत्वा समाज के अंतर्गत ही काम करती है।

- **समाज सतत परिवर्तनशील है:** समाज व्यक्तियों का एक संगठन है, जिसमे सामाजिक संबंध होते हैं पर व्यक्तियों के ये संबंध स्थिर नहीं हैं।

भीड़ और समाज में अंतर

टिप्पणी

समाज उन मानवीय सामाजिक अंतःसंबंधों का सम्पूर्ण क्षेत्र है जो एक समुदाय के व्यक्तियों के बीच पाया जाता है, और जो उन्हें एक व्यवस्था के अंतर्गत संगठित, नियंत्रित और स्थिर रखता है। समाज की इस परिभाषा से ही भीड़ और समाज में भेद स्पष्ट हो जाता है। भीड़ और समाज में निम्न अंतर हैं–

- समाज एक संगठित व्यवस्था है, जिसके विभिन्न अंग प्रकार्यात्मक संबंध के आधार पर एक–दूसरे से संबंद्ध रहते हैं। इसके विपरीत भीड़ प्रायः असंगठित होती है। यह न तो किसी पूर्वनिश्चित उद्देश्यों या नियमों के आधार पर बनती है और न ही अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कोई निश्चित तरीके अपनाती है। इसके विपरीत प्रत्येक समाज की व्यवस्था कुछ उद्देश्यों या नियमों पर ही आधारित होती है।
- समाज और भीड़ में एक अंतर यह है कि समाज एक स्थिर व्यवस्था है, जबकि अस्थिर भीड़ की एक प्रमुख विशेषता है। समाज एक अर्थ में स्थिर नहीं है कि इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता, बल्कि इस अर्थ में स्थिर है कि समाज की निरंतरता पीढ़ी–दर–पीढ़ी बनी रहती है। इसके विपरीत भीड़ का जीवन क्षणिक होता है और केवल जीवन ही नहीं, भीड़ के विचार, भाव और संवेग सब कुछ अल्पकालीन होते हैं, पर समाज के विचार, भावनाएं, आदर्श आदि लम्बे अरसे तक चलते हैं।
- भीड़ का एक स्थानीय वितरण होता है। इसका अर्थ है कि भीड़ के बनने के लिए एक ऐसे सीमित स्थान का होना जरूरी है जहां उसके सदस्य एकत्रित हो सकें। भीड़–निर्माण में सदस्यों की शारीरिक उपस्थिति अनिवार्य है। इसके विपरीत समाज के लिए निश्चित और सीमित भूभाग की आवश्यकता नहीं होती है। समाज तो विश्व समाज का रूप धारण कर सकता है, पर विश्व–भीड़ की कल्पना नहीं की जा सकती है। समाज के लिए पारस्परिक जागरूकता पर्याप्त है। इसके लिए शारीरिक उपस्थिति अनिवार्य नहीं है।
- प्रत्येक समाज की अपनी एक निश्चित कार्य प्रणाली, रीति–रिवाज, प्रथा, परंपरा, नियम, आचार, आदर्श, कारण आदि होते हैं। इस कारण समाज और उसके सदस्यों के व्यवहार के संबंध में कुछ निश्चित भविष्यवाणी की जा सकती है, पर भीड़ के व्यवहार के संबंध में ऐसा कुछ भी करना संभव नहीं है। इस क्षण जो भीड़ एक सक्रिय है, दूसरे ही क्षण वह एक आक्रमणकारी रूप ले सकती हैं।
- भीड़ के सभी सदस्यों के व्यवहार में संवेगात्मक शक्ति का आभास, उत्तरदायित्व की कमी, संकल्प–शक्ति का अभाव, अवदमित प्रेरणाओं का प्रकाशन, अनैतिकता की प्रधानता, आदि गुण देखने को मिलते हैं। समाज के सदस्यों के व्यवहार में इन विशेषताओं के दर्शन नहीं होते। समाज वृहत्तर संगठन और व्यवस्था का परिचायक है और भीड़ उसी समाज के अन्दर अव्यवस्थित, अस्थिर और

तात्कालिक घटना का बोध कराती है। भीड़ एक विशेष–सामूहिक परिस्थिति में व्यक्ति के व्यवहार के विशिष्ट पक्षों को उद्‌घाटित करती है।

टिप्पणी

सामूहिक व्यवहार तथा भीड़ में अंतर

सामूहिक व्यवहार	भीड़
सामूहिक व्यवहार की प्रकृति कार्यपूर्ण होने तक स्थिर होती है।	भीड़ की प्रकृति अस्थिर होती है।
सामूहिक व्यवहार एक संगठनात्मक प्रक्रिया है। यह संगठित और असंगठित दोनों प्रकार के होते हैं।	भीड़ असंगठित होती है।
सामूहिक व्यवहार में एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार पाया जाता है।	भीड़ में व्यवहार अस्थायी होते हैं।
सामूहिक व्यवहार में आकर्षण की शक्ति पाई जाती है। कार्य को पूरा होने तक यह आकर्षण बना रहता है।	भीड़ में अस्थायी आकर्षण पाया जाता है जो कुछ समय बाद समाप्त हो जाता है।
सामूहिक व्यवहार अमूर्त है।	भीड़ मूर्त है।
सामूहिक व्यवहार अपनी कार्य प्रणाली पर आधारित है।	भीड़ व्यक्तियों का एक तात्कालिक समूह है।
सामूहिक व्यवहार का अंत निश्चित होता है।	भीड़ का आरम्भ और अंत दोनों ही अनिश्चित होते हैं।
सामूहिक व्यवहार उद्देश्यपूर्ण होते हैं।	भीड़ उद्देश्यहीन होती है।
सामूहिक व्यवहार में बुद्धि का स्तर उच्च होता है।	भीड़ में बुद्धि का स्तर निम्न कोटि का होता है।
सामूहिक व्यवहार में संवेग, भाव तथा विचार स्थाई होते हैं।	भीड़ में संवेग, भाव तथा विचार अस्थाई होते हैं।

4.3.2 श्रोताओं का मनोविज्ञान

श्रोता भी एक तरह की भीड़ है। यह एक औपचारिक भीड़ होती है जो एक खास नियम, प्रथा के आधार पर संचालित होती है। एक समूह का एक निश्चित उद्देश्य होता है। इस तरह की भीड़ में विचारों की प्रधानता रहती है।

किम्बल यंग के अनुसार, श्रोतागण एक प्रकार की संस्थागत भीड़ है।

आर. डब्ल्यू. ब्राउन के अनुसार, निष्क्रिय होकर सुनने वाली भीड़ को श्रोतागण कहा जाता है।

श्रोता की विशेषताएं

श्रोता की कुछ विशेषताएं होती हैं, वे हैं–

(क) विशिष्ट उद्देश्यः श्रोतागण का एक प्रमुख उद्देश्य होता है जो निश्चित एवं पूर्वनिर्धारित होता है। इसी उद्देश्य के कारण वे एक जगह एकत्रित होते हैं। किसी

राजनीतक दल के नेता का भाषण सुनने, किसी साधू–संत का प्रवचन सुनने, किसी गायक का गीत सुनने के उद्देश्य या ऐसे ही अन्य उद्देश्य को लेकर ही श्रोतागण एकत्रित होते हैं।

टिप्पणी

(ख) पूर्व निश्चित समय तथा स्थान : अधिकांशतः श्रोतागण का स्थान तथा समय पहले से निर्धारित एवं निश्चित होता है। दूसरे शब्दों में, श्रोतागण कहां एकत्रित होंगे और कब एकत्रित होंगे, यह बात पहले से निश्चित होती है। उदाहरण के लिए, श्रोतागण को सिर्फ यह नहीं पता होता कि मंत्री महोदय आ रहे हैं बल्कि यह भी पता होता है कि मंत्री महोदय का भाषण किस स्थान पर होने जा रहा है तथा किस समय होने जा रहा है।

(ग) शारीरिक संपर्क : श्रोतागण में भीड़ की तरह सदस्यों में कंधों–से कंधों का शारीरिक संपर्क तो नहीं होता परन्तु उनमें शारीरिक निकटता अवश्य होती है। प्रत्येक सदस्य के बैठने या खड़ा होने का स्थान निश्चित होता है। इसलिए इन्हें एक–दूसरे की उपस्थिति का पता चलता है, भले ही उनमें कोई निकट सम्बन्ध का अनुभव नहीं है। श्रोतागण में शारीरिक निकटता उनकी संख्या तथा स्थान पर निर्भर करती है। यदि श्रोतागण की संख्या अधिक है तथा बैठने का स्थान छोटा है तो शारीरिक निकटता बढ़ जाएगी। दूसरी तरफ यदि उसकी संख्या कम है तथा बैठने का स्थान बड़ा है तो उनमें शारीरिक निकटता कम हो जाएगी।

(घ) व्यवहार का एक निश्चित प्रतिफल : श्रोतागण का व्यवहार मनमाने ढंग से न होकर नियमों एवं परंपराओं के अनुकूल होता है। उदाहरणार्थ प्रधानमंत्री का भाषण सुनने के लिए आए श्रोतागण शांतिपूर्वक बैठकर या खड़े होकर भाषण सुनते हैं। हां, अगर बीच में कोई घटना हो जाए तो वैसी परिस्थिति में श्रोतागण भीड़ में बदल जाएंगे।

(ङ) ध्रुवण तथा पारस्परिक क्रिया : श्रोतागण तथा वक्ता के बीच उचित अंतःक्रिया हो, इसके लिए आवश्यक है कि उचित व्यवस्था की जाए ताकि श्रोतागण में ध्रुवण सरलता से हो अर्थात श्रोतागण का ध्यान वक्ता की ओर आसानी से केन्द्रित या ध्रुवित हो। इसके लिए कुछ खास–खास बातों का ध्यान देना आवश्यक है। जैसे–बैठने की व्यवस्था इस प्रकार की हो कि श्रोतागण के ध्यान का केंद्र वक्ता हो, रोशनी का उचित प्रबंध हो तथा श्रोतागण के ध्यान को मंच की ओर आकर्षित करने के लिए मंच की सजावट आकर्षक हो तथा कार्यक्रम भी रुचिकर हो।

(च) श्रोतागण का भंग होना : विषय की समाप्ति पर श्रोतागण धीरे–धीरे टूटने लगते हैं। वह अंत ही शांतिपूर्ण होना चाहिए अन्यथा फिर श्रोतागण भीड़ के सदस्य बन जाएंगे। श्रोतागण के मस्तिष्क पर विषय की एक स्पष्ट छाप पड़ती है। शायद यही कारण है कि सभा या विषय की समाप्ति के बाद निकलते समय सदस्य विषय के सम्बन्ध में अपने विचारों का आदान–प्रदान करते दीख पड़ते हैं। बस, श्रोतागण की जीवन अवधि भी यहीं समाप्त हो जाती है।

श्रोतागण के प्रकार

भीड़ के समान ही श्रोतागण के भी प्रकार होते हैं। ब्रिट ने श्रोतागण के पांच प्रकार बताए हैं–

टिप्पणी

(क) पैदल श्रोतागण : पैदल श्रोतागण से तात्पर्य वैसे श्रोतागण से होता है जो किसी व्यक्ति का भाषण सुनने, खेल देखने, गीत सुनने आदि के लिए पैदल चलकर एक जगह पर एकत्रित होते हैं। उदाहरणार्थ, किसी नर्तकी का नाच देखने के लिए सड़क पर पैदल चलकर आने वालों की जो भीड़ जमा होती है, उसे पैदल श्रोतागण कहा जाएगा।

(ख) निष्क्रिय श्रोतागण : इस प्रकार के श्रोतागण से तात्पर्य ऐसे श्रोतागण से होता है जो बिलकुल ही निष्क्रिय होकर अर्थात शांतचित्त होकर नाटक, सिनेमा, नृत्य देखता है या किसी साधु–संत का प्रवचन सुनता है। ऐसे श्रोतागण बिना किसी प्रतिक्रिया के किसी का भाषण, नृत्य, नाटक, सिनेमा आदि देखते रहते हैं।

(ग) चुने हुए श्रोतागण : कुछ श्रोतागण वैसे होते हैं जिसके सदस्य आम जनता नहीं बल्कि कुछ खास–खास चुने गए व्यक्ति होते हैं। उदाहरण के लिए किसी बड़े पुल या अस्पताल के उद्घाटन समारोह में आम जनता को निमंत्रित नहीं किया जाता बल्कि समाज के कुछ चुने हुए प्रतिष्ठित व्यक्तियों को निमंत्रित किया जाता है। ऐसे व्यक्तियों को चुने गए श्रोतागण कहा जाता है।

(घ) केन्द्रित श्रोतागण : इस प्रकार के श्रोतागण से तात्पर्य वैसे श्रोतागण से होता है जिसके सदस्यों में एक खास योग्यता का होना अनिवार्य है। उदाहरण के लिए कॉलेज–कक्षा, कुलपति सभा आदि। यानी कॉलेज के किसी भी कक्षा के सदस्य होने के लिए उनमें एक विशेष योग्यता तथा कुलपति सभा के सदस्य होने के लिए कुलपति का होना अनिवार्य है।

(ङ) संगठित श्रोतागण : जब किसी खास उद्देश्य को आधार मानकर व्यवस्थित ढंग से व्यक्तियों को एकत्रित किया जाता है, तो इसे संगठित श्रोतागण की संज्ञा दी जाती है। उदाहरण के लिए सैनिकों के प्रशिक्षण की कक्षा, शारीरिक शिक्षा की कक्षा आदि।

वहीं, किम्बल यंग के अनुसार श्रोतागण तीन प्रकार के होते हैं–

(क) सूचना प्राप्त करने वाला : इस तरह के श्रोतागण का मुख्य उद्देश्य सूचना प्राप्त करना होता है, चाहे उस सूचना का स्वरूप धार्मिक हो, सामाजिक हो या मात्र मनोरंजन के लिए ही हो। उदाहरण के लिए कॉलेज में वर्ग में प्राध्यापक का भाषण सुनता हुआ समूह, किसी मैदान में प्रधानमंत्री का भाषण सुनता हुआ व्यक्तियों का समूह, किसी धार्मिक स्थल में साधु–संतों का प्रवचन सुनता हुआ व्यक्तियों का समूह आदि।

(ख) मनोरंजन प्राप्त करने वाला श्रोतागण : जब व्यक्तियों का समूह किसी जगह पर मात्र मनोरंजन प्राप्त करने के ख्याल से इकट्ठा होता है तो इसे मनोरंजन प्राप्त करने वाला श्रोतागण कहा जाता है। उदाहरण के लिए, किसी गायक का गीत सुनने के ख्याल से एकत्रित समूह, किसी नाटक को देखने के ख्याल से एकत्रित समूह आदि।

(ग) विचार–परिवर्तन के ख्याल से एकत्रित श्रोतागण : इस तरह के श्रोतागण का उद्देश्य अपने वर्तमान विचारों का परिवर्तन करना होता है। ऐसे श्रोतागण इसी उद्देश्य से ही एक जगह पर एकत्रित होते हैं। उदाहरण के लिए किसी फकीर या साधु–संत के पास अपने विचारों में परिवर्तन के ख्याल से एकत्रित समूह ऐसे श्रोतागण के ज्वलंत उदाहरण हैं।

वहीं, ब्राउन ने श्रोतागण के मुख्य दो प्रकार बतलाए हैं–

(क) आकस्मिक श्रोतागण : आकस्मिक श्रोतागण किसी तात्कालिक परिस्थितिवश निर्मित हो जाते हैं। जैसे सड़क पर डमरू की डम–डम की आवाज सुनकर पैदल चलते व्यक्तियों में से कुछ व्यक्ति उस जगह पर एकत्रित हो जाते हैं।

टिप्पणी

(ख) संकल्पित श्रोतागण : संकल्पित श्रोतागण वैसे श्रोतागण को कहा जाता है, जिसके सदस्य जान–बूझकर एक निश्चित जगह पर एक स्पष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए एकत्रित होते हैं। उदाहरण के लिए प्रधानमंत्री का भाषण सुनने वाला समूह।

भीड़ तथा श्रोतागण में अंतर

भीड़ तथा श्रोतागण में अंतर इस प्रकार है–

- भीड़ व्यक्तियों का तात्कालिक संग्रह है जबकि श्रोतागण व्यक्तियों का एक संस्थागत समूह है। भीड़ की कार्यप्रणाली एवं स्थिरता के सम्बन्ध में कोई निश्चितता नहीं होती है जबकि श्रोतागण की कार्यप्रणाली एवं स्थिरता के सम्बन्ध में एक निश्चितता होती है।
- भीड़ का निर्माण प्रायः कुछ आकस्मिक घटनाओं के कारण होता है। इसके सदस्य को यह पता नहीं होता है कि उन्हें कहां एकत्रित होना है तथा उन्हें कौन–सी भूमिका करनी है। श्रोतागण के साथ ऐसी बात नहीं है। इसके सदस्यों को यह पहले से पता होता है कि उन्हें कहां एकत्रित होना है तथा उनकी भूमिका क्या होगी।
- भीड़ का कोई पूर्व निश्चित उद्देश्य नहीं होता है लेकिन श्रोतागण का कोई–न–कोई पूर्वनिश्चित उद्देश्य अवश्य होता है।
- भीड़ के सदस्यों का विशेषकर क्रियाशील भीड़ के सदस्यों का व्यवहार असामाजिक, अनैतिक एवं अविवेकपूर्ण होता है। जबकि श्रोतागण के सदस्यों का व्यवहार सामाजिक, नैतिक एवं विवेकपूर्ण होता है।
- भीड़ का आरम्भ और अंत दोनों ही अनिश्चित होते हैं। कोई व्यक्ति यह नहीं बता सकता कि भीड़ किस रूप में आरम्भ होगी और किस रूप में समाप्त होगी। परंतु श्रोतागण के साथ ऐसी बात नहीं है। इसका आरम्भ किस प्रकार होगा और उसकी समाप्ति किस तरह होगी, दोनों ही निश्चित होते हैं।
- भीड़ के सदस्यों में उत्तरदायित्व का ज्ञान नहीं होता है क्योंकि सदस्यों में अवैयक्तिकता अधिक पाई जाती है। परन्तु श्रोतागण के सदस्यों में उत्तरदायित्व का ज्ञान अधिक होता है क्योंकि उनमें सदस्यों की वैयक्तिकता कायम रहती है।
- भीड़ में प्रायः एक निश्चित नेतृत्व का अभाव रहता है जबकि श्रोतागण में एक निश्चित एवं पूर्व निर्धारित नेतृत्व होता है। नेता का कोई गुण नहीं होने पर भीड़ में कोई व्यक्ति मात्र संयोगवश नेता बन जाता है लेकिन श्रोतागण का नेता प्रायः योग्य एवं अनुभवी व्यक्ति होता है।

टिप्पणी

- भीड़ के सदस्यों के विचार, भाव एवं संवेग में काफी अस्थिरता होती है। भीड़ एक क्षण जिस व्यक्ति को नेता समझती है दूसरे क्षण उसी व्यक्ति को अपने क्रोध का शिकार भी बना लेती है। श्रोतागण के सदस्यों के विचार, भाव एवं संवेग में इतनी अस्थिरता नहीं होती है।
- भीड़ के मुख्य विषय के प्रति सदस्यों का ध्यान बनाकर रखने का कोई प्रयत्न नहीं किया जाता है और न तो भीड़ के सदस्यों के बीच के संबंध को समूचित बनाए रखने का कोई उपाय ही किया जाता है। श्रोतागण के सदस्यों का ध्यान मुख्य विषय की ओर बना रहे, इसका उचित प्रबंध किया जाता है।
- भीड़ के सदस्यों में शारीरिक संपर्क अधिक होता है। इसके सदस्यों में कंधे–से–कंधे का सम्बन्ध अधिक होता है। श्रोतागण के सदस्यों में इतना अधिक शारीरिक संपर्क नहीं होता है। वे एक–दूसरे से शारीरिक रूप से निकट बैठे या खड़े हो सकते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

3. "भीड़ ऐसे मनुष्यों का शारीरिक रूप से घनिष्ठ संगठन है जिनमें परस्पर, प्रत्यक्ष, अस्थायी तथा असंगठित संबंध स्थापित हो।" यह परिभाषा किसने दी?

   (क) किम्बल यंग (ख) थाउलेस

   (ग) मैकाइवर (घ) कैंट्रिल

4. किंबल यंग के अनुसार श्रोतागण के कितने प्रकार हैं?

   (क) दो (ख) तीन

   (ग) चार (घ) पांच

4.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (ख)
3. (ग)
4. (ख)

4.5 सारांश

सामूहिक परिस्थिति में व्यक्तियों के 'एक साथ' सम्मिलित आचरण या क्रिया को सामूहिक व्यवहार कहते हैं। विस्तृत अर्थ में जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक–दूसरे को प्रभावित करते हुए क्रिया करते हैं तो उसे सामूहिक क्रिया या व्यवहार कहते है।

सामूहिक व्यवहार सदैव ही एकाधिक व्यक्तियों का व्यवहार होता है अर्थात इसमें व्यवहार करने वाले व्यक्तियों की संख्या एक से अधिक होती है। यह समूह छोटे अथवा बड़े आकर का हो सकता है।

टिप्पणी

सामान्यतः जब सामूहिक व्यवहार हेतु एकाधिक व्यक्ति एक स्थान पर एकत्रित होते हैं तो उसे हम संकलन या एकत्रीकरण कहते हैं। यह एकत्रीकरण आकस्मिक और औपचारिक दोनों रूपों में हो सकता है।

सामूहिक व्यवहार सदैव अस्थायी प्रकृति का होता है। परन्तु इसके कुछ स्वरुप जैसे धुन अथवा सनक कुछ महीनों या वर्षों तक चल सकते हैं क्योंकि सामूहिक व्यवहार में अधिकांश लक्ष्य अनियोजित एवं सहज रूप में विकसित होते हैं, इसलिए सामूहिक व्यवहार कभी भी अप्रत्याशित रूप ले सकता है।

सामाजिक आन्दोलन भी एक प्रकार का सामाजिक व्यवहार है जो सामूहिक क्रिया से मिलता–जुलता है। अर्थात यह भी एक प्रकार का सामूहिक व्यवहार ही है।

समूहन सिद्धांत का प्रतिपादन गुस्ताव लिबॉन (Gustava Lebon, 1986) ने किया है। भीड़ की प्रकृति को देखने से स्पष्ट होता है कि भीड़ में व्यक्ति का व्यवहार सामान्य जीवन में किए गए व्यवहार से सर्वथा भिन्न होता है।

सामाजिक प्रोत्साहन के सिद्धांत का प्रतिपादन आलपोर्ट ने सन 1957 में किया। इस सिद्धांत के अनुसार भीड़ व्यवहार तथा वैयक्तिक व्यवहार में कोई मौलिक अंतर नहीं होता है। व्यक्ति भीड़ में भी वैसा ही व्यवहार करता है जैसा कि वह अकेले में करता है।

सामूहिक व्यवहार का परिणाम सहिष्णुता के संतुलन में होता है। सामूहिक व्यवहार में व्यक्ति भिन्न–भिन्न प्रतिक्रिया करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी प्रकृति के अनुसार व्यवहार करता है।

भीड़ एक ऐसा अस्थायी निकटस्थ समूह है जो पूर्णतः प्रवेश्य सीमा से संगठित होता है तथा जो किसी सामान्य अभिरुचि के फलस्वरूप स्वतः उत्पन्न होता है।

भीड़ में व्यक्तियों का संग्रह होता है जिसमें व्यक्तियों की संख्या अच्छी खासी होती है। किम्बल यंग ने अपनी परिभाषा में इस पक्ष पर बल दिया है। भीड़ में व्यक्तियों का संग्रह अस्थायी होता है। यही कारण है कि व्यक्तियों का यह संग्रह स्थायी हो जाता है, तो इसे फिर भीड़ न कहकर संघ या समिति कहा जाएगा।

समाज उन मानवीय सामाजिक अंतःसंबंधों का सम्पूर्ण क्षेत्र है जो एक समुदाय के व्यक्तियों के बीच पाया जाता है, और जो उन्हें एक व्यवस्था के अंतर्गत संगठित, नियंत्रित और स्थिर रखता है। समाज की इस परिभाषा से ही भीड़ और समाज में भेद स्पष्ट हो जाता है।

श्रोता भी एक तरह की भीड़ है। यह एक औपचारिक भीड़ होती है जो एक खास नियम, प्रथा के आधार पर संचालित होती है। एक समूह का एक निश्चित उद्देश्य होता है। इस तरह की भीड़ में विचारों की प्रधानता रहती है।

भीड़ व्यक्तियों का तात्कालिक संग्रह है जबकि श्रोतागण व्यक्तियों का एक संथागत समूह है। भीड़ की कार्यप्रणाली एवं स्थिरता के सम्बन्ध में कोई निश्चितता नहीं होती है जबकि श्रोतागण की कार्यप्रणाली एवं स्थिरता के सम्बन्ध में एक निश्चितता होती है।

टिप्पणी

भीड़ का निर्माण प्रायः कुछ आकस्मिक घटनाओं के कारण होता है। इसके सदस्य को यह पता नहीं होता है कि उन्हें कहां एकत्रित होना है तथा उन्हें कौन–सी भूमिका करनी है। श्रोतागण के साथ ऐसी बात नहीं है। इसके सदस्यों को यह पहले से पता होता है कि उन्हें कहां एकत्रित होना है तथा उनकी भूमिका क्या होगी।

4.6 मुख्य शब्दावली

- **परिपक्व** – पूर्णता
- **श्रोता** – सुनने वाला
- **आकस्मिक** – अचानक
- **अवहेलना** – निर्देश न मानना
- **अभिकरण** – एजेंसी
- **क्रियान्वयन** – कार्य का समापन
- **उत्तरदायित्व** – जिम्मेदारी
- **वितरण** – बांटना
- **पलायन** – छोड़ना

4.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. सामूहिक व्यवहार किसे कहते हैं?
2. सामूहिक व्यवहार के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
3. जनता का अर्थ क्या है?
4. भीड़ को परिभाषित कीजिए।
5. श्रोता की दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. सामूहिक व्यवहार से आप क्या समझते हैं। विस्तार से उल्लेख कीजिए।
2. सामूहिक व्यवहार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. सामूहिक व्यवहार के प्रमुख सिद्धांतों का विश्लेषण कीजिए।
4. भीड़ व्यवहार का वर्णन करते हुए इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
5. समाज और भीड़ में अंतर स्पष्ट कीजिए।

4.8 सहायक पाठ्य सामग्री

टिप्पणी

1. सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2000), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
2. सुलेमान, डॉ. मुहम्मद, (2005), उच्चतर समाज मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
3. बैरन, आर, ए., एवं ब्रेन्स्कोम्ब, एन. आर. (2016). सोशल साइकोलॉजी, बोस्टनः पियर्सन/अलीन एवं बेकन
4. कसिन, एस.,फैन, एस., एवं मार्कस, एच. आर (2017). सोशल साइकोलॉजी, सेनगेज लर्निंग
5. एस. आर. जयसवाल : एजुकेशनल साइकोलॉजी (एलायड पब्लिशर्स–हिंदी वर्जन)।
6. एस. एस. माथुर : एजुकेशनल साइकोलॉजी (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–हिंदी वर्जन)।
7. शिक्षा मनोविज्ञान : पी.डी. पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
8. शिक्षा मनोविज्ञान : अरुण कुमार सिंह, (भारती भवन)।
9. एस.पी. गुप्ता,उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

इकाई 5 जनसंचार : उपयोग, दुरुपयोग, प्रेरक और प्रचारात्मक

टिप्पणी

संरचना

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 जनसंचार : परिचय, महत्व एवं परिभाषा
  5.2.1 परिचय
  5.2.2 संचार का महत्व
  5.2.3 परिभाषा
5.3 संचार के प्रारूप
5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.5 सारांश
5.6 मुख्य शब्दावली
5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

संचार करना मनुष्य की प्रकृति है। संचार मानव संबंध की बुनियाद होती है। मनुष्य के अस्तित्व में आने के साथ ही संचार की आवश्यकता महसूस की जाती है। संचार मानव–उत्पत्ति के प्रारंभ से चली आ रही एक अनवरत प्रक्रिया है। मनुष्य अपने मनोभावों, विचारों और संस्कृति का आदान–प्रदान मौखिक संचार या विभिन्न संकेतों के जरिये दूसरे मनुष्यों के साथ करता है। संचार में ध्वनियों, भाषा एवं चित्रों का काफी महत्व रहा है। समाज में मनुष्य के बने रहने और सामाजिकता बनाए रखने में संचार का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

प्रस्तुत इकाई में हम जनसंचार, इसकी परिभाषा, इसके महत्व, प्रारूप आदि का अध्ययन करेंगे।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- संचार की अवधारणा एवं परिभाषा से अवगत हो पाएंगे;
- संचार के तत्व और उसके महत्व को समझ पाएंगे;
- संचार के प्रारूप और उसके विभिन्न तथ्यों को जान पाएंगे।

5.2 जनसंचार : परिचय, महत्व एवं परिभाषा

जनसंचार में संचार शब्द संस्कृत की 'चर्' धातु से निकला है, जिसका अर्थ चलना या संचरण करना है। अंग्रेजी में इसके लिए कम्युनिकेशन शब्द चलता है। संचार के साथ

'जन' शब्द जुड़ने से 'जनसंचार' शब्द बनता है। 'जन' का अर्थ भीड़, समूह तथा जन समुदाय से है। मनुष्य के सन्दर्भ में 'जन' का अर्थ है बड़ी संख्या में एकत्र लोग। यदि 'जन' शब्द को संचार का विशेषण मानें तो इसका अर्थ होगा, 'बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करना या सम्मिलित करना। अर्थात् जब संचार की प्रक्रिया या संदेशों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया बड़े पैमाने पर होती है तो वह जनसंचार कहलाता है।

संचार को अंग्रेजी में कम्युनिकेशन (Communication) कहा जाता है जो लैटिन भाषा के कम्युनिस (Communis) से बना है और इसका अर्थ होता है आपस में बांटना या देना। इसका एक और अर्थ होता है to transmit यानी एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजना। जब दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से विचारों या भावनाओं का आदान–प्रदान करते हैं तो उसे संचार कहते हैं।

संचार एक आधुनिक विषय है और इसका संबंध मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र आदि विषयों से है।

किसी भी सूचना, विचार या भाव को दूसरों तक पहुंचाना ही मोटे तौर पर संचार या कम्युनिकेशन कहलाता है। एक साथ लाखों–करोड़ों लोगों तक एक सूचना को पहुंचाना ही संचार या जनसंचार या मास कम्युनिकेशन मीडिया कहलाता है। मानव सभ्यता के विकास में संचार की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वैसे तो सभ्यता के विकास के साथ ही मनुष्य किसी न किसी रूप में संचार करता रहा है।

संचार अंतर्वैयक्तिक अंतःक्रिया की एक प्रक्रिया है जिसमें प्रेषक और ग्राही के मध्य विचारों, भावनाओं और समझ का आदान–प्रदान होता है। संचार की यह परिभाषा बताती है कि संचार में संदेशों का सम्प्रेषण और ग्राह्यता शामिल है। संचार में कम से कम दो लोगों को शामिल किया जाता है। सन्देश का सम्प्रेषण करने के लिए (प्रेषक) और दूसरा सन्देश को ग्रहण करने के लिए (रिसीवर)। संचार को सबसे बेहतर एक प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया जाता है क्योंकि यह सक्रिय, निरंतर, पारस्परिक और गतिशील है।

सूचना, विचारों तथा अभिवृतियों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक सम्प्रेषित करने की कला का ही नाम संचार है। संचार के कारण ही कोई सूचना दूसरे लोगों तक तथा दूसरी पीढ़ी तक पहुंचती है। संचार को संभव बनाने में संचार करने की मनुष्य की क्षमता और संचार के साधन महत्वपूर्ण तत्व हैं। संचार किसी भी प्राणी के लिए उतना ही आवश्यक है जितना स्वयं जीवन। संचार वह है जिसके जरिये अनगिनत तरीकों से मनुष्य एक–दूसरे से संपर्क में आता है।

संचार का अर्थ सिर्फ व्यक्ति का अपना हाल–समाचार दूसरों तक पहुंचाने तक सीमित नहीं है। हर व्यक्ति अपने या अपने संबंधियों की सूचनाएं जानने के अलावा देश–दुनिया की खबरों के बारे में जानने का इच्छुक होता है। उसके आस–पास क्या हो रहा है, दुनिया में कहां क्या घटना घट रही है, सबकी जानकारी प्राप्त करना चाहता है। सूचनाओं की इसी भूख के चलते संचार माध्यमों का लगातार विकास और विस्तार होता गया।

अब संचार की बढ़ती जरूरतों को देखते हुए तरह–तरह के संचार माध्यमों का विकास कर लिया गया है। जल्दी–से–जल्दी सूचनाएं पहुंचाने की दुनिया भर में होड़ लगी हुई है। पहले निर्धारित समय पर और एक निश्चित समय के लिए समाचारों का प्रसारण हुआ करता था, अब चौबीसों घंटे देश दुनिया की खबरों के प्रसारण लगातार दूरदर्शन के चैनलों में चलते रहते हैं।

संचार प्रक्रिया के तथ्य

संचार प्रक्रिया के महत्वपूर्ण तथ्य निम्न हैं–

- संचार एक अर्थगत प्रक्रिया है, जो चिह्नों और संकेतों पर आधारित है।
- संचार एक स्नायु–जैविक प्रक्रिया है। विभिन्न संकेतों और चिह्नों का अर्थ मनुष्य के स्नायुतंत्र में रिकार्ड होता है।
- संचार एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। मनुष्य सीखने के क्रम में विभिन्न संकेतों और चिह्नों का अर्थ ग्रहण करता है। ये अर्थ ही सन्देश ग्रहण करने और प्रत्युत्तर देने में केन्द्रीय भूमिका निभाते हैं।
- संचार एक सांस्कृतिक प्रक्रिया है, क्योंकि यह भाषा पर आधारित है, जबकि भाषा मनुष्य की सांस्कृतिक परंपरा का अंग है।
- संचार एक सामाजिक प्रक्रिया है, क्योंकि संचार ही वह प्रमुख साधन है, जिससे मनुष्य समाज के साथ अंतःक्रिया करता है।

संचार प्रक्रिया के छह तत्व हैं– संचारक (Sender), सन्देश (Message), माध्यम (Channel), प्राप्तकर्ता (Receiver), फीडबैक (Feedback) और बाधा (Noise)।

संचारक (Sender): संचारक की भूमिका किसी भी संचार–प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती है। संचारक ही किसी संदेश का स्रोत होता है, वही उसका प्रेषक है। संचारक वह है, जो संचार–प्रक्रिया का आरम्भ करता है। इसके लिए कम्यूनिकेटर, सेंडर, सोर्स, एनकोडर आदि शब्दों का उपयोग किया जाता है।

सन्देश (Message): किसी संचारक द्वारा किसी संचार–प्रक्रिया के अंतर्गत किसी भी माध्यम से जिन सूचनाओं, विचारों एवं अभिवृतियों का संचार किया जाता है, उन्हें सन्देश कहा जाता है। इसे संचारक मौखिक या अमौखिक तरीके से, शब्दों से या चित्रों के जरिये या फिर संकेत द्वारा प्रापक के पास संप्रेषित करता है। जनसंचार की भाषा में इसे कंटेंट्स या अंतर्वस्तु कहा जाता है।

माध्यम (Channel): कोई सन्देश किस तरह के कितने श्रोताओं तक, किस गति से तथा किस रूप में पहुंचेगा, कितना प्रभावोत्पादक होगा, ऐसी समस्त बातें उसके माध्यम पर निर्भर करती हैं। संचार के माध्यमों में अंतरवैयक्तिक संचार के दौरान अगर कोई यांत्रिक चीज मौजूद नहीं होती, तो जनसंचार के लिए प्रिंट मीडिया, रेडियो, टीवी, आदि माध्यमों की आवश्यकता होती है। किसी भी सन्देश की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि माध्यम का चुनाव सही है या नहीं। भिन्न–भिन्न आवश्यकताओं के लिए भिन्न–भिन्न माध्यम का उपयोग किया जाता है।

टिप्पणी

प्राप्तकर्ता (Receiver): किसी भी संचार–प्रक्रिया में जिस व्यक्ति या जिन व्यक्तियों को लक्ष्य करके कोई भी सन्देश निर्मित एवं संप्रेषित किया जाता है, वह प्राप्तकर्ता है। इसे रिसीवर, डेस्टिनेशन, डिकोडर, गंतव्य आदि कहा जाता है।

फीडबैक (Feedback): बेहतर संचार के लिए फीडबैक जरूरी है और वह है प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश पर प्रतिक्रिया जाहिर करना। कई बार संचारकर्ता को खुद भी फीडबैक मिलता जाता है।

बाधा (Noise): संचार में बाधा वह है जो सन्देश को विकृत करे, सन्देश के अर्थ को बिगाड़ दे, बदल दे या सही प्रस्तुति न होने दे। बाधा कई तरह की होती है। वह शारीरिक बाधा हो सकती है, जैसे जो बात कही जा रही है, वह सुनाई न पड़े। उच्चारण के तरीके में गड़बड़ी के कारण गलत अर्थ निकल जाए। कम रोशनी के कारण सही पढ़ना न हो पाए। खराब प्रिंट क्वालिटी और इसके मनोवैज्ञानिक कारण भी होते हैं, जैसे प्राप्तकर्ता का कोई पूर्वाग्रह या पूर्वधारणा हो तो वह सन्देश को उसी अनुरूप नहीं लेगा, गलत लेगा।

5.2.1 परिचय

जनसंचार शब्द का प्रयोग 1930 ई. के दशक के अंतिम दौर में प्रारंभ हुआ। किसी यंत्र या जनमाध्यम के जरिये जब संदेश को एक बहुत बड़े मिश्रित जनसमूह तक भेजा जाए, तो वह जनसंचार है। जैसे, रेडियो, टीवी, अखबार, पुस्तक आदि। जनसंचार माध्यमों के जरिये समूह–संचार का ही एक विस्तार है। सामान्य तौर पर जनसंचार और जनमाध्यम को एक ही समझा जाता है, लेकिन जनसंचार एक प्रक्रिया है, जबकि जनमाध्यम इसका साधन है।

जनसंचार ने 'समय' और 'सीमा' को समाप्त कर दिया है। मार्शल मैक्लुहान ने जनसंचार के व्यापक स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए 'विश्व गांव' के कांसेप्ट को सामने रखा था। इसके कारण विश्व की सीमा सिमटकर रह गई है। इंटरनेट, मोबाइल, फैक्स, संचार उपग्रह, केबल टेलीविजन, कंप्यूटर, मोबाइल आदि ने पूरे विश्व को एक कमरे में समेटकर सूचना को सहज उपलब्ध करा दिया है।

डेनिस मैक्वेल के अनुसार, आधुनिक समाज में जनमाध्यमों का महत्व बढ़ता जा रहा है जिसके प्रमुख कारण हैं, शक्ति संसाधन, मंच, स्पष्टता एवं प्रतिबिम्ब, प्रसिद्धि, व्यवस्था–निर्माण और मनोरंजन।

शक्ति संसाधन : जनमाध्यम किसी भी समाज में प्रभाव, नियंत्रण एवं नवाचार का सक्षम माध्यम है। यह विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के कार्यों के लिए आवश्यक सूचनाओं का स्रोत तथा उनके प्रसार का प्रमुख साधन है।

मंच : जनमाध्यम ऐसे मंच की भूमिका निभाता है, जहां राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न प्रकार की सार्वजनिक क्रियाएं संपन्न होती हैं।

स्पष्टता एवं प्रतिबिंब : सामाजिक वास्तविकताओं की स्पष्टता एवं व्याख्या करने तथा उन्हें प्रतिबिंबित करने में जनमाध्यम प्रमुख भूमिका निभाता है। साथ ही, सामाजिक मूल्यों एवं संस्कृति में परिवर्तन को स्पष्ट रूप से दर्शाने, संभव बनाने एवं उसके संग्रह का भी कार्य करता है।

टिप्पणी

प्रसिद्धि : यह सार्वजानिक क्षेत्र में प्रभावोत्पादक प्रदर्शन करने, प्रसिद्धि तथा सेलिब्रिटी हैसियत प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

व्यवस्था–निर्माण : समाज में सार्वजनिक–व्यवस्था बनाने और विभिन्न संदर्भों को सार्वजनिक अर्थ प्रदान करने में जनमाध्यम की प्रमख भूमिका है। वह बताता है कि 'सामान्य' का मतलब क्या है तथा विकृतियों की ओर इशारा करता है।

मनोरंजन : फुर्सत के क्षणों का महत्वपूर्ण साधन मनोरंजन है।

जानोविच के अनुसार, जनसंचार ऐसी संस्थाओं एवं प्रतीकों का समुच्चय है, जिसमें विशेषज्ञों द्वारा तकनीकी उपकरणों, मसलन प्रेस, रेडियो, फिल्म वैगरह का इस्तेमाल करके कोई सांकेतिक सन्देश, विशाल, बहुआयामी तथा दूर–दूर तक बिखरे श्रोताओं तक पहुंचाया जाता है।

बार्कर के अनुसार, जनसंचार श्रोताओं के लिए अपेक्षाकृत कम खर्च में पुनः उत्पादन तथा वितरण के विभिन्न साधनों का इस्तेमाल करके किसी सन्देश को व्यापक लोगों तक, दूर–दूर तक फैले हुए श्रोता तक रेडियो, टीवी, अखबार जैसे किसी चैनल द्वारा पहुंचाया जाता है।

हेड के अनुसार, जनसंचार के पांच पहलू हैं–

- विभिन्न श्रोता समूह
- विभिन्न प्रकार के श्रोता
- किसी सन्देश की पुनर्रचना
- तीव्र वितरण
- उपभोक्ता के लिए सस्ता।

संचार की विशेषताएं

संचार की विशेषताएं इस प्रकार हैं–

- अपेक्षाकृत व्यापक, विविध, बिखरे हुए श्रोता के लिए संदेश का सीधा प्रसारण।
- सन्देश का सार्वजानिक प्रसारण, जिसमें गोपनीयता संभव नहीं।
- श्रोता तक पहुंचने का समय सामान्यतः निश्चित।
- फीडबैक–अप्रत्यक्ष तथा देर से, बेहद कम।
- प्रतिश्रोता के अनुपात में खर्च बेहद कम।
- आमतौर पर एकतरफा संचार।
- मीडिया इसमें अपनी जरूरत के मुताबिक श्रोता का चुनाव करता है, जैसे शिक्षितों के लिए अखबार।
- श्रोता अपनी जरूरत के मुताबिक मीडिया का चुनाव करता है, जैसे गरीब और अशिक्षित लोग रेडियो का।
- इसमें संचार समाज के प्रति जिम्मेदार लोगों द्वारा किया जाता है।
- यह आधुनिक समाज की अनिवार्य जरुरत बन चुका है।

टिप्पणी

• जनसंचार–माध्यमों के स्तर से पता चल सकता है कि किसी देश या समाज के विकास का क्या स्तर है।

संचार के मुख्य उपघटक हैं–

- स्रोत,
- चयनित सूचना,
- संप्रेषक,
- सन्देश,
- संचार साधन,
- संचार माध्यम,
- श्रोता,
- सूचना पुनर्प्रेषण,
- मंजिल
- फीडबैक

आधुनिक समय में संचार का प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है, जैसे, ज्ञापन, पत्र, फैक्स, ई–मेल, सूचना, सारांश, प्रतिवेदन, दूरभाष, साक्षात्कार, रेडियो, टीवी, वीडियो कांफ्रेसिंग आदि।

संचार के मुख्य कार्य हैं–

- सूचना व जानकारी देना
- समाजीकरण
- प्रेरणा
- वाद–विवाद और परिचर्चा
- शिक्षा
- सांस्कृतिक विकास
- मनोरंजन
- एकीकरण
- राजनीति संबंधी कार्य
- विकास संबंधी कार्य

हेराल्ड लासवेल के अनुसार संचार के तीन कार्य हैं–

- वातावरण पर तीक्ष्ण नजर डालना।
- समाज पर असर डालनेवाले विभिन्न कारकों के बीच सह–संबंध बनाना।
- सामाजिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी तक पहुंचाना।

विलबर श्राम के अनुसार संचार के चार कार्य हैं–

संचारकर्ता के कार्य	प्राप्तकर्ता के कार्य
सूचित करना	समझना
सिखाना	सीखना
प्रसन्न करना	आनंद लेना
प्रेरणा देना	प्रेरित करना

इस तरह विलबर श्राम ने संचार के चार कार्य बताए हैं–

सूचना, शिक्षा, मनोरंजन एवं प्रेरणा।

जॉन वेंडमार्क तथा पामेला लेथ के अनुसार, लोग कई कारणों से संचार करते हैं, लेकिन मूलतौर पर दो कारण महत्वपूर्ण हैं–

(i) संचार वातावरण को अनुकूल बनाने में मदद करता है।

(ii) मनुष्य अपनी पहचान स्थापित करने तथा आत्मसंतुष्टि के लिए संचार का उपयोग करता है। इसमें व्यक्ति की पहचान और इच्छा महत्वपूर्ण है।

संचार प्रक्रिया को चार मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है–

प्रथम चरणः प्रेषक संदेश को कूटसंकेत करता है एवं भेजने के लिए उपयुक्त माध्यम का चयन करता है। प्रेषित किए जाने वाला संदेश मौखिक, अमौखिक या लिखित रूप में होता है।

द्वितीय चरण : प्रेषक दूसरे चरण में संदेश भेजता है तथा यह प्रयास करता है कि संदेश प्रेषित करते वक्त किसी प्रकार का व्यवधान न उत्पन्न हो और प्राप्तकर्ता बिना किसी व्यवधान के सन्देश को समझ सके।

तृतीय चरण : प्राप्तकर्ता प्राप्त संदेश का अर्थ निरूपण करता है तथा आवश्यकता के अनुसार उसकी प्रतिपुष्टि करने का प्रयास करता है।

चतुर्थ चरण : प्रतिपुष्टि चरण में प्राप्तकर्ता प्राप्त संदेश का अर्थनिरूपण करने के पश्चात् प्रेषक के पास प्रतिपुष्टि करता है।

संचार की प्रक्रिया

संचार की प्रक्रिया के संबंध में तीन धारणाएं प्रचलित हैं–

(i) पहली धारणा : संचार एक सरल रेखीय है। इसके तहत संचार को सरल रेखा में बढ़ता हुआ माना जाता था। यानी 'क' कोई सन्देश भेज रहा है जिसे 'ख' ग्रहण कर रहा है।

(ii) दूसरी धारणा : संचार एक अन्तःक्रिया के तौर पर कार्य करता है। इसकी अवधारणा यह है कि संचार सरल रेखा में नहीं होता, बल्कि संचार का मतलब सेंडर तथा रिसीवर के बीच की अन्तःक्रिया है।

(iii) तीसरी धारणा : संचार परस्पर आदान–प्रदान के लिए है। इसके अनुसार संचार सिर्फ अंतःक्रिया नहीं, बल्कि परस्पर आदान–प्रदान है। ऐसा नहीं होता कि 'क' बोले तो 'ख' चुपचाप सुने और 'ख' बोले तो 'क' चुपचाप सुने। जी

टिप्पणी

हां 'क' बोलना शुरू करता है तो 'ख' से उसे प्रतिक्रिया मिलने लगती है।

सूचनाओं और विचारों के आदान–प्रदान में शाब्दिक, अशाब्दिक, शारीरिक और तकनीक आदि के प्रयोग के जरिये संचार में जो गतिशीलता आती है, परिस्थिति के अनुसार परिवर्तनशीलता आती है, उसे 'संचार की प्रकृति' कहा जाता है। संचार औपचारिक, अनौपचारिक, मौखिक या गैर–मौखिक तरह के हो सकते हैं।

(i) गतिशीलता : विचारों और सूचनाओं का आदान–प्रदान संचार प्रक्रिया का हिस्सा है। सूचना आ आदान–प्रदान निरंतर होता रहता है। इसलिए संचार की प्रकृति गतिशील है।

(ii) संचार कौशलता : कुशलता संचार की प्रकृति है और इसके तहत श्रवण कौशल, वादन कौशल, लेखन कौशल और पठन कौशल समाहित हैं।

(iii) सर्व–व्यापकता : संचार में सर्व–व्यापकता के गुण विद्यमान हैं। यही कारण है कि किसी भी कार्यालय में निम्न स्तर के कर्मचारी की सूचना उच्च स्तर के अधिकारी तक पहुंचती है और वे जो निर्णय लेते हैं, वे सूचनाएं पहले मध्य स्तर से होते हुए फिर निम्न स्तर तक के कर्मचारियों तक पहुंचती हैं।

(iv) द्विमार्गीय सम्प्रेषण : संचार के तहत द्विमार्गीय सम्प्रेषण को सबसे अच्छा माना जाता है, यानी प्रतिपुष्टि संचार का सही अंग माना जाता है।

(v) संदर्भित : संचार हमेशा संदर्भित होता है और यह किसी घटना या विषय पर आधारित होते हैं। संचार के सन्दर्भ भौतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सामायिक होते हैं।

(vi) समरूपता और अनुपूरकता : समरूपता संचार की समानता का बोध कराती है, वहीं अनुपूरकता विशेषताओं में मतभेद करने में सक्षम है।

(vii) सामान्य भाषा : संचार की भाषा सन्देश के प्रेषक और गृहीता के बीच समझ विकसित करती है। सामान्य भाषा में किया गया संचार काफी प्रभावी होता है।

(viii) भाव–प्रदर्शन : संचार में संकेत या भाव–प्रदर्शन काफी अहमियत रखता है। संचार करने के लिए आवश्यक नहीं है कि इसमें मौखिक और लिखित शब्दों का ही प्रयोग किया जाए। यह शारीरिक हाव–भाव के जरिये भी किया जाता है।

5.2.2 संचार का महत्व

संचार एक द्वि–मार्गीय प्रक्रिया है और इसके जरिये विचारों का आदान–प्रदान होता है। बिना संचार के मानवीय संसाधनों को गतिमान किया जाना असंभव है। संचार को प्रेषित करने के अनेक माध्यम हैं। विश्व की सभी समस्याओं का कारण और समाधान संचार होता है। संचार सभी समूह गतिविधि की नींव है। संचार के बिना किसी भी तरह की अंतर–व्यक्तिगत गतिविधि की कल्पना करना मुश्किल है। संचार को तभी सफल माना जा सकता है जब प्रेषित सन्देश को प्राप्तकर्ता अर्थनिरूपण कर उसकी प्रतिपुष्टि करे। मानवीय जीवन के विभिन्न पहलुओं में संचार का अत्यधिक महत्व है। संचार को व्यावहारिक तत्व भी माना जा सकता है

टिप्पणी

क्योंकि एक व्यक्ति का व्यवहार दूसरे व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। प्रशासन एवं संगठन में संचार केन्द्रीय स्तर पर रहता है, जो मानवीय एवं संगठन की गतिविधियां संचालित करता है।

संचार के महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं से समझा जा सकता है–

समन्वय के आधार के रूप में कार्य करता है : संचार संगठनात्मक लक्ष्यों, उन्हें प्राप्त करने के तरीकों, व्यक्तियों के बीच पारस्परिक संबंध, आदि के बारे में पूरी जानकारी प्रदान करके संगठन में विभिन्न विभागों और व्यक्तियों की गतिविधियों के समन्वय में मदद करता है। समन्वय एक समूह द्वारा किए जाने वाले प्रयासों को एक निश्चित दिशा प्रदान करने के लिए आवश्यक होता है। न्यूमैन के अनुसार, अच्छा संचार समन्वय में सहायक होता है। इसलिए, संचार समन्वय के लिए एक आधार के रूप में कार्य करता है।

संस्थानों में सुचारू कार्य में मदद करता है : संचार सुचारू कामकाज को सुनिश्चित करता है। एक संगठन का अस्तित्व पूरी तरह से संचार पर निर्भर करता है। यदि संचार बंद हो जाता है तो किसी संगठन की गतिविधियों में गतिरोध आ जाएगा। अधिकारों एवं दायित्वों का निर्धारण एवं प्रयोजन करना और कर्मचारियों को उनसे अवगत कराना संगठन के क्षेत्र में आते हैं।

निर्णय लेने के आधार के रूप में कार्य करता है : संचार सभी आवश्यक जानकारी प्रदान करके निर्णय लेने की प्रक्रिया में मदद करता है। प्रासंगिक जानकारी के संचार के अभाव में, कोई भी सार्थक निर्णय नहीं ले सकता है।

प्रबंधकीय क्षमता बढ़ाता है : प्रबंधक के विभिन्न कार्यों में शामिल हैं, किसी उद्यम के लक्ष्यों और उद्देश्यों के बारे में जानकारी प्रदान करना, निर्देश प्रदान करना, सामाजिक प्रबंधन के साथ ही नौकरी और जिम्मेदारियों का आवंटन और कामगारों के काम की देखरेख करना। इन सभी कार्यों में संचार शामिल है। प्रबंधकीय कार्यों के प्रभावी प्रदर्शन के लिए संचार आवश्यक है।

सहयोग और औद्योगिक शांति को बढ़ावा देता है : एक सामाजिक संगठन के सुचारू और कुशल कामकाज को सुनिश्चित करना सामाजिक प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य है। यह तभी संभव है जब समाज प्रबंधन और सदस्यों के बीच शांति और सद्भाव हो। दो–तरफा संचार उसी को स्थापित करने में मदद करता है।

प्रभावी नेतृत्व स्थापित करता है : एक अच्छे नेता के पास अधीनस्थों के व्यवहार को प्रभावित करने के लिए कुशल संचार कौशल होना चाहिए। इस प्रकार, संचार नेतृत्व का आधार है।

मनोबल को बढ़ावा देता है और प्रेरणा प्रदान करता है : एक कुशल संचार प्रणाली अधीनस्थों को प्रेरित और संतुष्ट करने में मदद करती है।

इसके अलावा, यह एक सहभागी और लोकतांत्रिक प्रकार के प्रबंधन को स्थापित करने में भी मदद करता है।

किसी भी समाज और व्यावसायिक संगठन में संचार का कार्य जिन साधनों से होता है उन्हें माध्यम या मीडिया कहते हैं।

संचार के चरण

संचार के कई चरण हैं जैसे–

एक–चरणीय संचार (One Step Flow) : इसे बुलेट थ्योरी के रूप में जाना जाता है। शक्तिशाली प्रभाव का सिद्धांत या हाइपोडरमिक निडल थ्योरी जैसे रूपों में भी इसकी व्याख्या की गई है। इसके अनुसार जनसंचार माध्यम इतने ज्यादा प्रभावी होते हैं कि वे लोगों के विचारों को अपनी इच्छानुसार बदल सकते हैं। मतदाताओं के निर्णय करने की क्षमता को भी बदल सकते हैं। यह सेंडर–रिसीवर मॉडल पर आधारित है। इसके अनुसार, सेंडर के भेजने पर रिसीवर बिना किसी प्रतिक्रिया के उसे तत्काल ग्रहण करता है। बुलेट थ्योरी के तहत माना जाता है कि लोग निष्क्रिय होते हैं, उनके पास अपनी समझ नहीं होती है, वे मीडिया द्वारा परोसी गई सूचनाओं को बिना सोचे–विचारे, बिना शर्त ग्रहण कर लेते हैं। वहीं, हाइपोडरमिक नीडल थ्योरी या मैजिक बुलेट के तहत माना जाता है कि किसी उद्देश्य के तहत दिया गया सन्देश सीधे रिसीवर तक पहुंचता है और वह उसे पूरी तरह ग्रहण भी कर लेता है। यह कहता है कि किसी रणनीति व योजना के तहत लक्षित समूह तक सीधा पहुंचाकर उस पर मनचाहा प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयास किया जाता है।

द्वि–चरणीय संचार (Two Step Flow) : इसके साथ ओपिनियन लीडर की अवधारणा जुड़ी है। इसमें संदेश और जनसंचार माध्यमों के प्रत्यक्ष प्रभाव के बजाय मानवीय कारकों पर जोर दिया गया है। द्वि–चरणीय संचार के तहत विचारों एवं सूचनाओं का प्रसार दो चरणों में होता है। पहला है– जनसंचार में ओपिनियन लीडर तक, दूसरा है– ओपिनियन लीडर से व्यापक जनता तक। ओपिनियन लीडर का आशय उन प्रभावशाली व्यक्तियों से है, जिनके पास कोई औपचारिक हैसियत या शक्ति नहीं होती। जनमत–निर्माता अपने–अपने विषय एवं क्षेत्र के विशेषज्ञ होते हैं और उन्हीं विषयों अथवा क्षेत्रों में प्रभावी होते हैं। वे मीडिया तथा जनता के बीच एक मध्यस्थ तथा व्याख्याकार की भूमिका निभाते हैं।

बहु–चरणीय संचार (Multi Step Flow) : इसके साथ नवाचार के प्रसार की अवधारणा जुड़ी हुई है। इवर्ट रोजर्स ने 'डिफ्यूजन ऑफ इनोवेशन' नामक पुस्तक में यह अवधारणा रखी। उनके अनुसार किसी भी तरह के नवाचार, नए विचार, नए व्यवहार या उद्देश्य को समाज में व्यापक तौर पर विस्तृत करने की लम्बी प्रक्रिया होती है। इसके तहत इस बात का अध्ययन किया गया कि किसी सन्देश को किस हद तक स्वीकार किया गया। नवाचार के प्रसार की प्रक्रिया वस्तुतः उन नवाचार को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने की ही नहीं, बल्कि समाज में उनके क्रियान्वयन या नकार यानी स्वीकृति या अस्वीकृति के अंतिम चरण तक जाती है।

5.2.3 परिभाषा

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, विचारों, जानकारी वगैरह का विनिमय, किसी और तक पहुंचाना या बांटना, चाहे वह लिखित, मौखिक या सांकेतिक हो, संचार है। चेरी के अनुसार, संचार उत्प्रेरक का आदान–प्रदान है।

टिप्पणी

चार्ल्स ई. ऑसगुड के अनुसार, आम तौर पर संचार तब होता है, जब एक सिस्टम या स्रोत किसी दूसरे या गंतव्य को विभिन्न प्रकार के संकेतों के माध्यम से प्रभावित करें।

विलबर श्राम के मुताबिक, संचार शब्द लैटिन भाषा के communis से आया है जिसका अर्थ है सामान्य। जब हम संचार करते हैं तो हमारी कोशिश किसी सूचना, विचार या अभिवृतियों को आपस में बांटने की होती है।

जोसेफ डिनिटी के अनुसार, "जनसंचार बहुत से व्यक्तियों में एक मशीन के माध्यम से सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को रूपांतरित करने की प्रक्रिया है।"

डी.एस. मेहता कहते हैं, "जनसंचार का अर्थ है जनसंचार माध्यमों – जैसे रेडियो, दूरदर्शन, प्रेस और चलचित्र द्वारा सूचना, विचार और मनोरंजन का प्रचार–प्रसार करना।"

जार्ज ए. मिलर के अनुसार, "जनसंचार का अर्थ सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाना है।"

टीड का कहना है कि जनसंचार का लक्ष्य समान विषयों पर मस्तिष्क को मेल में स्थापित करना है।

लारेंस ए एप्ली के अनुसार, संचार वह प्रक्रिया है, जिससे एक व्यक्ति अपने विचारों से दूसरे को अवगत कराता है।

थियो हेमन का कथन है कि एक व्यक्ति से दूसरे की संरचनाएं एवं समझ हस्तांतरित करने की प्रक्रिया संचार है।

एफ.जी.मेयर के अनुसार, माननीय विचारों और सम्मतियों का शब्दों, पन्नों एवं संदेशों के जरिए आदान–प्रदान संचार है।

लुईस ए. एलेन के अनुसार, संचार उन सभी क्रियाओं का योग है जिनके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे के साथ समझदारी स्थापित करना चाहता है। संचार अर्थों का एक पुल है। इसमें कहने, सुनने और समझने की एक व्यवस्थित तथा नियमित प्रक्रिया शामिल है।

संचार से तात्पर्य उन समस्त तरीकों से है, जिनको एक व्यक्ति अपनी विचारधारा को दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में डालने या समझाने के लिए अपनाता है। यह वास्तव में दो व्यक्तियों के मस्तिष्क के बीच की खाई को पाटने वाला सेतु है। इसके अंतर्गत कहने, सुनने तथा समझने की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया सदैव चालू रहती है।

मैकडेविड और हरारी के अनुसार, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संचार से तात्पर्य व्यक्तियों के बीच विचारों और अभिव्यक्तियों के आदान–प्रदान से है।

कैथ डैविस के अनुसार, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचना भेजने तथा समझने की विधि है। यह आवश्यक तौर पर लोगों में अर्थ का एक पुल है। पुल का प्रयोग करके एक व्यक्ति आराम से गलत समझने की नदी को पार कर सकता है।

क्रच एवं साथियों के अनुसार, किसी वस्तु के विषय में समान या सहभागी ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रतीकों का उपयोग ही संचार है। यद्यपि मनुष्यों में संचार का महत्वपूर्ण माध्यम भाषा ही है, फिर भी अन्य प्रतीकों का प्रयोग हो सकता है।

टिप्पणी

शैनन ने संचार को परिभाषित करते हुए कहा है कि एक मस्तिक का दूसरे मस्तिक पर प्रभाव है।

मिलेन ने संचार को प्रशासनिक दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। आपके अनुसार, संचार प्रशासनिक संगठन की जीवन–रेखा है।

डॉ. श्यामाचरण के शब्दों में, संचार समाजीकरण का प्रमुख माध्यम है। संचार द्वारा सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराएं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचती हैं। समाजीकरण की प्रत्येक स्थिति और उसका हर रूप संचार पर आश्रित है। मनुष्य जैविकीय प्राणी से सामाजिक प्राणी तब बनता है, जब वह संचार द्वारा सांस्कृतिक अभिवृत्तियों, मूल्यों और व्यवहार–प्रकारों को आत्मसात कर लेता है।

वीवर के अनुसार, वे सभी तरीके जिनके द्वारा एक मानव दूसरे को प्रभावित कर सकता है, संचार के अन्तर्गत आते हैं।

न्यूमैन एवं समर के दृष्टिकोण में, संचार दो या दो से अधिक व्यक्तियों के तथ्यों, विचारों तथा भावनाओं का पारस्परिक आदान–प्रदान है।

संचार एक प्रकार की साझेदारी है, जिसमें ज्ञान, विचारों, अनुभूतियों और सूचनाओं का अर्थ समझते हुए पारस्परिक आदान–प्रदान किया जाता है। यह साझेदारी, प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच होती है। संचार में निहित संवाद में प्रभाव और अर्थ होना आवश्यक है।

किसी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति अथवा किसी एक व्यक्ति से कई व्यक्तियों को कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के सम्प्रेषण से सूचना, जानकारी, ज्ञान या मनोभाव का आदान–प्रदान करना संचार है।

संचार मुख्यतः एक सामाजिक प्रक्रिया है। इसके जरिये मनुष्य स्वयं अपनी पहचान स्थापित करते हैं, सामाजिक रिश्ते बनाते हैं।

संचार के प्रकार

संचार के लिए यह बेहद जरूरी है कि संचारकर्ता ने जिस भाषा में अपना संदेश सम्प्रेषित किया है, प्राप्तकर्ता भी उसी भाषा में उसका अर्थ ग्रहण करे। अगर कोडिंग तथा डिकोडिंग की प्रक्रिया समुचित रूप में पूरी नहीं हुई, तो संचार सफल नहीं हो पाएगा।

मनुष्य अपने भावों और विचारों को सम्प्रेषण करने वाला प्राणी है। मनुष्य संचार प्रक्रिया का संचालन स्वयं तथा समाज को केंद्र मानकर करता है। स्वयं में खोना, स्वयं से बात करना, स्वयं से हंसना भी मानवीय संचार का एक स्वरूप है। मनुष्य स्वयं से हटकर परिवार के मध्य भी संचार करता है। परिवार के बाहर भी संचार–प्रक्रिया के द्वारा ही मनुष्य सामाजिक संबंधों का ताना–बाना बुनता है। मनुष्य के सामाजिक संबंध के ताने–बाने का आधार संचार ही है। संचार प्रक्रिया मनुष्य के जीवन में कई स्तरों पर व्यवहार में आती है।

संचार के दो रूप हैं। पहला है मौखिक संचार और दूसरा है गैर–मौखिक संचार। मौखिक संचार को दो रूपों में विभाजित किया जा सकता है, मौखिक और लिखित। संचार के मौखिक रूप में सबसे बुनियादी बोला गया शब्द है। यह तेज और

सटीक भी है और चल रहे संवाद के माध्यम से संदेशों को स्पष्ट किया जा सकता है। संचार के लिखित रूप में पत्र, ज्ञापन, ई–मेल, त्वरित सन्देश, ब्लॉग आदि हैं। दोनों तरह के संचार में यह आवश्यक है कि संचारकर्ता जिस संकेत में जिस प्रकार के अर्थ की कोडिंग करे, प्राप्तकर्ता द्वारा भी उसी अर्थ में उसकी डिकोडिंग करे। भिन्न–भिन्न संस्कृतियों में एक ही संकेत के अलग प्रकार होते हैं।

मौखिक संचार में अनिर्दिष्ट सुराग होते हैं, जो एक संचारक बोले गए या लिखित संदेशों के साथ भेजता है। उदाहरणों में किसी व्यक्ति का स्वर, चेहरे के भाव, आंखों का संपर्क, सिर का इशारा, चलने का तरीका आदि शामिल हो सकते हैं।

मौखिक और गैर–मौखिक संचार अलग–अलग हैं लेकिन दोनों एक ही समय में काम करते हैं। किसी सन्देश का मौखिक भाग सामग्री या सूचना देता है। गैर–मौखिक घटक इंगित करता है कि मौखिक सन्देश की व्याख्या की जानी चाहिए और इस प्रकार यह एक मेटा–संचार है। जब भी मौखिक और गैर–मौखिक संदेश एक–दूसरे के विपरीत होते हैं तो लोगों द्वारा गैर–मौखिक संदेशों पर विश्वास करने की अधिक संभावना होती है।

संचार में शामिल लोगों की संख्या के आधार पर संचार का स्वरूप निर्भर करता है। कोई व्यक्ति किन्हीं दो लोगों के साथ परस्पर संचार के दौरान अन्य किस्म का व्यवहार करता है। संचार की प्रक्रिया में शामिल लोगों, यानी संख्यात्मक लिहाज से संचार के चार प्रकार हैं–

(i) अंतरा–वैयक्तिक,

(ii) अंतर–वैयक्तिक,

(iii) समूह–संचार

(iv) जनसंचार

अंतरा–वैयक्तिक संचार (Intra-Personal Communication) : यह मनुष्य का व्यक्तिगत चिंतन–मनन है। यह स्वयं मनुष्य के भीतर का संचार है। यह मनुष्य की भावना, स्मरण, चिंतन या उलझन के रूप में हो सकता है। अंतरा–वैयक्तिक संचार में तीन व्यक्तिगत अवयव, मनोवैज्ञानिक, बहुतिक और शरीरतांत्रिक मिलकर संचार करते हैं। व्यक्ति स्वयं अपने उद्दीपक के द्वारा डिकोडिंग, इंटरप्रिंटिंग तथा कोडिंग का कार्य निरंतर करता रहता है। ये तीनों क्रियाएं मनुष्य के मस्तिष्क में होती हैं।

अंतर–वैयक्तिक संचार (Inter-Personal Communication) : परिस्थिति के आधार पर अंतर–वैयक्तिक संचार वह है जिसमें व्यक्तियों का एक छोटा–सा समूह बेहद निकट से परस्पर संचार करे तथा जिनकी एक–दूसरे तक बेहद आसान पहुंच हो। गुणात्मक आधार पर अंतर–वैयक्तिक संचार वह है जिसमें आत्मीयता एवं निकटता की पर्याप्त गुणात्मकता संभव है। यह दो व्यक्तियों का परस्पर संचार है। एक व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति से विचारों, मतों, भावनाओं आदि के आदान–प्रदान को अंतर–वैयक्तिक संचार कहते हैं। यह आमने–सामने होता है। यह दोतरफा प्रक्रिया है और इसमें फीडबैक तुरंत मिलता है।

समूह–संचार (Group Communication) : यह प्रायः एक औपचारिक एवं संस्थाबद्ध होता है जिसमें अंतर–संबंधों की जटिलता होती है। समूह–संचार तब होता है जब

टिप्पणी

व्यक्तियों का एक समूह आमने–सामने विचार–विमर्श, गोष्ठी, भाषण, सभा वैगरह करके विचारों का आदान–प्रदान करे। इसमें भी फीडबैक मिलता है। समूह संचार के दो रूपों में विभाजित किया जा सकता है– प्राथमिक समूह और अस्थायी समूह। प्राथमिक समूह में आत्मीय, निकट और टिकाऊ संबंधों पर आधारित समूह शामिल हैं, जैसे परिवार, मित्रमंडली, किसी संस्था के सदस्य, आदि। अस्थायी समूह के सदस्यों के बीच संबंधों का स्थायित्व नहीं बल्कि तात्कालिक तौर पर किसी उद्देश्य विशेष या स्थल विशेष के कारण उनका समूह बना है। यह आकस्मिक या संयोगवश होता है, जैसे बस के यात्री, किसी सभा में मौजूद लोग आदि।

जनसंचार (Mass Communication) : किसी यंत्र या जनमाध्यम के जरिये जब सन्देश को एक बहुत बड़े मिश्रित जनसमूह तक भेजा जाए तो वह जनसंचार है। जैसे रेडियो, टीवी, अखबार, पुस्तक आदि।

जनसंचार की विशेषताएं

जनसंचार की विशेषताएं निम्न हैं–

(i) जनसंचार की एक विशेषता यह है कि जनसंचार द्वारा समाज की बौद्धिक सम्पदा का हस्तांतरण संभव होता है।

(ii) जनसंचार द्वारा विभिन्न विषयों पर आधुनिक जानकारी उपलब्ध कराई जाती है ताकि अनेक समस्याओं का हल तुरंत खोजा जा सकें।

(iii) जनसंचार द्वारा सन्देश तीव्र गति से भेजा जाता है। समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन, इंटरनेट, मोबाइलों आदि के द्वारा कोई भी सन्देश तीव्रगति से आम जनता तक पहुंचाया जा सकता है।

(iv) युद्ध, आपातकाल, दुर्घटना आदि के समय जनसंचार की मुख्य भूमिका होती है।

(v) जनसंचार की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें जन सामान्य की प्रतिक्रिया का पता चल जाता है।

(vi) जनसंचार का प्रभाव गहरा होता है और उसे बदला भी जा सकता है।

(vii) जनसंचार एकतरफा होता है।

जनसंचार के कार्य

जनसंचार के तीन मूलभूत कार्य माने जाते हैं:–

(i) लोगों को सूचित करना

(ii) लोगों का मनोरंजन करना

(iii) उन्हें समझाना या किसी काम के लिए मनाना

1. सूचित करना : सूचनाओं का प्रसारण समाचार माध्यमों का प्राथमिक कार्य है। समाचार–पत्र, रेडियो और टीवी विश्वभर की खबरें उपलब्ध करवाकर हमारा सूचना स्तर बढ़ाने में सहायता करते हैं लेकिन पिछले कुछ सालों से समाचार की अवधारणा में फर्क आता जा रहा है। समाचार माध्यम अब किसी घटना को 'जैसे का तैसा' बताने का कार्य नहीं करते हैं। समाचारों का वर्णन करने से लेकर इनमें मानवीय अभिरुचि, विश्लेषण और फीचराइजेशन को भी अब शामिल कर लिया गया है। पत्रकार आज

टिप्पणी

सिर्फ पत्रकार ही नहीं रह गए हैं। वे आज समाचार विश्लेषक बन गए हैं, जो किसी भी महत्वपूर्ण समाचार के आगामी प्रभावों के बारे में चर्चा करते हैं। आजकल समाचार माध्यमों में 'साफ्ट स्टोरीज' पर ज्यादा ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। समाचार माध्यम आज हमें किसी भी घटना, विचार, नीति, परिवर्तन, दर्शन आदि को समझने में भी सहायता करते हैं।

2. मनोरंजन करना : जनसंचार का एक अत्यधिक प्रचलित कार्य लोगों का मनोरंजन करना भी है। रेडियो, टीवी और फिल्म तो सामान्यतया मनोरंजन का ही साधन समझे जाते हैं। समाचार–पत्र भी कॉमिक्स, कार्टून, फीचर, वर्ग पहेली, चक्करघिन्नी, सूडोकू आदि के माध्यम से पाठकों को मनोरंजन की सामग्री उपलब्ध करवाते हैं। रेडियो आमतौर पर संगीत के माध्यम से लोगों का मनोरंजन करता है। हास्य नाटिका, नाटक, वार्ता इत्यादि के माध्यम से भी रेडियो मनोरंजन उपलब्ध करवाता है। टीवी तो मनोरंजन का सबसे बड़ा साधन बन चुका है। गंभीर विषयों जैसे कि समाचार, प्रकृति, वन्य जीवन से जुड़े हुए चैनल भी हास्य की सामग्री प्रसारित करते हैं। सभी जन माध्यमों में से शायद फिल्म ही ऐसा है, जो सिर्फ और सिर्फ मनोरंजन के लिए बना है। वृत चित्र, शैक्षणिक फिल्मों और कला फिल्मों को छोड़ कर बाकी सभी फिल्में मनोरंजन ही उपलब्ध करवाती हैं।

3. लोगों को किसी काम के लिए प्रोत्साहित करना : किसी वस्तु, सेवा, विचार, व्यक्ति, स्थान, घटना इत्यादि के प्रति लोगों को समझाने या प्रोत्साहित करने के लिए भी जनमाध्यमों को औजार के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। अलग–अलग जनमाध्यमों की अलग–अलग प्रकृति व पहुंच होती है (प्रसार, पाठक संख्या, श्रोता संख्या, दर्शक संख्या इत्यादि)। विज्ञापनदाता और विज्ञापन एजेंसियां इन माध्यमों की प्रकृति को पहचानते हैं। संदेश की प्रकृति और लक्षित समूह को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाता है कि उसे किस माध्यम से प्रसारित किया जाए। हालांकि संचार शास्त्री किसी भी एक परिभाषा पर सहमत नहीं हो पाए हैं। संचार की बहुप्रचलित परिभाषा के अनुसार, 'संचार वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी व्यवस्था के दो या अधिक तत्व किसी वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु अन्योन्यक्रिया करते हैं।' एक प्रक्रिया के तौर पर यह निरंतर गतिशील, परिवर्तनशील व अंतहीन है। हमने भूतकाल में जो कुछ पढ़ा, सुना और देखा है, वह आज भी कुछ हद तक हमें प्रभावित करता है। प्रतिदिन हम हजारों संदेश प्राप्त करते हैं। उन पर प्रक्रिया होने के बाद उनका मूल्यांकन होता है। इस मूल्यांकन के आधार पर हम कुछ संदेशों को खारिज कर देते हैं और कुछ को अपने मस्तिष्क में संगृहीत सूचना, विचार, मत इत्यादि के साथ जमा कर लेते हैं। यह सभी सूचनाएं हमें किसी न किसी स्तर पर प्रभावित करती रहती हैं। आज हम संचार के माध्यम से जो कुछ भी सीख रहे हैं, शर्तिया तौर पर भविष्य में हमारे व्यवहार पर कहीं न कहीं उसका असर देखने को मिलेगा।

जनसंचार की बाधाएं

जनसंचार की मुख्य बाधाएं इस प्रकार हैं–

भाषा : संचार की अपनी भाषा नहीं होती है, व्यक्ति की भाषा से ही इसका कार्य चलता है, पर सभी व्यक्तियों की एक भाषा नहीं होती है। इसलिए संचार में बाधा आती है। कभी–कभी भाषा जटिल भी हो जाती है।

टिप्पणी

संचार की इच्छा का अभाव : संचार एक निर्जीव माध्यम है। इसकी कोई अपनी संवेदना नहीं होती, विवेक नहीं होता, यह जड़ संदेश का वाहक या डाकिया है।

आकार तथा दूरी की बाधा : संचार में स्वरूप और दूरी संबंधी बाधाएं आती हैं, जिससे सन्देश को आने–जाने में बाधा होती है। संदेश या सूचना के स्वरूप बदलते रहते हैं।

भिन्नताएं : व्यक्ति–व्यक्ति में भिन्नता होती है। इससे भी सूचना के आदान–प्रदान में बाधाएं आती हैं। सम्प्रेषण के लिए किसी–न–किसी स्तर पर समानता आवश्यक है।

अन्य बाधाएं : संदेश का अर्थ विकृत करने तथा पारस्परिक समझ न पैदा होने देने वाली बात भी संचार मार्ग में बाधा का कार्य करती है। कर्मचारियों के बीच मधुर सम्बन्धों का अभाव भी इस पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। एक दूसरे के प्रति मन में चलने वाली दुर्भावना और गलतफहमी भी इसके अच्छे प्रभाव को बाधित करती है। यांत्रिक दोष से भी संचार–कार्य में कठिनाई उत्पन्न होती है।

जनसंचार की बाधाओं को दूर करने के उपाय

- जहां तक संभव हो सके संबंधित व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को प्रत्यक्ष रूप से संदेश, आदेश, निर्देश और सूचनाएं आदि दी जाए।
- जो भी संदेश दिया जाए, वह बोधगम्य अर्थात सरल और सुबोध भाषा में हो।
- संगठन में कार्यरत सभी व्यक्तियों के बीच मधुर एवं मानवीय संबंधों का विकास किया जाए।
- संघटन में प्रबन्ध के स्तरों में कमी होनी चाहिए, जिससे संचार को कम–से–कम स्तरों से गुजरना पड़े।
- समय, परिस्थिति और आवश्यकता के संदर्भ में संचार के उपर्युक्त–से–उपर्युक्त साधनों अथवा माध्यमों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

जनसंचार के गुणधर्म

जनसंचार के भी कुछ गुणधर्म होते हैं, जिनके बारे में जानना जरूरी है, वे हैं–

- **विलम्बित प्रतिपुष्टि** : अन्तःवैयक्तिक, अन्तर्वैयक्तिक व समूह संचार की अपेक्षा जनसंचार में स्रोत व प्रापक के बीच की दूरी बहुत ज्यादा होती है। इसी वजह से श्रोताओं की प्रतिपुष्टि सीमित व विलम्बित रहती है। कई बार तो यह बहुत कम व नगण्य हो जाती है।
- **गेटकीपिंग** : यह भी जनसंचार का एक अद्वितीय गुणधर्म है। जनसंचार के व्यापक प्रभाव के चलते यह आवश्यकता महसूस की गई कि लगातार प्रसारित होने वाले संदेश के चयन व संपादन पर कुछ नियंत्रण अवश्य होना चाहिए। जनसंचार में सांगठनिक व व्यक्तिगत दोनों ही स्तरों पर गेटकीपिंग की जाती है।

जनसंचार के लक्ष्य

जनसंचार सामाजिक सन्दर्भों से जुड़ा है। जनसंचार यदि समाज के विकास से जुड़ा है तो यह समाज के विकास को भी प्रभावित करता है। जनसंचार ने हमारे जीवन के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पक्षों को प्रभावित किया है। जनसंचार

टिप्पणी

ने सूचना के अधिकार का विस्तार किया है, जिससे लोगों में राजनीतिक जागरूकता आई है।

यद्यपि राजनीतिज्ञों ने जनमत को अपने पक्ष में करने के लिए, अपने राजनीतिक हितों के प्रचार के लिए सदैव मीडिया के संसाधनों का प्रयोग किया है। हम पाते हैं कि सारा विश्व समाचारों के लिए आर्थिक दृष्टि से और संसाधनों की दृष्टि से सशक्त देशों–अमेरिका और यूरोप पर निर्भर है। इन देशों की समाचार एजेंसियों द्वारा प्रेषित समाचारों के ही सहारे से जानकारियां पा सकते हैं क्योंकि विकासशील देशों के पास विकसित देशों के समान सशक्त संसाधन नहीं हैं। हमारे देश में भी समाचार पत्रों पर औद्योगिक घरानों का वर्चस्व है, रेडियो, टीवी आदि में सरकारी नियन्त्रण है।

जनसंचार के द्वारा राजनीतिक लक्ष्यों को तीव्र और प्रभावशाली रूप में पूरा किया जा सकता है तो राजनीतिक लक्ष्य का यह प्रयास भी होता है कि लोगों को विकल्प का मौका दिए बिना उन्हें अपने विचारों के जाल में फंसा दिया जाए। जनसंचार राजनीतिक विभ्रम को फैलाने का हथियार भी बन सकता है। यह तो जनता के विवेक पर है कि वह किसी भी संदेश के सकारात्मक और नकारात्मक पहलू को समझे और उनसे प्रभावित हो।

जनसंचार के माध्यमों का अधिकाधिक विस्तार व्यापार के कार्यों के लिए हुआ था। स्पष्ट है कि जनसंचार के माध्यमों का उपयोग सिर्फ राजनीतिक लक्ष्यों के लिए ही नहीं हुआ अपितु आर्थिक लक्ष्यों को पूरा करने के उद्देश्य से भी हुआ। समाचार पत्रों द्वारा राजनीतिक प्रचार के साथ साथ व्यापारिक गतिविधियों को भी प्रसरित किया गया। आज विज्ञापन की दुनिया ने किस प्रकार अर्थपक्ष को प्रभावित किया है, यह सभी को ज्ञात है। बाजार की शक्ति स्थापित करने में, उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने में, पूंजी को केन्द्रीकृत करने में जनसंचार माध्यमों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

सामाजिक क्षेत्र पर तो जनसंचार का प्रभाव बहुत गहरा है। एक समय था जब विदेश जाने पर लोगों का अपने सम्बन्धियों से सम्पर्क नहीं हो पाता था या बमुश्किल होता था, फिर चिट्ठियों द्वारा यह सम्पर्क कुछ सम्भव हुआ, फिर तार, टेलीफोन आदि के द्वारा सम्पर्क सूत्र बढ़ने लगे और अब –मेल,चैटिंग, टेली कॉन्फ्रेंसिंग आदि के द्वारा एक दूसरे से बात करना इतना सहज हो गया है, जैसे आमने–सामने बात करना। यानी जनसंचार ने दुनिया को बहुत छोटा बना दिया है।

हमारे दैनन्दिन जीवन में जनसंचार माध्यमों ने इतने सशक्त ढंग से प्रवेश कर लिया है कि अब उनके बिना जीवन की कल्पना सम्भव नहीं है। प्रातःकाल से रात्रि तक अखबार, फोन, मोबाइल, कम्प्यूटर, इन्टरनेट आदि हमारी पहुंच के दायरे में रहते हैं। एक मोबाइल से अब हमारा काम नहीं चलता, दो सिम वाले, मल्टी सिम वाले फोन आसानी से बाजार में उपलब्ध हैं, ये माध्यम हम तक सूचना पहुंचाते हैं, हमें ज्ञान–विज्ञान के विविध रूपों, क्षेत्रों से परिचित कराते हैं। हमारी अभिरुचियों, प्रस्तुतियों, तरीकों, शैलियों को भी जनसंचार ने प्रभावित किया है।

जनसंचार के घटक

जनसंचार के निम्नलिखित घटक होते हैं–

- अपेक्षाकृत व्यापक जनसमूह होता है।

- मुख्यतः एक जैसी जनसमूह संरचना होती है।
- संदेश पुनः प्रसारण का यही रूप होता है।
- शीघ्र वितरण एवं संचार होता है।
- ग्रहणकर्ता/ग्राहक को कम खर्च करना पड़ता है।
- तकनीक उपयोगः मुद्रण, बिजली, इलेक्ट्रॉनिक्स, उपग्रह आदि।

अपनी प्रगति जांचिए

1. जनसंचार शब्द का प्रयोग किस दशक के अंतिम दौर में आरंभ हुआ था?

   (क) 1920 (ख) 1930

   (ग) 1940 (घ) 1950

2. "जनसंचार बहुत से व्यक्तियों में एक मशीन के माध्यम से सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को रूपांतरित करने की प्रक्रिया है।" यह परिभाषा किसने दी?

   (क) विलबर श्राम (ख) जार्ज ए. मिलर

   (ग) जोसेफ डिनिटी (घ) टीड

5.3 संचार के प्रारूप

पृथ्वी पर मानव सभ्यता के साथ जैसे–जैसे संचार प्रक्रिया का विकास होता गया, वैसे–वैसे संचार के मॉडलों यानी प्रारूपों का भी विकास हुआ। अतः संचार का अध्ययन मॉडलों के अध्ययन के बगैर अधूरा माना जाता है। सामाजिक विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों जैसे– समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, मनोविज्ञान, संचार शास्त्र, प्रबंध विज्ञान इत्यादि के अध्ययन, अध्यापन व अनुसंधान में प्रारूपों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। समाज वैज्ञानिकों व संचार विशेषज्ञों ने अपने–अपने समय के अनुसार संचार के विभिन्न मॉडलों का प्रतिपादन किया है।

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, मॉडल से अभिप्राय किसी वस्तु को उसके लघु रूप में प्रस्तुत करना है। किसी सामाजिक घटना अथवा इकाई के व्यावहारिक स्वरूप को बताने के लिए अनुभव के आधार पर तैयार की गई सैद्धांतिक परिकल्पना को प्रारूप यानी मॉडल कहते हैं। दूसरे शब्दों में मॉडल किसी घटना अथवा इकाई का वर्णन मात्र नहीं होता है, बल्कि उसकी विशेषताओं को भी प्रदर्शित करता है।

संचार एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें परिवर्तन होता रहता है। परिवर्तनशीलता के अनुपात में संचार प्रक्रिया की जटिलता घटती–बढ़ती रहती है। संचार मॉडल सिद्धांतों पर आधारित संरचना होती है, जिसमें व्यक्ति व समाज पर होने वाले प्रभावों को अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। अतः संचार मॉडल की संरचना संचार प्रक्रिया की समझ व परिभाषा पर निर्भर करती है। संचार शास्त्री डेविटो के शब्दों में, संचार मॉडल संचार की प्रक्रियाओं व विभिन्न तत्वों को संगठित करने में सहायक होते हैं। ये प्रारूप संचार के नये–नये तथ्यों की खोज में भी निर्णायक भूमिका

निभाते हैं। अनुभवजन्य व अन्वेषणात्मक कार्यों द्वारा ये प्रारूप भावी अनुसंधान के लिए संचार से संबंधित प्रश्नों का निर्माण करते हैं। इन प्रारूपों की मदद से संचार से संबंधित पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। संचार की विभिन्न प्रक्रियाओं व तत्वों का मापन किया जा सकता है।

संचार मॉडलों के प्रकार

संचार मॉडलों (प्रारूपों) के निम्न प्रकार हैं–

एक तरफा संचार मॉडल

संचार का यह मॉडल तीर की तरह होता है, जिसके अंतर्गत संचारक अपने सदेश को सीधे प्रापक के पास प्रत्यक्ष रूप से सम्प्रेषण करता है। इसका तात्पर्य यह है कि एक तरफ संचार मॉडल के अंतर्गत केवल संचारक अपने विचार, जानकारी, अनुभव इत्यादि को सूचना के रूप में सम्प्रेषित करता है। उपरोक्त सूचना के संदर्भ में प्रापक अपनी कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता है अथवा प्रतिक्रिया करता है तो संचारक उससे अंजान रहता है। एक तरफा संचार प्रक्रिया की परिकल्पना सर्वप्रथम हिटलर और रूजवेल्ट जैसे तानाशाह शासकों ने की, लेकिन इसका प्रतिपादन 20वीं शताब्दी के तीसरे दशक के दौरान अमेरिकी मनोवैज्ञानिकों ने किया। अमेरिकी प्रतिरक्षा विभाग ने कार्ल होवलैण्ड की अध्यक्षता में अस्त्र परिचय कार्यक्रम का मूल्यांकन करने के लिए गठित मनोवैज्ञानिकों की एक विशेष कमेटी ने अपने अध्ययन के द्वारा पाया कि संचारक द्वारा प्रत्यक्ष रूप से सम्प्रेषित संदेश का प्रापकों पर अधिक प्रभाव पड़ता है। इस अध्ययन पर आधारित रिपोर्ट 1949 में प्रकाशित हुई।

इस मॉडल से स्पष्ट है कि सूचना का प्रवाह संचारक से प्रापक तक एक तरफा होता है, जिसमें संचार माध्यम मदद करते हैं। रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र इत्यादि की मदद से सूचना का सम्प्रेषण एक तरफा संचार का उदाहरण है। इस मॉडल का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें सूचना के प्रवाह को मात्र संचार माध्यमों की मदद से दर्शाया गया है, जबकि समाज में सूचना का प्रवाह बगैर संचार माध्यमों के प्रत्यक्ष भी होता है।

दो तरफा संचार मॉडल

संचार के इस मॉडल में संचारक और प्रापक की भूमिका समान होती है। दोनों अपने–अपने तरीके से संदेश सम्प्रेषण का कार्य करते हैं। प्रत्यक्ष रूप से आमने–सामने बैठकर संदेश सम्प्रेषण के दौरान रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र जैसे संचार माध्यमों की जरूरत नहीं पड़ती है। दो तरफा संचार प्रारूप में संचारक और प्रापक को समान रूप से अपनी बात कहने का पर्याप्त अवसर मिलता है। संचारक और प्रापक के आमने–सामने न होने की स्थिति में दो तरफा संचार के लिए टेलीफोन, मोबाइल, ई–मेल, एसएमएस, सोशल नेटवर्किंग साइट्स, चैटिंग, अंतर्देशीय व पोस्टकार्ड जैसे संचार माध्यम की जरूरत पड़ती है। इसमें टेलीफोन, मोबाइल, ई–मेल व एसएमएस, सोशल नेटवर्किंग साइट्स व चैटिंग अत्याधुनिक संचार माध्यम हैं, जिनका उपयोग करने से संचारक और प्रापक के समय की बचत होती है, जबकि अंतर्देशीय व पोस्टकार्ड परम्परागत संचार माध्यम हैं, जिनमें संचारक द्वारा सम्प्रेषित संदेश को प्रापक तक

पहुंचने में पर्याप्त समय लगता है। समाज में दो तरफा संचार माध्यम के बगैर भी होता है। पति–पत्नी, गुरु–शिष्य, मालिक–नौकर इत्यादि के बीच वार्तालाप की प्रक्रिया दो तरफा संचार का उदाहरण है।

टिप्पणी

सूचना का प्रवाह संचारक से प्रापक की ओर होता है। समय, काल व परिस्थिति के अनुसार संचारक और प्रापक की भूमिका बदलती रहती है। संचारक से संदेश ग्रहण करने के उपरान्त प्रापक जैसे ही अपनी बात को कहना शुरू करता है, वैसे ही वह संचारक की भूमिका का निर्वाह करने लगता है।

अरस्तू का मॉडल

संचार की प्रक्रिया का अध्ययन एक विज्ञान है। यह प्रक्रिया जटिल है। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न तरीके से इस प्रक्रिया का वर्णन किया है। संचार की प्रक्रिया को बताने वाला सैद्धांतिक प्रारूप मॉडल कहलाता है। इन मॉडलों से हमें संचार की गतिशील और सक्रिय प्रक्रिया समझने में आसानी होती है। ये संचार के सिद्धांत और इसके तत्वों के बारे में भी बताते हैं। संचार मॉडल से हमें पता चलता है कि संचार में किन–किन तत्वों की क्या भूमिका है और ये एक–दूसरे को कैसे प्रभावित करते हैं?

संचार की शुरुआत लाखों साल पहले जीव की उत्पत्ति के साथ मानी जाती है। संचार की प्रक्रिया और इससे जुड़े कई सिद्धांत की जानकारी हमें प्राचीन ग्रथों से मिलती है। लेकिन उन जानकारियों पर और अध्ययन की आवश्यकता है। करीब 2300 साल पहले ग्रीस के दार्शनिक अरस्तू ने अपनी किताब "रेटॉरिक" में संचार की प्रक्रिया के बारे में बताया है। रेटॉरिक का हिन्दी में अर्थ होता है– भाषण देने की कला। अरस्तू ने संचार की प्रक्रिया को बताते हुए पांच प्रमुख तत्वों की व्याख्या की है। संचार प्रेषक (भेजने वाला), संदेश (भाषण), प्राप्तकर्ता, प्रभाव और विभिन्न अवसर।

अरस्तू के अनुसार संचार की प्रक्रिया रेखीय है। रेखीय का अर्थ है– एक सीधी लाइन में चलना। प्रेषक श्रोता को संदेश भेजता है जिससे उस पर एक प्रभाव उत्पन्न होता है। हर अवसर के लिए संदेश अलग–अलग होते हैं।

अरस्तू के अनुसार, संचार का मुख्य उदेश्य है श्रोता पर प्रभाव उत्पन्न करना। इसके लिए प्रेषक विभिन्न अवसरों के अनुसार अपने संदेश बनाता है और उन्हें श्रोता तक पहुंचाता है जिससे कि उन पर प्रभाव डाला जा सके। इसका विश्लेषण भी अरस्तू करते हैं। संदेश तैयार करने के लिए वे तीन प्रमुख घटकों की चर्चा करते हैं, पैथोस्, इथोस् और लोगोस्।

पैथोस् का शाब्दिक अर्थ है– दुःख। अरस्तू के अनुसार यदि संदेश इस तरह से तैयार किए जाएं, जिससे कि श्रोता के मन में दुःख या इससे संबधित भाव उत्पन्न हो सके तो श्रोता के मस्तिष्क पर प्रभाव डाला जा सकता है। आसान शब्दों में कहें तो अपनी बात मनवाई जा सकती है। रेटॉरिक का अर्थ होता है– भाषण देने की कला। यह मुख्य रूप से प्राचीन काल में राजनेताओं को सिखाई जाती थी, आज भी कई कुशल राजनेता ऐसे हैं जो अरस्तू की व्याख्या को अपने भाषण में आत्मसात करते हैं।

"इथोस्" का शाब्दिक अर्थ है– विश्वसनीयता। विश्वसनीयता को लंबे समय में हासिल किया जा सकता है। इसके लिए प्रेषक को अपने आचार–व्यवहार में इस तरह के परिवर्तन लाने होते हैं जिससे कि सामान्य जन का विश्वास उस पर मजबूत हो

टिप्पणी

सके। जब लोगों का विश्वास उस पर होगा तो वो जो भी संदेश देगा उसका प्रभाव प्रापक पर अनुकूल पड़ेगा।

लोगोस् का शाब्दिक अर्थ है– तर्क। अरस्तू कहते हैं कि प्रेषक का संदेश तर्क से भरपूर होना चाहिए। इसे ऐसे भी कह सकते हैं कि प्रेषक को अपनी बात तार्किक तरीके से रखनी चाहिए जिससे कि श्रोता पर प्रभाव पड़े। न्यायालय में वकील मुकदमे की पैरवी करता है। इस दौरान वो प्रेषक है जबकि न्यायाधीश महोदय श्रोता। वकील को अपने संदेश या बातों से जज को प्रभावित करना है। इसके लिए वो तर्क का सहारा लेता है और घटना का तार्किक विश्लेषण न्यायाधीश के सामने रखता है। यदि संदेश तर्कपूर्ण है तो इसका प्रभाव पड़ता है और वकील साहब न्यायाधीश महोदय से अपने पक्ष में फैसला ले लेते हैं।

शैनन–वीवर मॉडल

संचार के गणितीय प्रारूप का प्रतिपादन 1949 में अमेरिका के क्लाउड ई.शैनन और वारेन वीवर ने संयुक्त रूप से किया, जो मूलतः टेलीफोन द्वारा संदेश सम्प्रेषण की प्रक्रिया पर आधारित है। शैनन मूलतः गणितज्ञ व इलेक्ट्रॉनिक इंजीनियर थे, जिनकी दिलचस्पी संचार शोध के क्षेत्र में थी। क्लाउड ई.शैनन ने पहली बार 1948 में टेलीफोन संचार प्रक्रिया को प्रारूप के रूप में दुनिया को समझाया तथा 1949 में अमेरिका के ही वैज्ञानिक शोध एवं विकास विभाग में कार्यरत अपने साथी वारेन वीवर के साथ मिलकर संचार के गणितीय सिद्धांत नामक पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक में शैनन और वीवर ने पूर्व के संचार प्रारूप को संशोधित करके प्रस्तुत किया। इस प्रकार, शैनन और वीवर द्वारा प्रतिपादित संचार के गणितीय प्रारूप में मुख्यतः छह तत्वों– सूचना स्रोत, सूचना प्रेषक, संचार मार्ग, शोर, प्रापक व गन्तव्य स्थल का उल्लेख किया गया है।

शैनन–वीवर के अनुसार संप्रेषण प्रक्रिया में पांच तत्त्व निहित हैं जो सूचना स्रोत से प्रारम्भ होकर प्रेषक द्वारा कोलाहल स्रोत को पार करते हुए सन्देश के रूप में उनके लक्ष्य तक प्राप्तकर्ता के पास सम्प्रेषित होते हैं–

1. सूचना स्रोत : यह सम्प्रेषण प्रक्रिया का प्रारम्भ है। आज के वैज्ञानिक युग में सूचना एक साधन बन चुकी है। प्रबन्धन को उचित निर्णय लेने में सूचना अनिवार्य भूमिका निभाती है। अतः सूचना ही एक ऐसा स्रोत है, जिसके द्वारा व्यक्तियों को सोच समझ कर परिवर्तित किया जा सकता है। संप्रेषण प्रक्रिया में सूचना स्रोत से ही मनुष्य के मस्तिष्क में विचारों की उत्पत्ति होती है जो सन्देश के रूप में परिवर्तित होकर अपने गन्तव्य स्थान तक पहुंचता है।

2. प्रेषक : जिस व्यक्ति द्वारा संदेश को प्रेषित किया जाता है वह संप्रेषण में प्रेषक कहलाता है। शैनन तथा वीवर मॉडल के अनुसार संप्रेषण में प्रेषक की अहम भूमिका होती है जो सूचना स्रोत से विचारों को एकत्रित करके संप्रेषण के माध्यम से संदेश को उनके प्राप्तकर्ता तक पहुंचाता है। प्रेषक संदेश को संदेशबद्ध करके भेजता है।

3. कोलाहल स्रोत : इस मॉडल में कोलाहल या शोर स्रोत को भी महत्व दिया गया है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में जिस माध्यम से सन्देश प्रेषित होते हैं, उसमें शोरगुल का पाया जाना स्वाभाविक है जिसकी वजह से सन्देश में अशुद्धि भी हो सकती है।

टिप्पणी

4. प्रापक : सम्प्रेषण का उद्देश्य सन्देश को किसी अन्य तक पहुंचाना होता है, जिसके पास सन्देश प्रेषित किया जाता है वह सन्देश का प्रापक या प्राप्तकर्ता होता है।

5. लक्ष्य : यह संचार प्रक्रिया की अन्तिम कड़ी है जिसको आधार बनाकर सन्देश देने वाला अपना सन्देश देकर अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति करता है।

6. सन्देश : एक ऐसी सूचना जिसे प्रेषक प्राप्तकर्ता के पास भेजना चाहता है, वह सन्देश कहलाती है।

7. सूचना और शोर : किसी भी सूचना का स्रोत व्यक्ति या संस्थान (संचारक) होते हैं, जो प्रतिदिन भारी संख्या में सूचनाओं को संकलित करने तथा समाज (प्रापक) के लिए महत्वपूर्ण सूचनाओं को सम्प्रेषित करने का कार्य करते हैं। सूचना सम्प्रेषण प्रक्रिया के दौरान संचार मार्ग में किसी न किसी कारण से शोर उत्पन्न होता है, जिससे सूचना विकृत व प्रभावित होती है। सूचना सम्प्रेषण प्रक्रिया में शोर की अवधारणा को सर्वप्रथम शैनन–वीवर ने प्रस्तुत किया। इनके गणितीय संचार प्रारूप की सबसे बड़ी विशेषता भी शोर ही है। शोर से तात्पर्य संचार मार्ग में आने वाले व्यवधान से है, जिसके प्रभाव के कारण संदेश अपने वास्तविक अर्थों में प्रापक तक नहीं पहुंचता है। यदि सूचना प्रेषक द्वारा सम्प्रेषित सूचना संकेत संचार मार्ग से होते हुए अपने वास्तविक रूप में प्रापक तक पहुंच जाती है तो माना जाता है कि संचार मार्ग में कोई व्यवधान नहीं है, लेकिन ऐसा कम ही होता है। सामान्यतः सम्प्रेषित सूचना संकेत के साथ कोई न कोई शोर अवश्य ही जुड़ जाता है। शोर जितना अधिक होता है, व्यवधान भी उसी अनुपात में उत्पन्न होता है। इसके विपरीत, शोर के कम होने की स्थिति में व्यवधान भी कम होता है तथा संचार प्रक्रिया बेहतर रूप में सम्पन्न होती है। शैनन और वीवर ने शोर के कारण उत्पन्न होने वाले व्यवधान को कम करने के लिए शब्द–बहुलता के सिद्धांत पर जोर दिया है, जिसका तात्पर्य है– किसी संदेश को बार–बार बोलना या दुहराना। दूसरे शब्दों में, जिस सूचना या संदेश के विकृत होने की संभावना होती है, लोग उसे बार–बार बोलते या दुहराते हैं। यदि संचारक एक ही वाक्य को बार–बार बोलता है या दुहराता है तो उसका उद्देश्य संदेश को उसके वास्तविक अर्थों में प्रापक तक पहुंचाना है।

शैनन और वीवर ने संचार के गणितीय प्रारूप का प्रतिपादन संचार प्रक्रिया के दौरान संचार मार्ग में आने वाले सूचना संकेतों में से उन संकेतों को अलग करने के लिए किया, जिसका उद्देश्य कूटबद्ध संकेतों को कम से कम अशुद्धियों के साथ प्रापक तक पहुंचाना था। शैनन और वीवर ने संदेश सम्प्रेषण के दौरान व्यवधान उत्पन्न करने वाले शोर को दो प्रकारों में विभाजित किया है– संचार मार्ग शोर और शब्दार्थ शोर।

(क) संचार मार्ग शोर : भौतिक माध्यमों से सूचना सम्प्रेषण के दौरान उत्पन्न होने वाले व्यवधान को संचार मार्ग शोर कहते हैं, जिनके बहुत से संकेतार्थ होते हैं। इन संकेतार्थो को संचार मार्ग शोर का महत्वपूर्ण घटक माना जाता है। विभिन्न माध्यमों के संचार मार्गों को तकनीकी अवस्था व कार्य निष्पादन, संचार मार्गों की सामाजिक व भौतिक उपलब्धि तथा वास्तविक संदेशों की जनसमुदाय तक पहुंच के द्वारा पहचाना जा सकता है। अंतर–वैयक्तिक संचार के संदर्भ में संचार मार्ग शोर को संचारक और प्रापक के मध्य उपस्थित किसी भी प्रकार के व्यवधान से समझा जा सकता है।

टिप्पणी

शब्द–बहुलता के सिद्धांत का उपयोग कर संचार मार्ग में व्याप्त शोर को कम या अप्रभावी किया जा सकता है।

(ख) शब्दार्थ शोर : जब प्रेषक अपनी स्थिति तथा मनोदशा के कारण सूचना को गलत समझ लेता है, जिसके कारण उत्पन्न होने वाले व्यवधान को शब्दार्थ शोर कहते हैं। ऐसी स्थिति में प्रापक सम्प्रेषित सूचना को संचारक की आवश्यकता व इच्छा के अनुरूप अर्थ प्रदान नहीं करता है। शब्दार्थ शोर का दूसरा कारण संचारक द्वारा सामान्य शब्दों का प्रयोग न करना भी है, क्योंकि सूचना सम्प्रेषण के दौरान यदि संचारक कठिन या दो अर्थों वाले शब्दों का प्रयोग करता है तो उसके वास्तविक अर्थ को समझने में प्रापक को परेशानी होती है। यदि प्रापक वास्तविक अर्थ को समझ लेता है तो किसी भी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न नहीं होता है। इसके विपरीत, यदि प्रापक वास्तविक अर्थ को समझ नहीं पाता है, जिसके चलते शब्दार्थ शोर उत्पन्न होता है।

मर्फी मॉडल

इस मॉडल के प्रतिपादक मर्फी, एच. डब्ल्यू. हिल्डब्रेन्ड तथा जे. पी. थॉमस हैं। उनके अनुसार सम्प्रेषण प्रक्रिया के छः मुख्य तत्त्व होते हैं। इस मॉडल के अनुसार इसमें छः मुख्य भाग होते हैं–

(i) संदर्भ

(ii) सन्देशवाहक

(iii) सन्देश

(iv) माध्यम

(v) प्राप्तकर्ता

(vi) प्रतिक्रिया या प्रतिपुष्टि

इस मॉडल में एक संदर्भ के अनुसार प्रेषक एक सन्देश चुनता है तथा इसे प्रेषित करता है। प्रेषक सन्देश को भेजने के लिए किसी माध्यम का चुनाव करता है जिसके द्वारा प्राप्त होने वाले सन्देश पर उसका प्राप्तकर्ता अपनी प्रतिपुष्टि देकर संवहन को पूरा करता है।

थिल एवं बॉवी मॉडल

व्यावसायिक संप्रेषण घटनाओं की एक कड़ी है, जिसकी पांच अवस्थाएं हैं जो प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता को जोड़ती हैं। इस मॉडल के अनुसार, सन्देश भेजने वाले के पास कोई विचार होता है जो वास्तविक संसार से संबंधित घटनाओं का सरलीकरण होता है अर्थात् उस विचार को पुष्ट करने में उसने कई चीजों को छोड़ा होता है तथा अधिकतम को मान्यता दी होती है। इससे प्रारम्भ होकर यही विचार सन्देश के रूप में परिवर्तित होकर सन्देश बन जाता है जिसे सन्देश के रूप में प्रेषित करके सन्देश प्राप्तकर्ता तक पहुंचाकर उसकी (अर्थात् प्राप्तकर्ता की) प्रतिक्रिया ली जाती है।

थिल एवं बॉवी मॉडल में समाहित घटक हैं–

(i) विचार,

(ii) विचार का सन्देश के रूप में परिवर्तन,

टिप्पणी

(iii) सन्देश का संप्रेषण,

(iv) प्राप्तकर्ता द्वारा सन्देश प्राप्ति एवं

(v) प्राप्तकर्ता द्वारा प्रतिपुष्टि

बर्लो मॉडल

डेविड के. बर्लो ने सन् 1960 में अपना संचार प्रारूप प्रस्तुत किया, जो आचार संहिता विज्ञान पर आधारित है। बर्लो के मॉडल को एसएमसीआई (SMCR) मॉडल भी कहा जाता है। एसएमसीआर का अर्थ है–

एस (S): Source (प्रेषक)

एम (M): Message (संदेश)

सी (C): Channel (माध्यम)

आर (R): Receiver (प्रापक)

1. **प्रेषक (Source)** : स्रोत एक व्यक्ति होता है। इसके प्रभाव को जानने के लिए व्यक्ति के गुणों को जानना जरूरी है। इसका विश्लेषण प्रेषक के संचार कौशल, व्यवहार, ज्ञान, समाज व्यवस्था व संस्कृति के आधार पर किया जा सकता है।
2. **संदेश (Message)** : संदेश किसी भी भाषा या चित्र के माध्यम से दिया जा सकता है। प्रेषक संदेश की संरचना अपने तरीके से करता है। जैसे– भाषाई दृष्टि से हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी इत्यादि तथा चित्रात्मक दृष्टि से फिल्म, फोटोग्राफ इत्यादि के रूप में. संदेश संरचना के बाद प्रेषक उसे अपने तरीके से सम्प्रेषित करता है, जिसका विश्लेषण तत्व, अंतर्वस्तु, ढांचा, उपचार व कूट इत्यादि के स्तर पर किया जा सकता है।
3. **माध्यम (Channel)** : माध्यम की मदद से संदेश प्रापक तक पहुंचता है। संचार के लिए संदेश प्रेषक कई प्रकार के माध्यमों का उपयोग कर सकता है।
4. **प्रापक (Receiver)** : संदेश को ग्रहण करने वाला प्रापक कहलाता है। संचार में प्रापक का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यदि प्रापक की सोच सकारात्मक होती है तो संदेश अर्थपूर्ण होता है। इसके विपरीत, प्रेषक के प्रति नकारात्मक सोच होने की स्थिति में संदेश निष्प्रभावी हो जाता है।

   बर्लो के मॉडल में संचार प्रक्रिया का उल्लेख नहीं है। यदि इसका विश्लेषण करें तो यह मुख्य रूप से संचार प्रक्रिया में मानवीय तत्व की भूमिका अथवा प्रक्रिया से जुड़ा है। यह भूमिका प्रेषक, संदेश, संचार माध्यम एवं प्रापक इत्यादि के रूप में जुड़ी हो सकती है। अतः बर्लो का मॉडल सम्यक नहीं है।

लेसिकर, पेटाइट एवं फ्लैटले मॉडल

इस मॉडल को संवेदनशीलता मॉडल के रूप में प्रतिपादित किया गया। इसमें सम्प्रेषण प्रक्रिया सन्देश प्रेषण से प्रारंभ होकर क्रम की पुनःआवृत्ति (The Cycle Repeated) पर समाप्त होती है। इन विद्वानों ने स्पष्ट किया कि संप्रेषण प्रक्रिया में संवेदन तंत्र का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है क्योंकि सन्देश प्राप्तकर्ता द्वारा सन्देश संवेदन तंत्र द्वारा

प्राप्त किया जाता है। संवेदन तंत्र संवाद को खोजकर संवाद के साथ–साथ पहले से उपलब्ध कुछ अन्य सूचनाएं भी एकत्रित करता है। इसमें संवाद को सन्देश माध्यम में उपलब्ध शोर से अलग रखा जाता है ताकि सन्देश में अशुद्धता न हो। यहां संवाद को दिया गया अर्थ संवेदन तंत्र से कुछ प्रतिक्रिया भी प्राप्त कर सकता है जो सन्देश प्रेषक को मौखिक अथवा अमौखिक रूप में भेजी जा सकती है।

इस मॉडल में मर्सी तथा केविन के बीच सन्देशवाहन को उपर्युक्त विवेचन के आधार पर समझाया गया है, जिसमें मर्सी एक सन्देश भेजता है। जो केविन द्वारा संवेदन तंत्र की सहायता से प्राप्त किया जाता है जिसे निस्पंदन प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करके उस पर केविन अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है जिसका क्रम दोनों के बीच उस समय तक चलता है जब तक कि केविन और मर्सी के बीच संवाद पूरा नहीं हो जाता। इस प्रक्रिया में निम्न संघटक शामिल रहते हैं–

(i) सन्देश प्रेषण

(ii) संवेदन तंत्र द्वारा संवाद की खोज

(iii) निस्पंदन प्रक्रिया

(iv) प्रतिक्रिया की रचना एवं प्रेषण

(v) क्रम की पुनः आवृत्ति

ऑसगुड–श्राम का संचार मॉडल

चार्ल्स ई. ऑसगुड मनोभाषा विज्ञानी थे, जिन्होंने सन् 1954 में अपना संचार प्रारूप विकसित किया, जो पूर्व के प्रारूपों से बिलकुल भिन्न है। ऑसगुड के अनुसार, संचार की प्रक्रिया गत्यात्मक व परिवर्तनशील होती है, जिसमें भाग लेने वाले प्रत्येक प्रतिभागी (संचारक व प्रापक) संदेश सम्प्रेषण व ग्रहण करने के साथ–साथ कूट रचना या संकेतीकरण (Encoding), कूट वाचन या संकेत ग्राहक (Decoding) तथा संदेश की व्याख्या का कार्य भी करते हैं। अतः दोनों को व्याख्याकार (Interpreter) की भूमिका निभानी पड़ती है। ऑसगुड का मानना है कि संचार की गत्यात्मक व परिवर्तनशील प्रक्रिया के कारण एक समय ऐसा आता है, जब संदेश सम्प्रेषित करने वाले संचारक की भूमिका बदलकर प्रापक की तथा कुछ देर बाद पुनः संचारक की हो जाती है। इसी प्रकार, सूचना ग्रहण करने वाले प्रापक की भूमिका भी क्रमशः बदलकर संचारक तथा कुछ देर बाद पुनः प्रापक की हो जाती है। संचारक व प्रापक की भूमिका के परिवर्तन में संदेश की व्याख्या का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसे विलबर श्राम ने प्रारूप का रूप दिया, जिसे सर्कुलर प्रारूप कहते हैं।

ऑसगुड–श्राम का मानना है कि संदेश सम्प्रेषित करना और ग्रहण करना स्वाभाविक रूप से भले ही दो अलग–अलग कार्य हों, लेकिन मानव दोनों कार्यों को एक ही समय में करता है। अतः संचार की दृष्टि से दोनों एक ही कार्य हैं। इस प्रारूप में संदेश संप्रेषित करने वाले– संचारक और संदेश ग्रहण करने वाले– प्रापक को व्याख्याकार (Interpreter) कहा गया है। व्याख्याकार पहले संकेतों के रूप में संदेश की रचना करता है, फिर उसे सम्प्रेषित करता है। तब वह कूट लेखक व संकेत प्रेषक (Encoder) की भूमिका में होता है। उसे ग्रहण करने वाला कूट वाचक

व संकेत ग्राह्यता (Decoder) होता है, क्योंकि वह संदेश के अर्थ को समझने के लिए व्याख्याकार (Interpreter) की भूमिका को निभाता है। इसके बाद कूट वाचक या संकेत ग्राह्यता अपनी प्रतिक्रिया को कूट/संकेत में भेजते समय कूट प्रेषक (Encoder) बन जाता है, जबकि उसे प्राप्त करने वाला कूट वाचक (Decoder) होता है। इस तरह, दोनों (संचारक व प्रापक) व्याख्याकार होते हैं। यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है, जिसके कारण ऑसगुड–श्राम के प्रारूप को सर्कुलर प्रारूप कहा जाता है।

वेस्टली और मैकलीन का मॉडल

वेस्टली और मैकलीन के संचार का मॉडल C:l वेस्टली और मैल्कम एस मैकलीन द्वारा प्रस्तावित किया गया है। वेस्टली ने विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में एक शिक्षक के रूप में कार्य किया, मैल्कम पत्रकारिता स्कूल विश्वविद्यालय के निदेशक और मिनेसोटा विश्वविद्यालय में यूनिवर्सिटी कॉलेज के सह–संस्थापक थे। यह सिद्धांत दो संदर्भों में काम कर सकता है, जो पारस्परिक संचार और जन संचार हैं। यह मॉडल परिवेश से प्रतिक्रिया और संचार की प्रक्रिया के बीच एक मजबूत संबंध पर विचार करता है। प्रत्येक रिसीवर अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति के अनुरूप प्राप्त संदेश का जवाब देता है।

- **स्रोत** : स्रोत संदेश निर्माता और प्रेषक है
- **पर्यावरण** : पर्यावरण वह भौतिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति है जहां संदेश बनाया और भेजा जा रहा है।
- **संवेदी अनुभव** : संवेदी अनुभव पहली चीज है जिसे स्रोत देखता है जिसके द्वारा स्रोत को संदेश के निर्माण का विचार मिलता है।
- **स्थिति** : स्थिति से आशय व्यक्ति की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति है जो उसके मानसिक वातावरण को बनाती है। यह स्थिति उसके पिछले अनुभवों और शिक्षाओं से बनी है। इसी स्थिति के अनुसार ही वह संदेश को समझता है और उस पर प्रतिक्रिया भी करता है।
- **संदेश की व्याख्या या कोडिंग** : संदेश की व्याख्या संदेश के प्राप्तकर्ता सामाजिक व सांस्कृतिक स्थिति के साथ की जाती है।
- **प्रापक** : वह व्यक्ति जो स्रोत द्वारा भेजे गए संदेश को प्राप्त करता है।
- **प्रतिक्रिया** : संदेश की व्याख्या करने के बाद प्राप्तकर्ता दूसरा संदेश बनाता है और इसे प्रेषक को वापस भेजता है। इसे प्रतिक्रिया के रूप में जाना जाता है।

लॉसवेल मॉडल

हेराल्ड डी. लॉसवेल अमेरिका के प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री थे लेकिन इनकी दिलचस्पी संचार शोध के क्षेत्र में थी। इन्होंने सन् 1948 में संचार का एक शाब्दिक फार्मूला प्रस्तुत किया, जिसे दुनिया का पहला व्यवस्थित प्रारूप कहा जाता है। यह फार्मूला प्रश्न के रूप में था। लॉसवेल के अनुसार, संचार की किसी प्रक्रिया को समझने के लिए सबसे बेहतर तरीका निम्न पांच प्रश्नों के उत्तर को तलाश करना था, यथा–

(i) कौन (who)

(ii) क्या कहा (says what)

(iii) किस माध्यम से (in which channel),

(iv) किससे (To whom) और

(v) किस प्रभाव से (with what effect)।

इन पांच प्रश्नों के उत्तर से जहां संचार प्रक्रिया को आसानी से समझने में सहूलियत मिलती है, वहीं संचार शोध के पांच क्षेत्र भी विकसित होते हैं, जो निम्नांकित हैं–

1. Who	Communicator Analysis (संचारकर्ता विश्लेषण)
2. Says what	Message Analysis (अंतर्वस्तु विश्लेषण)
3. In Which channel	Medium Analysis (माध्यम विश्लेषण)
4. To whom	Audience Analysis (श्रोता विश्लेषण)
5. With what effect	Impact Analysis (प्रभाव विश्लेषण)

हेराल्ड डी. लॉसवेल ने शीत युद्ध के दौरान अमेरिका में प्रचार की प्रकृति, तरीका और प्रचारकों की भूमिका विषय पर अध्ययन किया। इस दौरान उन्होंने पाया कि आम जनता के विचारों, व्यवहारों व क्रिया–कलापों को परिवर्तित या प्रभावित करने में संचार माध्यम की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसी आधार पर लॉसवेल ने अरस्तू के संचार प्रारूप के दोषों को दूर कर अपना शाब्दिक संचार फार्मूला प्रस्तुत किया, जिसमें अवसर के स्थान पर संचार माध्यम का उल्लेख किया। लॉसवेल ने अपने संचार प्रारूप का निर्माण बहुवादी समाज को केंद्र में रखकर किया, जहां भारी संख्या में संचार माध्यम और विविध प्रकार के श्रोता मौजूद थे। हेराल्ड डी. लॉसवेल ने अपने संचार प्रारूप में फीडबैक को प्रभाव के रूप में बताया है तथा संचार प्रक्रिया के सभी तत्त्वों को सम्मलित किया है।

लॉसवेल फार्मूले की सीमाएं : स्कूल ऑफ सोशियोलॉजी, शिकागो के सदस्य रह चुके हेराल्ड डी.लॉसवेल के फार्मूले को संचार प्रक्रिया के अध्ययन की दृष्टि से सर्वाधिक लोकप्रियता मिली है। इसके बावजूद संचार विशेषज्ञों ने इसे निम्नलिखित सीमा तक ही प्रभावी बताया है–

(i) लॉसवेल का फार्मूला एक रेखीय संचार प्रक्रिया पर आधारित है, जिसके कारण सीधी रेखा में कार्य करता है।

(ii) इसमें फीडबैक को स्पष्ट रूप से दर्शाया नहीं गया है।

(iii) संचार की परिस्थिति का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया है।

(iv) संचार को जिन पांच भागों में विभाजित किया गया है, वे सभी आपस में अंतःसंबंधित हैं।

(v) संचार के दौरान उत्पन्न होने वाले व्यवधान को नजरअंदाज किया गया है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. संचार के जिस मॉडल में संचारक और प्रापक की भूमिका समान होती है, वह कौन सा मॉडल कहलाता है?

(क) एक तरफा संचार मॉडल (ख) दो तरफा संचार मॉडल

(ग) अरस्तू का मॉडल (घ) शैनन–वीवर मॉडल

4. मर्फी मॉडल के अनुसार संप्रेषण प्रक्रिया के कितने मुख्य तत्त्व होते हैं?

(क) दो (ख) चार

(ग) छह (घ) आठ

5.4 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ख)
2. (ग)
3. (ख)
4. (ग)

5.5 सारांश

जनसंचार का अर्थ संचार शब्द संस्कृत की 'चर्' धातु से निकला है, जिसका अर्थ चलना या संचरण करना है। अंग्रेजी में इसके लिए कम्युनिकेशन शब्द चलता है। संचार के साथ 'जन' शब्द जुड़ने से 'जनसंचार' शब्द बनता है।

'यदि 'जन' शब्द को संचार का विशेषण माने तो इसका अर्थ होगा, ''बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करना या सम्मिलित करना। अर्थात् जब संचार की प्रक्रिया या संदेशों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया बड़े पैमाने पर होती है तो वह जनसंचार कहलाता है।

संचार को हिन्दी में कम्युनिकेशन (Communication) कहा जाता है जो लैटिन भाषा के कम्युनिस (Communis) से बना है और इसका अर्थ होता है आपस में बाँटना या देना. इसका एक और अर्थ होता है to transmit यानी एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजना. जब दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से विचारों या भावनाओं का आदान–प्रदान करते हैं तो उसे संचार कहते हैं

जनसंचार शब्द का प्रयोग 1930 ई. के दशक के अंतिम दौर में प्रारंभ हुआ। किसी यंत्र या जनमाध्यम से जरिये जब संदेश को एक बहुत बड़े मिश्रित जनसमूह तक भेजा जाए, तो वह जनसंचार है। जैसे, रेडियो टीवी, अखबार, पुस्तक आदि।

डेनिस मैक्वेल के अनुसार, आधुनिक समाज में जनमाध्यमों का महत्व बढ़ता जा रहा है जिसके प्रमुख कारण हैं, शक्ति संसाधन, मंच, स्पष्टता एवं प्रतिविम्ब, प्रसिद्धि, व्यवस्था–निर्माण और मनोरंजन।

टिप्पणी

संचार के दो रूप हैं। पहला है मौखिक संचार और दूसरा है गैर–मौखिक संचार। मौखिक संचार को दो रूपों में विभाजित किया जा सकता है, मौखिक और लिखित। संचार के मौखिक रूप में सबसे बुनियादी बोला गया शब्द है। यह तेज और सटीक भी है और चल रहे संवाद के माध्यम से संदेशों को स्पष्ट किया जा सकता है। संचार के लिखित रूप में पत्र, ज्ञापन, ई–मेल, त्वरित सन्देश, ब्लॉग आदि हैं। दोनों तरह के संचार में यह आवश्यक है कि संचारकर्ता जिस संकेत में जिस प्रकार के अर्थ की कोडिंग करे, प्राप्तकर्ता द्वारा भी उसी अर्थ में उसकी डिकोडिंग करे। भिन्न–भिन्न संस्कृतियों में एक ही संकेत के अलग प्रकार होते हैं।

संचार में शामिल लोगों की संख्या के आधार पर संचार का स्वरूप निर्भर करता है। कोई व्यक्ति किन्हीं दो एक–दो लोगों के साथ परस्पर संचार के दौरान अन्य किस्म का व्यवहार करता है। संचार की प्रक्रिया में शामिल लोगों, यानी संख्यात्मक लिहाज से संचार के चार प्रकार हैं, अंतरा–वैयक्तिक, अंतर–वैयक्तिक, समूह–संचार और जनसंचार आदि।

जनसंचार सामाजिक सन्दर्भों से जुड़ा है। जनसंचार यदि समाज के विकास से जुड़ा है तो यह समाज के विकास को भी प्रभावित करता है। जनसंचार ने हमारे जीवन के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पक्षों को प्रभावित किया है। जनसंचार ने सूचना के अधिकार का विस्तार किया है, जिससे लोगों में राजनीतिक जागरूकता आई है।

हमारे दैनन्दिन जीवन में जनसंचार माध्यमों ने इतने सशक्त ढंग से प्रवेश कर लिया है कि अब उनके बिना जीवन की कल्पना सम्भव नहीं है। प्रातःकाल से रात्रि तक अखबार, फोन, मोबाइल, कम्प्यूटर, इन्टरनेट आदि हमारी पहुंच के दायरे में रहते हैं। एक मोबाइल से अब हमारा काम नहीं चलता, दो सिम वाले, मल्टी सिम वाले फोन आसानी से बाजार में उपलब्ध हैं, ये माध्यम हम तक सूचना पहुंचाते हैं, हमें ज्ञान–विज्ञान के विविध रूपों, क्षेत्रों से परिचित कराते हैं। हमारी अभिरुचियों, प्रस्तुतियों, तरीकों, शैलियों को भी जनसंचार ने प्रभावित किया है।

संचार की प्रक्रिया का अध्ययन एक विज्ञान है। यह प्रक्रिया जटिल है। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न तरीकों से इस प्रक्रिया का वर्णन किया है। संचार की प्रक्रिया को बताने वाला सैद्धांतिक प्रारूप मॉडल कहलाता है। इन मॉडलों से हमें संचार की गतिशील और सक्रिय प्रक्रिया समझने में आसानी होती है। ये संचार के सिद्धांत और इसके तत्वों के बारे में भी बताते हैं। संचार मॉडल से हमें पता चलता है कि संचार में किन–किन तत्वों की क्या भूमिका है और ये एक–दूसरे को कैसे प्रभावित करते हैं?

शैनन और वीवर ने संचार के गणितीय प्रारूप का प्रतिपादन संचार प्रक्रिया के दौरान संचार मार्ग में आने वाले सूचना संकेतों में से उन संकेतों को अलग करने के लिए किया, जिसका उद्देश्य कूटबद्ध संकेतों को कम से कम अशुद्धियों के साथ प्रापक तक पहुंचाना था। शैनन और वीवर ने संदेश सम्प्रेषण के दौरान व्यवधान उत्पन्न करने वाले शोर को दो प्रकारों में विभाजित किया है– संचार मार्ग शोर और शब्दार्थ शोर।

वेस्टली और मैकलीन के संचार का मॉडल C:1 वेस्टली और मैल्कम एस मैकलीन द्वारा प्रस्तावित किया गया है। वेस्टली ने विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में एक

शिक्षक के रूप में कार्य किया, मैल्कम पत्रकारिता स्कूल विश्वविद्यालय के निदेशक और मिनेसोटा विश्वविद्यालय में यूनिवर्सिटी कॉलेज के सह–संस्थापक थे। यह सिद्धांत दो संदर्भों में काम कर सकता है, जो पारस्परिक संचार और जन संचार हैं। यह मॉडल परिवेश से प्रतिक्रिया और संचार की प्रक्रिया के बीच एक मजबूत संबंध पर विचार करता है। प्रत्येक रिसीवर अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति के अनुरूप प्राप्त संदेश का जवाब देता है।

5.6 मुख्य शब्दावली

- **जरिये** – माध्यम से, द्वारा
- **प्रापक** – प्राप्त करने वाला
- **स्रोत** – साधन
- **पूर्वाग्रह** – पहले से निश्चित किया हुआ मत
- **विकृति** – बुराई
- **श्रोता** – सुनने वाला
- **तीक्ष्ण** – तीखा
- **प्रतिपुष्टि** – संदेश प्राप्तकर्ता द्वारा संदेश के संबंध में की गई अभिव्यक्ति
- **जटिल** – कठिन
- **नगण्य** – बहुत थोड़ा, जिसकी गणना न हो सके

5.7 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. जनसंचार से आप क्या समझते हैं?
2. संचार प्रक्रिया के तत्व कौन–कौन से हैं?
3. जनसंचार के मुख्य घटक कौन–कौन हैं? उल्लेख कीजिए।
4. संचार प्रक्रिया के मुख्य चरण कितने हैं? स्पष्ट कीजिए।
5. अंतरा–वैयक्तिक संचार क्या है? परिभाषित कीजिए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. जनसंचार की प्रक्रिया की अवधारणा एवं विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।
2. संचार के चरणों का विवेचन कीजिए।
3. संचार का क्या महत्व है? विस्तार से समझाइए।
4. जनसंचार के मूल कार्य कौन–कौन से हैं? उल्लेख कीजिए।
5. अरस्तू के संचार प्रारूप की व्याख्या कीजिए।
6. शैनन वीवर एवं लासवेल मॉडल का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।

टिप्पणी

5.8 सहायक पाठ्य सामग्री

1. सिंह, अरुण कुमार एवं सिंह, आशीष कुमार (2000), व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
2. सुलेमान, डॉ. मुहम्मद, (2005), उच्चतर समाज मनोविज्ञान, नई दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास।
3. बैरन, आर, ए., एवं ब्रेन्स्कोम्ब, एन. आर. (2016). सोशल साइकोलॉजी, बोस्टनः पियर्सन/अलीन एवं बेकन
4. कसिन, एस.,फैन, एस., एवं मार्कस, एच. आर (2017). सोशल साइकोलॉजी, सेनगेज लर्निंग
5. एस. आर. जयसवाल : एजुकेशनल साइकोलॉजी (एलायड पब्लिशर्स–हिंदी वर्जन)।
6. एस. एस. माथुर : एजुकेशनल साइकोलॉजी (विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–हिंदी वर्जन)।
7. शिक्षा मनोविज्ञान : पी.डी. पाठक, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
8. शिक्षा मनोविज्ञान : अरुण कुमार सिंह, (भारती भवन)।
9. एस.पी. गुप्ता,उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।